"SUN SHRINES IN NORTH INDIA : INTERPRETATION OF MYTHS AND SYMBOLISMS"

(उत्तर भारतीय सौर मन्दिर मिथकों और प्रतीकों का अनुशीलन)

इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी0 फिल् उपाधि
हेतु प्रस्तुत शोध प्रबन्ध

प्रस्तुतकर्त्ता

महेन्द्र कुमार उपाध्याय

निर्देशक

डॉ॰ देवी प्रसाद दुबे

प्रवक्ता, प्राचीन इतिहास विभाग

इ०वि०वि०

प्राचीन इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

2000

Department of Ancient History,
Culture and Archaeology,
University of Allahabad
Allahabad-211002

Date 24.11.2000

CERTIFICATE

This is to certify that **Sri Mahendra Kumār Upādhyāy** has worked under my supervision for the full prescribed period of the D.Phil. ordinance and has completed his research. His thesis embodies the results of his own investigation, conducted during the period he worked as a Ph.D. research scholar.

Supervisor

(Dr. Devī Prasād Dubey)

Deptt. of Anc Hist
Culture & Archaeology
A U

प्राक्कथन

भारतीय जीवन दर्शन मे धर्म का विशिष्ट महत्व रहा है। धर्म के स्वरूप को समझे बिना भारतीय सस्कृति के स्वरूप और उसके दृष्टिकोणो को समझना असभव ही है। महाभारत मे भी समस्त लोक को धारण करने वाली शक्ति को धर्म की सज्ञा उचित ही दी गयी है, यथा–

नमो धर्माय महते धर्मो धारयति प्रजा ।

यत् स्यात् धारण सयुक्तम् स धर्म इत्युदाहृत ।।

(उद्योग पर्व, 138 8)

भारत प्राचीनकाल से अनेक धार्मिक सम्प्रदायो एव मतो का क्रीडास्थल रहा है। विभिन्न धर्मो मे सौर धर्म का प्राचीनकाल से ही एक विशिष्ट महत्व रहा है। अनेक पश्चिमी देशो के समान भारत मे भी सूर्यपूजा का प्रारम्भ नवपाषाण काल से प्रतीत होता है। तब से प्रारम्भ होकर विभिन्न परिवर्तनो एव प्रभावो के साथ सूर्य पूजा सामान्य जनमानस मे निरन्तर विद्यमान है। आकाश मे प्रतिदिन दृश्यमान होने के कारण सूर्यदेवता के प्रति गूढ रहस्यवाद न पनप सका। एकात्मिक पूजा के विकासादि कारणो से सौरधर्म लुप्तप्राय सा हो गया है। अधुना सूर्य मन्दिर एव सूर्य मूर्तियो का निर्माण प्राय नही होता। सौर प्रतीक एव व्रतोत्सव ही लोकप्रिय पक्ष है जिनके माध्यम से सौरधर्म आज भी जीवित है।

मार्क्सवादी इतिहासकारो की भौतिकवादी विचारधारा भारतीय इतिहास के सामाजिक–आर्थिक जीवन को नयी दृष्टि से देखने मे समर्थ हो सकी है, परन्तु भारतीय सस्कृति की अतरात्मा को नही छू सकी है। भारतीय सस्कृति को समझने के लिए आवश्यक है कि हम भारतीय धर्म के मूलभूत आदर्शो को समझे। धर्म के मुख्यतया तीन पक्ष होते है– मिथक शास्त्र, दर्शन एव अनुष्ठान। इन तीनो का समग्र एव समवेत अध्ययन धर्म के वास्तविक स्वरूप को आलोकित कर सकता है। भौतिकवादियो ने धार्मिक अनुष्ठानो और मिथक शास्त्र को व्यर्थ

भले ही बताया हो किन्तु सच्चाई यह है कि धर्म का स्वरूप अनुष्ठानो के अध्ययन के अभाव मे अपूर्ण है। प्रतीक, मन्दिर–मूर्तियॉ, मिथक एव व्रतोत्सव धार्मिक अनुष्ठान के अभिन्न अग है, जिनके माध्यम से धर्म के अन्त स्थल तक पहुॅचा जा सकता है। इसलिए इनका अध्ययन अपेक्षित है।

सौर मन्दिरो, प्रतीको एव मिथको का गहन अध्ययन नगण्य–सा है। वी सी श्रीवास्तव की सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, एल पी पाण्डेय की सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, एस एन राय के पौराणिक धर्म एव समाज, वी सी श्रीवास्तव के रिलीजन इन दी पुराणिक सन कल्ट, एव चन्द्रदेव पाण्डेय के साम्ब पुराण का सास्कृतिक अध्ययन मे एतद्विषयक प्रयास किया गया है, परतु सौर मन्दिर, प्रतीक एव मिथक पर स्वतन्त्र रूप से विस्तृत कार्य का अभाव है। जिसकी पूर्ति का विनम्र प्रयास उत्तर भारत के सदर्भ मे इस शोध प्रबन्ध मे किया गया है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को आठ अध्यायो मे विभाजित किया गया है। प्रथम अध्याय भूमिका है जिसमें सूर्यपूजा के प्रारभ एव विकास के क्रम को प्रागैतिहासिक काल से लेकर बारहवीं शती ई0 तक रेखाकित किया गया है। द्वितीय अध्याय मे सौर प्रतीको के विषय मे विचार किया गया है, जिसके अन्तर्गत साकेतिक, पशु–पक्षी, वनस्पति प्रतीक तथा सिक्को पर प्राप्त प्रतीको को सम्मिलित किया गया है। तृतीय अध्याय मे उत्तर भारत के प्रमुख सौर मन्दिरो का अध्ययन किया गया है। सौरमिथको का अध्ययन चतुर्थ अध्याय मे है। इसके अन्तर्गत सज्ञा–सूर्य की कथा, साम्ब की कुष्ठ रोग से ग्रस्तता और उसके निदान हेतु सूर्य मन्दिर निर्माण एव सूर्योपासना के लिए मग पुरोहित का पर्दापण, राहु द्वारा सूर्य–चन्द्र को ग्रसना आदि का विवेचन किया गया है। पाँचवें अध्याय में सूर्य मूर्ति–निर्माण परम्परा तथा उनकी मुद्राओं का निरूपण है। आदित्य से द्वादशादित्य श्रृखला को साररूप में रेखाकित करते हुए द्वादशादित्य परम्परा का वर्णन छठे अध्याय में है। सौरव्रतोत्सवो का अध्ययन सातवें अध्याय मे किया गया है। अन्तिम अध्याय में शोध का साराश प्रस्तुत है।

इस शोध प्रबन्ध के प्रणयन मे अविस्मरणीय एव स्तुत्य सहयोग प्रदान करने वाले भद्रजनो के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन मेरा परम कर्त्तव्य है। सर्वप्रथम मै शोध प्रबन्ध की पूर्णता के लिए पूज्य चरण गुरूवर्य **डॉ देवी प्रसाद दुबे** के उपकारो के प्रति आभार ज्ञापन मे शब्द–दारिद्रय का अनुभव करता हूँ, जिनके योग्य निर्देशन मे मैने शोध कार्य प्रारभ किया। उनका आशीर्वाद ही एक मात्र सम्बल था जिससे यह कार्य पूर्ण हो सका। उन्होने जिस उत्तरदायित्व, रूचि और स्नेह के समन्वय के साथ शोध प्रबन्ध को व्यवस्थित रूप दिया, उसका प्रतिपादन मै आजन्म नही कर सकता। मै उनका अतिशय ऋणी हूँ। सम्प्रति मै जो कुछ भी हूँ वह पूज्य गुरूजी का ही प्रसाद है। पूजनीय **डॉ राजपति तिवारी** (अवकाश प्राप्त प्राचार्य, राजाबलवन्त सिह महाविद्यालय, आगरा) का मै अत्यन्त आभारी हूँ, जिन्होने स्नेहपूर्वक समय–समय पर मुझे प्रेरणा दी और अनेक सुझाव दिये। इस शोध प्रबन्ध के प्रणयन मे मेरे पूज्य पिताजी **डॉ रामप्यारे उपाध्याय** (बी एम एस) का अमोघ योगदान रहा है, उनके प्रति कुछ भी व्यक्त करना औपचारिकता मात्र होगी। यह शोध प्रबन्ध उन्ही की सतत् प्रेरणा और आशीष् से मै पूर्ण कर सका हूँ।

विभागाध्यक्ष **प्रो विद्याधर मिश्र** का मै आभारी हूँ, जिनकी छत्र–छाया मे मैने यह कार्य प्रारम्भ किया। अपने गुरूजनो **प्रो आर के द्विवेदी, डॉ जय नरायण पाण्डेय, डॉ आर पी त्रिपाठी, डॉ हरिनारायण दुबे** तथा **डॉ चन्द्रदेव पाण्डेय** का भी मै हृदय से आभार प्रकट करता हूँ जिनके व्यक्तित्व और कृतित्व का मेरे ऊपर सदैव प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभाव रहा है। **प्रो वी सी श्रीवास्तव, प्रो दीनबन्धु पाण्डेय, डॉ राना पी वी सिह** काशी हिन्दू वि वि का मै अनुग्रहीत हूँ जिनके विद्वतापूर्ण सुझाव एव स्नेहिल मार्गदर्शन मुझे प्राप्त होते रहे है।

पुस्तको के सम्बन्ध मे सहायता के लिए भारत कला भवन पुस्तकालय, का हि वि वि , गायकवाड केन्द्रीय पुस्तकालय का हि वि वि , इलाहाबाद का प्रधान पुस्तकालय तथा हिन्दी साहित्य सम्मेलन, सेन्ट्रल पब्लिक लाइब्रेरी, गगानाथ झॉ केन्द्रीय सस्कृत विद्यापीठ के पुस्तकालयो एव कर्मचारियो का मै आभारी हूँ।

उन लेखको एव विद्वानो का ऋणी हूँ, जिनकी कृतियों की सहायता से यह कार्य सम्पन्न हो सका है।

''गोविन्द'' CISHMET (COSHMIC) COMPUTER CENTRE, PAHARIA, VARANASI मेरे हार्दिक धन्यवाद के पात्र है जिन्होने अतिपरिश्रम एव उत्साह से शोध प्रबन्ध के टकण को पूर्ण किया है।

अन्ततः, मै इस बात को स्वीकार करता हूँ कि मानव त्रुटियो से अछूता नहीं है। इसमे जो भी त्रुटियाँ रह गयी हो, उनका एकमात्र उत्तरदायित्व मुझ पर ही है। विद्वज्जनो की सेवा मे यह शोध-प्रबन्ध समर्पित कर उनकी सहृदयता की अपेक्षा रखता हूँ।

इलाहाबाद **विनम्र**

M.K. Upadhyay

दिनांक 24.11.2000. **(महेन्द्र कुमार उपाध्याय)**

विषय-सूची

शब्द–संक्षेप

ए०एस०एस०	आनन्दाश्रम सस्कृत सीरीज
ए०आई०ओ०सी०	आल इण्डिया ओरियन्टल कान्फ्रेस
ए०यू०एस०	इलाहाबाद यूनीवर्सिटी सीरीज
का०हि०वि०वि०	काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
बी०आई०	ब्बिलोथिक इण्डिका कलकत्ता
बी एच०यू०	बनारस हिन्दू यूनीवर्सिटी, बनारस
जी०ओ०एस०	गायकवाड ओरियन्टल सीरीज, बडौदा
एच०ओ०एस०	हरवर्ड ओरियन्टल सीरीज
आई०ए०	इण्डियन एन्टीक्यूरी
जे०आर०ए०एस०	जर्नल आफ रायल एशियाटिक सोसायटी
जे०यू०पी०एस०एस०	जर्नल आफ यू० पी० हिस्टोरिकल सोसायटी
एम०ए०एस०आई०	मेमवार्स आफ आर्केलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया
एस०बी०ई०	दी सेक्रेड बुक्स आफ दी ईस्ट सीरीज, आक्सफोर्ड

अध्याय – एक

सूर्य पूजा का प्रारम्भ एवं विकास

अध्याय–प्रथम
सूर्यपूजा का प्रारम्भ एवं विकास

प्रत्येक युग मे सूर्य का महत्व स्वीकार किया गया है। मानव इतिहास के बहुत प्रारभ से ही सम्पूर्ण विश्व मे मानव का ध्यान सूर्य ने आकृष्ट किया था। प्राचीनकाल मे प्रकृति से सम्बन्धित देवो मे वह एक प्रतिष्ठित देव थे। रात दिन के निर्माता के रूप मे सभी को सूर्य प्रत्यक्ष दिखलाई पडता है। सूर्य, प्रकाश, गर्मी, जीवन दाता, खाद्य पदार्थो के उत्पादक के रूप मे प्रत्यक्ष है। ये ही मूल तथ्य है, जिनके कारण सूर्य ने लोगो का ध्यान आकर्षित किया होगा। वह सभवत इसका आभार प्रकट करने, या भय, या दोनो ही भावनाओ का मिश्रित प्रभाव हो।

सौर धर्म की प्रमुखता का आभास इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि सूर्यतत्व हिन्दू धर्म मे भी प्रवेश कर गये और सूर्य को प्रारभिक मध्ययुगीन भारत मे "पचायतन पूजा" मे पॉच देवताओ मे गिना गया। इसकी आगे की उन्नति हिन्दू युग की समाप्ति के साथ रूकी नही। दूसरी तरफ इसके अनुयायी मध्य युग तथा आधुनिक भारत मे भी प्रचुरता मे थे।[1] आज भी सूर्य पूजा हिन्दुओ की दिनचर्या मे सम्मिलित है। यहॉ तक कि सूर्य देवता की हर पथो आदि मे पूजा की जाती है। इस प्रकार सूर्य पूजा भारत मे उतनी ही पुरानी है, जितना भारत का इतिहास। भारतीय सस्कृति की तरह इसमे सतत अनवरतता है, जो कि भारत के बहुत से धर्मो का आदर्श है।

सूर्यपूजा की उत्पत्ति अनिश्चितता से घिरी हुयी है। पहले यह विश्वास किया जाता था कि

---

1 प्रबन्ध चिन्तामणि पृष्ठ 82, एक जैन के द्वारा अकबर को सूर्य पूजा की शिक्षा मिली थी।
शर्मा, दशरथ, अर्ली चौहान डायनेस्टीज, पृष्ठ 233
विल्सन, एच एच , रिलीजियस सेक्टस आफ दी हिन्दूज, पृष्ठ 184

इसका प्रारभ ऋग्वैदिक काल मे हुआ लेकिन प्रागैतिहासिक पुरातत्व के क्षेत्र मे की गयी हाल की खोजो ने इसके उद्भव के सदर्भ मे नवीन ज्ञान को उजागर कर दिया है। जिसके आधार पर कहा जाता है कि सूर्य ने पूजनीय वस्तु के रूप मे नवपाषाण युग मे ही मानव का ध्यान आकर्षित किया जैसा कि यूरोप[1] के सदर्भ मे भी हुआ। आदिम चित्रो और नवपाषाणिक अभिरेखन मे चिपटी वृत्ताकार तश्तरी, बिन्दु, तारे और स्वस्तिक आदि सौर प्रतीको के चित्रण प्राप्त हुए है। सूर्य की पूजा उसके प्रकाश, गर्मी, उर्वरशक्ति के स्रोत के स्वाभाविक सिद्धात पर आधारित थी।[2]

प्रागैतिहासिक शैल गुहाओ मे जो चित्रण प्राप्त होते है, उनकी तिथि के सदर्भ मे बडा मतभेद है।[3] पर इतना तो स्पष्ट है कि इन चित्रो के निर्माण मे अति प्राचीन मस्तिष्क काम कर रहा था। सात किरणो सहित उगते सूर्य का एक प्रत्यक्ष प्रस्तुतीकरण रायगढ[4] से मिला है। यही से एक और चित्रण मिला है जिसमे सूर्य आधा उगा[5] है। चित्र वाली इस प्रकार की प्रस्तुतिओ

---

1 मार्जिनर, जे , दी गाड्स आफ प्री–हिस्टोरिक मैन, पृष्ठ 197–200

2 मेहता, पी डी , अर्ली इडियन रिलीजियस थाट, पृष्ठ 18, सूर, ए के प्री–आर्यन एलीमेन्ट्स इन इण्डियन कल्चर , कलकत्ता रिवीव, पृष्ठ 293–303

3 जारडन, डी एच , दी प्री–हिस्टोरिक बैकग्राउण्ड आफ दी इडियन कल्चर , पृष्ठ 98–117, उ प्र के मिर्जापुर, सोनभद्र जिलो मे स्थित प्रागैतिहासिक शैल गुहाओ मे प्राप्त चित्रण नवपाषाण काल से सम्बन्धित किया जाता है। यदि इस विचार से सहमत हुआ जाये तो सूर्य पूजा की प्राचीनता कम से कम 4000 B C (इससे अधिक प्राचीनता की सभावना के साथ) पहुँच जाती है।

4 गुप्ता, जे प्रागैतिहासिक भारतीय चित्रकला, फलक XII.

5 वही , पृ० 444.

के दो प्रकार है – प्रथम प्रकार मे प्रकाश डालती हुयी किरणो से युक्त घेरा है।[1] दूसरे प्रकार मे किरणो से युक्त घेरा के ऊपर एक और वृत्त है।[2]

सूर्य के इन प्रत्यक्ष प्रस्तुतियो के अतिरिक्त पाषाण की चित्रकला मे कुछ अप्रत्यक्ष चित्रण भी भारत मे मिलते है। इनमे बेनियाबेरी गुफा से मिलने वाला पूजनीय वस्तु के रूप मे प्रयुक्त स्वस्तिक[3] है, जो सूर्य की गति से सम्बन्धित किया जाता है। स्वस्तिक को सूर्य की उत्पादक शक्ति[4] का प्रतीक भी माना जाता है। कबरा पहाड से पहिये जैसा एक डिजायन मिला है जिसमे 36 छडे है।[5] यह चित्रण सिन्धु सभ्यता[6] मे भी मिलता है। सभवत यह सूर्य की गति का प्रतीकात्मक प्रस्तुतीकरण है।[7]

आद्यैतिहासिक काल के प्राप्त विभिन्न वर्तनो, मुहरो, ताबीजो, मनको पर सूर्य का चित्रण है। उन चित्रणो का प्रकार अधिकाशतया रेखा गणितीय प्रकार अधिकाश भारतीय सस्कृतियो मे प्रचलन मे थे। प्राग हडप्पा, हडप्पा, उत्तर हडप्पा मे यह प्रकार वर्तनो आदि मे मिलते है।[8] एक प्रकार जो अधिकाशतया मिलता है वो है बीच मे बिन्दु उसके चारो तरफ घेरा, घेरे से निकलती

---

1 गुप्ता, जे , प्लेट XVII चित्र 1

2 वही0

3 मार्जिनर, जे <u>दी गाड्स आफ प्री–हिस्टोरिक मैन</u> , पृष्ठ 164 चित्र 46

4 पाण्डेय, एल पी <u>सनवर्शिप इन एन्सियेन्ट इण्डिया</u> , पृष्ठ 3

5 मार्जिनर, जे <u>दी गाड्स आफ प्री–हिस्टोरिक मैन</u> , पृष्ठ 164

6 मार्शल, सर जान, <u>मोहनजोदड़ो एण्ड दी इण्डस सिविलाइजेशन</u>, प्लेट LXXXVII , चित्र–3 , प्ले III, चित्र–3

7 श्रीवास्तव, वी सी <u>सनवर्शिप इन एन्सियेन्ट इण्डिया</u> , पृष्ठ 23

8 गुप्ता, जे , प्लेट XVIII चित्र 1

किरणे। यह प्रकार मोहनजोदडो[1], हडप्पा[2], तथा लोथल[3] मे मिला है। यह प्रकार उत्तर हडप्पा मे जारी रहा जिसका प्रमाण सिमेटरी–एच[4] सस्कृति है।

कुछ ऐसे भी चित्रण मिले है जिनमे दो वृत्त है। मोहनजोदडो[5] से भी ऐसा चित्रण मिला है। मोहन जोदडो से एक बहुत विशिष्ट मुहर[6] मिली है जिसमे मण्डल के चारो ओर लपटे है। आश्चर्य नही कि दीवार द्वारा सूर्य प्रतीकात्मक रूप मे दिखाया गया हो।[7] ऋग्वेद मे[8] दीप्तमान सूर्य की किरणो की तुलना जलती आग से की गयी है। किरणो से युक्त मण्डल की डिजायनो के भी विभिन्न प्रकार मिलते है। ये चित्रण प्राक्हडप्पा मे मुन्डीग[9] तथा आमरी[10] मे मिलता है। तिकोनी किरणो के साथ मण्डल का एक अन्य प्रकार प्रागहडप्पा मे क्वेटा[11] भाण्डो मे मिलता है। प्राक्–हडप्पा कालीन कोटदीजी[12] से प्राप्त भाण्ड मे कमल के समान आकृति मिलती है।

---

1 मार्शल, सर जान, मोहनजोदडो एण्ड दी इण्डस सिविलाइजेशन, प्लेट LXXXVIII, चित्र–7

2 व्हीलर, आर ई एम, हडप्पा 1964

3 एलचिन, बी तथा आर, दी वर्थ आफ इण्डियन सिविलाइजेशन, पृष्ठ 19

4 वही पृष्ठ 315 चित्र 29–8, पृष्ठ 148

5 मार्शल, सर जॉन, मोहनजोदडो एण्ड दी इण्डस सिविलाइजेशन, प्लेट XVI 13, 15, 16, XCII - 24

6 वही CXVI - 18

7 श्रीवास्तव, वी सी, सनवर्शिप इन एन्सियेन्ट इण्डिया, पृष्ठ 26

8 ऋग्वेद, I 50 3

9 एलचिन, बी तथा आर, दी वर्थ आफ इण्डियन सिविलाइजेशन, पृष्ठ 108

10 वही पृष्ठ 115

11 पिगट, एस, एन्सियेन्ट इण्डिया भाग III, पृष्ठ 14 चित्र 59

12 एलचिन, बी तथा आर, दी वर्थ आफ इण्डियन सिविलाइजेशन, पृष्ठ 119

बाद के हिन्दू धर्म मे हम देखते है कि कमल सूर्यदेव से सम्बन्धित प्रमुख प्रतीक बन गया। सिन्धु से प्राप्त ऑख का चित्रण भी सभवत सूर्य देव का प्रतीक था।[1] बाद मे ऋग्वेद मे[2] सूर्य को सृष्टि की ऑख कहा गया है। प्रकाश के निर्माता होने के कारण ऑख से सूर्य की अभिन्नता बतायी गयी है।

इस काल के वर्तनो मे पहिये का चित्रण बार–बार मिलता है। तीली युक्त पहिया मोहनजोदडो के[3] वर्तनो, सिन्धु सभ्यता मे पायी गयी मुहरो के लेख मे[4], पिकलीहल[5] से प्राप्त नव पाषाण कालीन वर्तनो मे मिलता है। सभवत यह सूर्य से सम्बन्धित रथ का[6] प्रतीक था। जिसका वर्णन वैदिक तथा पौराणिक[7] साहित्य मे मिलता है। हडप्पा से प्राप्त वर्तनो मे कबूतर या मोर का अकन मिलता है। मोर के सम्बन्ध मे कहा जा सकता है कि यह सूर्य का प्रतीक था, जहॉ कि मृत्यु के बाद आत्मा जाती है।[8]

इस प्रकार भारत मे सूर्य पूजा का प्रारम्भ पूर्व वैदिक काल से काफी पहले खीचा जा सकता है। प्रागैतिहासिक काल के प्रमाण अनार्य जातियो से सूर्य पूजा का प्रारभ जोडते है। सूर्य प्रतीकात्मक रूप से ही पूजा जाता था।[9] सूर्यमण्डल के रूप मे सूर्य का प्रत्यक्ष प्रस्तुतीकरण

---

1 पाण्डेय, एल पी , सनवर्शिप इन एन्सियेन्ट इण्डिया , पृष्ठ 5

2 अग्रवाल, वी एस , ललितकला, न 6 अक्टूबर 1959, "विश्वकर्मा" पृष्ठ 34

3 मार्शल, सर जॉन, मोहनजोदडो एण्ड दी इण्डस सिविलाइजेशन, प्लेट LXXXVII-3

4 वही प्लेट VIII चित्र 114

5 एलचिन, बी तथा आर , पिकहिल एक्सकेवेशन्स , पृष्ठ 74

6 श्रीवास्तव, वी सी सनवर्शिप इन एन्सियेन्ट इण्डिया , पृष्ठ 29

7 ऋग्वेद , VII 63 2 मत्स्य पुराण, CCLXI, 1-7, XCIV-1, सूर्य शतक 67-70

8 पाण्डेय, एल पी , सनवर्शिप इन एन्सियेन्ट इण्डिया , पृष्ठ 6

9 पाण्डेय, एल पी , सनवर्शिप इन एन्सियेन्ट इण्डिया , पृष्ठ 4

सबसे अधिक प्रचलित प्रकार है। इसके अतिरिक्त पहिया, स्वस्तिक, कमल अन्य प्रतीक थे। प्रागैतिहासिक काल मे सूर्य का मानवीकरण नही हुआ था। पाषाण की चित्रकला, पिकलिहल के प्रमाण, यूरोपियन आर्केलाजी के तथ्यो से यह कहा जा सकता है कि यदि और प्राचीन नही तो नवपाषाणकाल तक सूर्य पूजा का प्रारभ माना जा सकता है।

आद्यैतिहासिक युग मे सूर्य पूजा का भौगोलिक विस्तार समस्त उत्तरी भारत मे जान पड़ता है[1] क्योकि इस युग के सूर्य के बहुत से प्रतीको को उत्तर भारत के विभिन्न राज्यो मे ढूढ निकाला गया है। दक्षिण भारत मे भी प्रमाण मिले है। सूर्य पूजा पर विदेशी प्रभाव के प्रश्न का उत्तर निश्चितता के साथ नही दिया जा सकता, क्योकि प्रमाण नगण्य है। सूर्य पूजा सामान्य रूप मे ही थी। पन्थ का रूप नही था। अभी तक किसी सूर्य प्रतिमा या मदिर का प्रमाण सामने नही आया है। साथ ही हडप्पा सस्कृति की अपठनीय लिपि के कारण इस युग की सूर्य पूजा के यथार्थ स्वरूप पर प्रकाश डालना असम्भव है।

वैदिक काल से आकाशगगा मे दिखने वाले सूर्य के विषय मे लिखित जानकारी प्राप्त होती है।[2] पूर्ववैदिक काल की सूर्यपूजा मे सूर्यदेव के दो रूप विकसित हुये। प्राकृतिक स्वरूप का ऋग्वेद मे बारम्बार निरूपण हुआ है।[3] सूर्य पूजा का महत्व उसके प्राकृतिक गुणो के कारण स्वीकार किया गया है। ऋग्वेद मे सूर्य का गौरव प्रकाश के स्रोत, दिन निर्माता[4] के रूप मे माना गया है। इस स्वाभाविक भौतिक रूप के साथ ही सूर्य का अध्यात्मिक नैतिक रूप भी विकसित

---

1 श्रीवास्तव, वी सी , सनवर्शिप इन एन्सियेन्ट इण्डिया , पृष्ठ 354

2 पार्थ, ए , रिलीजन्स आफ इण्डिया, पृष्ठ 256 हापकिन्स, ई डब्ल्यू दी रिलीजन आफ इण्डिया पृ 41

3 मैकडानल, वैदिक माइथालाजी पृष्ठ 2 ओल्डेन वर्ग, डिए–रिलीजन डिस वेद , पृष्ठ 591–94

4 सूर्य का नाम "द्यौस" का अर्थ 'चमकना' है।

होता जान पडता है।[1] प्रकृति मे सूर्य देव एक महान नैतिक एव धार्मिक देवता माने गये है। सूर्य बुरे प्रभाव तथा बीमारियो[2] को हटाने वाले है।

सूर्य की प्रतिभा इतनी बहुमुखी है कि उसके विभिन्न गुणो से अनेक देवताओ का विकास हुआ।[3] सूर्य, मित्र, पूषन्, सवित, अश्विन, आदित्य, वैवश्वत सूर्य के विभिन्न गुणो का प्रतिनिधित्व करते है। सूर्य का बलदायक रूप सवितृ[4] के रूप मे पूजा गया। मित्र सूर्य के सहायक और लाभदायक रूप को प्रकट करता है।[5] सूर्य मुख्य रूप से प्रकाश देने वाले पक्ष से सम्बन्धित है।[6] पूषन का सम्बन्ध सौभाग्य और वृद्धि[7] से है। अश्विन मे सूर्य का रोग नाशक रूप प्रमुख था[8]। सूर्य देवता की इस धारणा ने सूर्य को वेद के रचयिताओ द्वारा विभिन्न

---

1 ऋग्वेद I 1 1 5 1 मे सूर्य को चल–अचल सभी चीजो की आत्मा कहा गया है।

2 मैकडानल, वैदिक माइथालाजी पृष्ठ 52 कीथ, ए बी , दी रिलीजन एड फिलासफी आफ वेद एड उपनिषद्स, पृष्ठ 60

3 पाण्डेय, एल पी , सनवर्शिप इन एन्शियेन्ट इण्डिया , पृष्ठ 10

4 मैकडानल, वैदिक माइथालाजी, पृष्ठ 34 , जर्नल आफ रायल एशियाटिक सोसाइटी आफ ग्रेटब्रिटेन एड आयरलैड , लदन, जिल्द 27, पृष्ठ 951–52, यास्क, निरूक्त 10 31 कहते है कि सवितृ का अर्थ सर्वस्य प्रसाविता है।

5 मैकडानल, ए ए , वैदिक माइथालाजी पृष्ठ 30 विन्टरनित्स्, एन , हिस्ट्री आफ इण्डियन लिट्रेचर , पृष्ठ 76, घाटे, लेक्चर आन दी ऋग्वेद, पृष्ठ 145

6 ऋग्वेद 1 50 5, 4 13 4, 7 63 1, 10 37 4

7 मैकडानल, ए ए , वैदिक माइथालाजी पृष्ठ 37 ऋग्वेद 6 48 15, 6 55 2 3

8 मैकडानल, ए ए , वैदिक माइथालाजी पृष्ठ 52 ऋग्वेद 1 11 6 10, कीथ, ए बी , दी रिलीजन एड फिलासफी आफ वेद एड उपनिषद्स, पृष्ठ 60

प्राकृतिक गुणो मे उपासित करवा दिया। इस युग मे सूर्य के मानवीय और प्राकृतिक गुणो मे काफी प्रतिद्वन्दिता रही। अत मे इस युग मे प्राकृतिक से मानवीय पहलू पर अधिक जोर है। फिर भी प्राकृतिक रूप को एकदम भुलाया नही गया।

सूर्य के देवत्व की विचारधार प्रारम्भिक वैदिक युग मे ही भौतिक सीढी से आगे बढ चुकी थी। सूर्य ब्रहमाण्ड मे स्थित सभी चल और अचल चीजो की आत्मा है।[1] वह ब्रह्माण्ड का सबसे बडा पराभौतिक सिद्धान्त है। उसके व्यक्तित्व के आध्यात्मीकरण की कोशिश वैदिक युग से ही प्रारम्भ हो चुकी थी। पूर्व वैदिक काल मे सूर्य पूजा एक यज्ञ विधान की तरह थी, जिसमे वैदिक मत्रो का उच्चारण होता था और होम किया जाता था।[2] सूर्य को अर्पित अधिकाश स्तुतियो मे या तो सूर्य की प्रार्थना है या प्रशसा। सूर्य को मदिरा और आहुतिया दी जाती थी।[3] आहुति मे स्वच्छ मक्खन[4] अग्नि मे डाला जाता था और मदिरा मे सोमरस प्रयुक्त होता था। पूजा की प्रकृति पथवादी न होकर घरेलू थी। सभी कार्य घर मे ही सम्पन्न होते थे। कई अवसरो पर सूर्य को घर आने की ही प्रार्थना की गई है।[5] सभवत कुछ ऐसे भी वेदज्ञ थे जो सूर्य पूजा से ही सम्बद्ध थे।[6]

सूर्य पूजा करने वालो के कई प्रकार वैदिक काल मे जान पडते है। प्रथम प्रकार मे सूर्य के प्राकृतिक स्वरूप के उपासक है। दूसरे प्रकार मे वे थे जो उसकी पूजा प्रतीक रूप मे करते है।

---

1 ऋग्वेद 1 115

2 विल्सन, एच एच , (अनु) ऋग्वेद जिल्द 1 पृ XXI XXIII

3 ऋग्वेद 3 59 1 44 8

4 ऋग्वेद 2 27 1,1 53 6,10 108,10 37

5 ऋग्वेद 1 183,7 67 10,10 40 3

6 वही0 1 50,1 115,1 164 आदि

तीसरे प्रकार मे वह था जो उसकी पूजा सर्वोच्च पराभौतिक सिद्धात के रूप मे करते थे। पर मूर्ति पूजा या जनता द्वारा मन्दिरो[1] मे सूर्य पूजा का विकास पूर्व वैदिक काल मे नही हो सका था।

उत्तरवैदिक काल मे सूर्य पूजा का पूर्ण आध्यात्मीकरण[2] हुआ। बाद की सहिताओ, ब्राह्मणो और अरण्यको तथा उपनिषदो मे इस युग की सूर्य पूजा के इतिहास की काफी जानकारी मिलती है। प्राकृतिक आधार जो पूर्व वैदिक युग की खास विशेषता थी उस युग मे पीछे छूट गयी। इसका सबसे बडा प्रमाण सूर्य प्रतीको के बढे हुए महत्व से है, जो विभिन्न धार्मिक कृत्यो के समय प्रयोग मे लाये गये। सूर्य को सर्वोच्च सिद्धान्त[3] मानने वाली विचारधारा बलवती होती गयी और उपनिषदो मे सूर्य मे पुरूष की स्थिति इसके पूर्ण विकास की सीमा थी। सूर्य को प्राण आत्मा[4] आदि के रूप मे निरूपित किया गया। इस प्रकार उसके व्यक्तित्व का आध्यात्मीकरण हुआ।

आर्यो के गगा दोआब मे प्रवेश ने सूर्य के नरहिंसक स्वरूप को जन्म दिया[5]। अर्थवेद और ब्राह्मणो मे सूर्य की झुलसाती गर्मी और किरणो के अनेक उल्लेख है।[6] लेकिन दूसरे मधुर पक्ष को भी भुलाया नहीं गया था[7]। सूर्य पूजा विशेष रूप से बीमारियो के इलाज के लिए थी। इसका कुछ परिचय प्रारम्भिक वैदिक युग मे भी मिलता है।[8] सूर्य का इलाजी स्वरूप उत्तरवैदिक काल

1 ऋग्वेद 7 36 1 मे कुछ सकेत मिलता है पर सभवत- वहा मन्दिरो से तात्पर्य नहीं है बल्कि बलि की जगह से।

2 तैत्तरीय सहिता, 2 1 2 1, तैत्तरीय ब्राह्मण 3 5 7 2, 7 1 2

3 बरूआ, बी एम, प्री बुद्धिस्टिक इण्डियन फिलासफी, बृहदारण्यक उपनिषद, 2 3 7, मैत्रेयी उपनिषद, 6.3, छान्दोग्य उपनिषद् 2 1 9 1

4 बेवर, (सम्पा0) शतपथ ब्राह्मण पृष्ठ 6 1 7

5 कीथ, ए बी, दी रिलीजन एण्ड फिलासफी आफ वेद एण्ड उपनिषद, पृष्ठ 22–23

6 शतपथ ब्राह्मण, 1 7 2 1 1, 2 6 3 8, 9 4 2 1 9, पचविश ब्राह्मण, 6 7

7 श्रीवास्तव, वी सी, सनवर्शिप इन एन्शियेन्ट इण्डिया, पृष्ठ 66

8 ऋग्वेद 1 0 37 4, 1 50 12

मे पूर्ण विकसित हुआ।[1] अर्थवेद मे उगते सूर्य की प्रार्थनाए हृदय–विदीण, पीलिया, नेत्ररोग आदि को हटाने के लिए की गयी है।[2] पचविश ब्राह्मण[3] मे कहा गया है कि सूर्य की अनुपस्थिति मे कुष्ठ रोग होता है।

उत्तरवैदिक युग मे सूर्य की उत्पादक शक्ति[4] पर भी जोर दिया गया है। अथर्ववेद और ब्राह्मण ग्रथो मे सभी सूर्यकुल के देवता[5] उत्पादन और पुनर्निमाण से सम्बन्धित बताये गये है।

उत्पादकता का यह बढा हुआ महत्व उत्तरवैदिक काल मे प्रचलित तत्वो के कारण सम्भव हुआ। ऋग्वेद मे यह छिपा जान पडता है।

सूर्य का सामान्य नाम आदित्य के रूप मे भी प्रचलित हुआ, और आदित्यो की सख्या बारह[6] तक पहुच गई। ये बारह आदित्य साल के बारह महीनो के[7] प्रतीक बने। सूर्य देवता का समय के साथ तादात्म्य इस युग की प्रमुख विशेषता है।[8]

ऋग्वेद की अमूर्तप्रथा उत्तरवैदिक काल मे भी चलती रही लेकिन ऋग्वेद मे वर्णित 'बिम्ब' जो कि सूर्य की क्षणिक मूर्ति के रूप मे प्रयुक्त होते थे, अर्द्धमूर्ति प्रथा की ओर इगित करते है।[9]

---

1 शेन्डे, एन जे , फाउन्डेशस आफ अथर्ववेदिक रिलीजन, बुलेटिन आफ दी दकन कालेज रिसर्च इन्स्टीट्यूट, जिल्द 9 पृष्ठ 222–37

2 अथर्ववेद 1 22

3 पचविश ब्राह्मण , 23 16 10

4 अथर्ववेद 7 26 3, तैत्तरीय सहिता, 1 3

5 अथर्ववेद 3 8 4,3 14 2, शतपथ ब्राह्मण 3 1 4 9 14,4 9 1 10

6 शतपथ ब्राह्मण 6 1 2 8, 2 6 3 8,

7 पचविश ब्राह्मण 10 1 10, शतपथ ब्राह्मण , 6 1.2 8, 9 6 3 8, 4 5 7 2, वृहदारण्यक उपनिषद् 3–9 5

8 वृहदारण्यक उपनिषद्, 1–2 7, शतपथ ब्राह्मण 10–2 4 3,2–2 3 9

9 श्रीवास्तव, वी सी , सनवर्शिप इन एन्शियेन्ट इण्डिया , पृष्ठ 176

उत्तरवैदिक युग मे सूर्य पूजन/यजन मे अर्घ्य[1], प्राणायाम[2], मार्जन[3] तथा यौगिक क्रियाओ[4] के प्रचलन मे सूर्य अर्जन के एक नये प्रकार का जन्म हुआ। दिन के विभिन्न समयो मे[5] सूर्य की पूजा का विकास भी इस युग मे हुआ।

सूर्योपासना का प्रचलन इस तथ्य से भी सिद्ध होता है कि बहुत से ब्राह्मणो मे वर्णित बलिओ मे[6] सूर्य और सौर परिवार के विभिन्न देवताओ का उल्लेख अथर्ववेद मे आया है। उत्तर–वैदिककाल मे ऐसे बहुत से प्रमाण मिलते है जिनसे सूर्य की सर्वोच्चता सिद्ध[7] होती है। अथर्ववेद मे रोहित और सूर्य का ब्रह्मा के रूप मे निरूपण इसका प्रमाण[8] है। इसके अलावा ब्राह्मणो, आरण्यको और उपनिषदो मे भी बहुत प्रमाण है।[9] इससे ही सभवत सूर्य की मूर्ति पूजा

---

1 गौतम धर्म सूत्र 5–32

2 गौतम धर्म सूत्र 1 50, बौधायन धर्म सूत्र 4–1 30, वशिष्ठ धर्म सूत्र 25 13

3 बौधायन धर्म सूत्र, 2–4 2

4 मैत्रेयी उपनिषद, 1 2

5 कौषीतकी उपनिषद्, 2–7, तीन समयो मे सूर्य पूजा का उल्लेख छान्दोग्य उपनिषद्, 2–9 8 दिन मे सात बार सूर्य पूजा का उल्लेख करता है।

गोमिल गृह्यसूत्र, 4–6 2, अपरार्क (पृ 49) मे अत्रि द्वारा तीन सन्ध्याओ मे पूजन का उल्लेख है।

6 तैत्तरीय ब्राह्मण 2 4 3 9

7 बरूआ, बी एम, प्री बुद्धिस्ट इण्डियन फिलासफी, पृष्ठ 90, बृहदारण्यक उपनिषद 2 3 1, मैत्रीय उपनिषद् 6–3, छान्दोग्य उपनिषद, 2–19 1

8 बूमफील्ड, एम, दी अथर्ववेद पृष्ठ 89, बरूआ, बी एम, प्री बुद्धिस्ट इण्डियन फिलासफी पृष्ठ 90।

9 वाजसनेयी सहिता0 7–42, तैत्तरीय सहिता i 4 43 शतपथ ब्राह्मण 4 3 4 10, 7–5 2 27, तैत्तरीय ब्राह्मण, 2–8 7 4, ऐतरेय आरण्यक, 2.2 4 7, 3.2, 3 10,

प्रणाली का विकास हुआ।

उपनिषदो मे उल्लिखित भारद्वाज[1], गर्ग[2], कौषीतक[3], अगिरा, तथा ब्रहद्रथ[4] जैसे सन्यासियो और व्यक्तियो को सूर्योपासना से सम्बद्ध माना गया है। इनमे से ज्यादातर जनता का प्रतिनिधित्व करते थे पर राजा ब्रहद्रथ के उदाहरण से जान पडता है कि समाज का उच्चतम वर्ग भी इससे जुडा था। इस प्रकार उत्तरवैदिक काल मे सूर्योपासना मे महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए।

वेदोत्तर काल मे धार्मिक विचारो मे उपनिषदो के अव्यक्त रूप की अपेक्षा व्यक्त रूप की तरह झुकाव जान पडता है।[5] इस युग की सूर्य पूजा की सबसे खास विशेषता यह है कि यह एक पथ के रूप[6] मे उभरकर आया। महाभारत मे वर्णित मुख्य सम्प्रदायो मे सौरसम्प्रदाय की गणना हुई है।[7] इस युग मे सूर्य पूजा करने वालो के एक अलग ही वेद का उदय हुआ जिसमे सूर्य देव को सभी देवो के गुणो से युक्त दर्शाया गया है।[8] रामायण का आदित्य हृदय[9] स्तुति गान इस बात को सिद्ध करती है कि उस युग मे सौर सम्प्रदाय प्रमुख सम्प्रदायो मे से एक था। इसके

---

1 ऐतरेय उपनिषद्, रानाडे, आर डी तथा बेलवेल्वर द्वारा उद्घृत, पृ 298

2 बृहदारण्यक उपनिषद्, 2 1 2, कौषीतक उपनिषद 4 6

3 कौषीतक उपनिषद 2 7

4 मैत्रेयी उपनिषद, 1 2

5 श्रीवास्तव, वी सी सनवर्शिप इन एन्शियेन्ट इण्डिया, पृष्ठ 348

6 कारमरकर, ए पी, रिलीजन एण्ड फिलासफी आफ दी एपिक्स, कल्वरल हैरिटेज आफ इण्डिया, जिल्द–2, पृ 80 हापकिन्स, ग्रेट एपिक्स आफ इण्डिया, पृ 84–85

7 हापकिन्स, ग्रेट एपिक्स आफ इण्डिया, पृ 115

8 महाभारत, 3 3 60, मे इन्द्र, विष्णु, रूद्र, ब्रह्मा जैसे देवो से अभिन्न बताया गया है।

9 रामायण, 6 105, 6 105 22

अतिरिक्त सौर सम्प्रदाय का आस्तित्व प्रारम्भिक बौद्ध, जैन साहित्य[1] पाणिनी[2] तथा पतजलि[3] के उल्लेखो से भी सिद्ध होता है।

ईसा काल मे सौर सम्प्रदाय के विकास के लिए तीन कारक उत्तरदायी जान पडते है। प्रथम, प्राचीन काल से चली आ रही अनार्य प्रथा इस युग मे प्रमुखता को प्राप्त हुयी। इस काल मे भक्ति की धारा ने हिन्दू और बौद्ध दोनो धर्मो के ससार को पूर्णतया परिवर्तित कर दिया। भक्ति के आदर्शो ने सौर सम्प्रदाय पर भी प्रभाव डाला। पूजा मे धूप, दीप, नैवेद्य की शुरूआत हुयी।[4] अनार्य जातियो[5] द्वारा सूर्य पूजा का उल्लेख महाभारत मे मिलता है। दूसरे, विष्णु[6] जो कि वैदिक परम्परा के सूर्य देवता थे, इस समय बहुत से बाहरी सम्प्रदायो मे मिश्रित होते प्रतीत होते है, उदाहरण के लिए वासुदेव, कृष्ण, नारायण।[7] इस युग मे नये प्रभावो के कारण विष्णु का सौर रूप काफी पिछड गया जान पडता है। स्वाभाविक रूप से एक पूर्ण रूपेण सूर्य देवता की आवश्यकता महसूस हुयी। तीसरे, इस सम्प्रदाय के प्रभाव का तत्कालीन कारण मग पुजारियो द्वारा सूर्यपूजा का प्रारभ था[8], जो कि हषामनी आक्रमण के समय पूरे देश मे लोकप्रिय हो गयी थी तथा इन्होने मन्दिरो–मूर्तियो की परम्परा को जन्म दिया।

---

1 निद्देश, 1 89, मिलिन्दपह्नो, 4 8 12

2 अष्टाध्यायी, 3 1 114, अग्रवाल, वी एस , इण्डिया एज नोन टू पाणिनी, पृ 358

3 महाभाष्य – 2 2, 2 2 29, पुरी, बी एन , इण्डिया इन दी टाइम आफ पतन्जलि, पृष्ठ 181

4 महाभारत , 3–3 33,

5 महाभारत , 3 3 40,

6 भण्डारकर, आर जी , वैष्णविज्म, शैविज्म, एण्ड अदर माइनर रिलीजियस सिस्टम

7 वही पृष्ठ 3.0–38

8 वही पृष्ठ 153–154

हमारे वर्तमान ज्ञान के सदर्भ मे सौर सम्प्रदाय के जन्म की कोई विशेष तिथि निर्धारित कर पाना सभव नही है। महाकाव्यो[1] पाणिनी, तथा पतजलि के ग्रन्थो से स्पष्ट है कि दूसरी या तीसरी शताब्दी ई0 पूर्व सौर सम्प्रदाय का जन्म हो चुका था। साथ ही प्रारभिक बौद्ध, जैन मूर्तियो और सिक्को से भी यही स्पष्ट होता है।[2] पटना[3], चन्द्रकेतुगढ[4] से मौर्य और शुग काल की सूर्य की मृण्मूर्तियॉ प्राप्त हुयी है। भाजा तथा बोधगया से सूर्य का रिलीफ[5] तथा अवन्ति से प्राप्त सिक्को[6] पर सूर्य का प्रस्तुतीकरण सौर सम्प्रदाय की उत्पत्ति को तीसरी से दूसरी शताब्दी ई पू ठहराता है। कुछ विद्वान[7] इसका समय चौथी–पॉचवीं शती ई पू तक ले जाते है जो महाभारत[8]

---

1 विन्टरनित्स, हिस्ट्री आफ इण्डियन लिटरेचर , जिल्द I पृष्ठ 465, हापकिन्स, ग्रेट एपिक्स आफ इण्डिया , पृ 397 के अनुसार महाभारत का समय दूसरी से तीसरी शताब्दी B C से बाद का नही है तथा रामायण भी मूलरूप से तीसरी–शती B C मे लिखा गया। देखिये – विन्टरनित्स, पृष्ठ 500–517

2 बनर्जी, जे एन , डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी पृष्ठ 203

3 जर्नल्स आफ इण्डियन सोसाइटी, लेटर्स कलकत्ता, जिल्द 3, न 2, पृष्ठ 125

4 दासगुप्ता, पी सी टेराकोटा फ्राम चन्द्रकेतुगढ,, ललितकला, न 6 अक्टूबर 1969, पृष्ठ 46

5 कुमार स्वामी, हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृष्ठ 33, 67

6 श्रीवास्तव, वी सी दी रिलीजियस स्टडी आफ सिम्बल आन एन अवन्ति क्वाइन , सेमिनार आन लोकल क्वाइन्स, मीमोर न 2, वाराणसी 1996

7 साकलिया, एच डी , आर्केलाजी आफ गुजरात पृष्ठ 212

8 विन्टरनित्स, हिस्ट्री आफ इण्डियन लिटरेचर , जिल्द I पृष्ठ 465, हापकिन्स, ग्रेट एपिक्स आफ इण्डिया पृष्ठ 397

की उच्चतम सीमा है। यदि यह मानकर चले कि मगो[1] की पहली लहर हषामनी आक्रमण के समय आयी तो उपर्युक्त तिथि तथ्यपूर्ण है।

सौर सम्प्रदाय सैद्धान्तिक रूप से वैदिक विचारधारा से मेल खाता है। महाभारत[2] मे कहा गया है कि सूर्य के पुजारी वैदिक मत्र बोलने मे दक्ष थे। सूर्य के एक सौ आठ[3] नामो मे अधिकाश नाम वैदिक है।[4] सूर्यवेद पारगत ब्राह्मण का रूप[5] धारण करते थे। महाकाव्यो के सौर सम्प्रदाय पर मग प्रभाव नगण्य[6] सा है। रामायण मे उनका कही उल्लेख नही है। केवल महाभारत मे मग नाम 'मिहिर'[7] मिलता है। लेकिन यह लोकप्रिय धर्म नही जान पडता क्योकि यूनानी लेखको तथा कौटिल्य ने इसका कही भी जिक्र नही किया है। महाकाव्य युग मे सूर्य का मानवीकरण[8] हुआ। महाकाव्यो मे स्थान-स्थान पर मानव रूप मे सूर्य का उल्लेख है। इस युग

---

1 श्रीवास्तव, वी सी , एन्टीक्वीटीज आफ मगाज इन एन्शियेन्ट इडिया, इण्डियन हिस्ट्री काग्रेस 1968, 69, पृष्ठ 64-68, श्रीवास्तव, वी सी , एडवेन्ट आफ दी मगाज और ईरानियन प्रीस्ट इन इण्डिया, सेमिनार आन फारनर्स इन एन्शियेन्ट इण्डिया, कलकत्ता युनिवर्सिटी, 1970 पृष्ठ 73-79

2 महाभारत , 6 82 16

3 पाण्डेय, एल पी , सनवर्शिप इन एन्शियेन्ट इण्डिया, पृष्ठ 57-58 मे 108 नामो का उल्लेख किया है।

4 महाभारत , 3-3 16 28

5 महाभारत , 3-300 9

6 श्रीवास्तव, वी सी , सनवर्शिप इन एन्शियेन्ट इण्डिया, पृष्ठ 182

7 महाभारत , 3-3 61 ,

8 रायचौधरी, पोलिटिकल हिस्ट्री ऑफ एन्शियेन्ट इण्डिया, पृष्ठ 77

मे सूर्य देव, पहनावा, बातचीत तथा कार्यप्रणाली मे मानव की भॉति व्यवहार[1] करते पाये जाते है। महाभारत और रामायण मे कई स्थानो पर सूर्य के ब्राह्मण[2] के रूप मे प्रकट होने के उदाहरण मिलते है। मौर्य और शुग काल के अवशेषो[3] और अवन्ति से[4] प्राप्त सिक्को मे सूर्य का मानव रूप मे चित्रण है। इस विशेषता के कारण सूर्य के एक परिवार का जन्म हुआ क्योकि इस देवता के सहायको[5] का भी उल्लेख मिलता है लेकिन महाकाव्यो मे ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी तक सूर्य की मूर्ति पूजा का प्रमाण नही मिलता है।

वेदोत्तर काल मे ईरान से आये मग पुजारियो का उल्लेख हषामनी आक्रमण के समय मिलता है जो उत्तर पश्चिम भारत मे छा गये थे। यह प्राचीन कथन[6] कि मग भारत मे ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियो मे शक–कुषाण आक्रमणो के समय आये थे, साहित्यिक और पुरातात्विक साक्ष्यो के आलोक मे सही नही माना जा सकता। ऐसा कहा जाता है कि ये मग या ईरानी पुरोहित बहुत सी लहरो के रूप मे भारत मे प्रविष्ट हुए। इनमे मुख्य रूप से तीन की पुष्टि की जाती है। ऐसा जान पडता है कि पहली बार मगो का भारत मे प्रवेश पॉचवी शती

---

1 हापकिन्स, एपिक माइथालाजी पृष्ठ 85

2 महाभारत, 3 300 9, 13 96 20, इनके अतिरिक्त मानवरूप मे प्रकट होने के उदाहरण, महाभारत, 3 138 18–19,3 306 9–10, रामायण 6 105 31 मे मिलता है।

3 मजुमदार, आर सी , एज आफ इम्पीरियल यूनिटी, पृष्ठ 465, जर्नल आफ दी इण्डियन सोसाइटी आफ ओरियन्टल आर्ट, जिल्द 3, न –2, पृष्ठ 12

4 श्रीवास्तव, वी सी , दी रिलीजियस स्टडी आफ ए सिम्बल आन एन अवन्ति क्वाइन, सेमिनार आन लोकल क्वाइन्स, न –2 वाराणसी, 1966 पृष्ठ 133–136

5 महाभारत 3 3 68

6 भण्डारकर, आर डी , वैष्णविज्म, शैविज्म एण्ड अदर माइनर रिलीजियस सिस्टम, पृष्ठ 153

ई0 पू0[1] मे हषामनी आक्रमण के समय हुआ। प्रारभ मे वे भारत के उत्तर पश्चिम भागो तक सीमित रह गये। उनका सौर सम्प्रदाय कुछ शताब्दियो तक भारत मे कोई प्रगति न कर सका। उनका भारतीय सूर्योपासना पर कोई प्रभाव था तो वह कि मिहिर शब्द भारत के सौर कुल मे शामिल हो गया। पचाल, मित्र[2], वाटास्वक[3] तथा कुषाण[4] काल के सिक्को पर मिहिर उत्कीर्ण है। कुषाणकाल की सूर्य मूर्तियो पर ईरानी प्रभाव स्पष्ट है।[5] लेकिन भारतीय सनातन परपरा ने पॉचवी शती ई0 तक मग सौर पद्धति को नही अपनाया था। तीसरी लहर भारत मे सातवी शताब्दी ई0 मे पहुची जिससे ईरानी पुरोहित मग और याजक दो वर्गो मे बॅट गये।[6] पूर्व मध्यकाल मे सूर्यपूजा मे फूल, मालाओ, धूप, दीपो[7] का प्रयोग होने लगा। यौगिक क्रियाये[8] भी काफी महत्व रखती थी। सूर्यपूजा भारतीय समाज के उच्च और निम्न वर्ग तथा विदेशिओ[9]

---

1 श्रीवास्तव, वी सी , एन्टीकवीटीज आफ मगाज इन एन्शियेन्ट इण्डिया, प्रीसीडिग आफ इण्डियन हिस्ट्री काग्रेस, भागलपुर, 1968 (69) पृष्ठ 86–94, एडवेन्ट आफ दी मगाज और ईरानियन प्रीस्ट इन इण्डिया, प्रोसीडिग सेमिनार आन फारनर्स इन एन्सियेन्ट इण्डिया, कलकत्ता युनिवर्सिटी, 1970, पृष्ठ 73–79

2 आई एम सी पृष्ठ 188 न 2

3 एलन, जे , कैटलाग आफ इण्डियन क्वाइन्स इन दी ब्रिटिश म्यूजियम, क्वाइन्स आफ एन्शियेन्ट इण्डिया, लदन, 1936, पृष्ठ 74–75

4 पाण्डेय, एल पी , सनवर्शिप इन एन्शियेन्ट इण्डिया, पृष्ठ 74–75

5 पजाब म्यूजियम कैटलाग, जिल्द I, प्लेट 17 पृष्ठ 63

6 श्रीवास्तव, वी सी , सनवर्शिप इन एन्शियेन्ट इण्डिया, पृ 35

7 महाभारत 3 3 33, 3 3 29, 42

8 हापकिन्स, रिलीजन आफ इण्डिया, पृष्ठ 366

9 जयराज भाय, आर ए , फारेन इन्फ्लुऐन्स इन एन्शियेन्ट इण्डिया, पृष्ठ 151

सभी मे समान रूप से प्रचलित थी। इस पन्थ को राजाश्रय भी मिला जान पडता है। ज्ञात है कि राजा पाण्डु के खेमे मे 1 008 सूर्य पूजक[1] रहते थे। युधिष्ठिर[2] सूर्य के बहुत बडे भक्त थे। रामायण के[3] नायक राम ने रावण को आदित्य हृदय पूजन करके हराया। पाचाल–मैत्रक वशो के राजचिन्हो मे सूर्य अकित है। विदेशिओ[4] मे शक, हिन्द–यवन तथा कुषाण इस धर्म के प्रति श्रद्धावान प्रतीत होते है। कुछ सातवाहन[5] शासक भी सूर्य के पुजारी थे। रामायण मे[6] मन्दाकिनी नदी के किनारे अनेक सूर्योपासक सन्यासिओ का उल्लेख है। महाभारत मे सिद्ध, गन्धर्व, यक्ष, गुह्यक, नाग, असुर, राक्षस आदि को सूर्यभक्त[7] कहा गया है। इस प्रकार सौर सम्प्रदाय का विशाल सामाजिक दायरा था।

मग पुजारियो के प्रभाव से कुषाण–गुप्तकाल मे मूर्तिपूजा का प्रारभ हुआ। परिणामस्वरूप सूर्य–मूर्तियॉ निर्मित होने लगी। प्रारभिक सूर्य मूर्तियो पर यूनानी प्रभाव परिलक्षित होता है। इनमे सूर्य देव चार घोडो[8] द्वारा खीचे जाने वाले रथ पर सवार प्रदर्शित है, जबकि भारतीय

---

1 महाभारत, 7 82 16, 7 58 15

2 वही 3 3 67 1

3 वही 6 105

4 जयराज भाय, आर ए , फारेन इन्फ्लुऐन्स इन एन्शियेन्ट इण्डिया, पृष्ठ 151

5 सरकार, डी सी , सेलेक्ट इन्सिक्रिप्सन्स, पृष्ठ 5

6 रामायण, 2 95 7

7 महाभारत 2 3 40, 3 29

8 अग्रवाल, वी एस , ए कैटलाग आफ दी ब्राह्मनिकल इमेजेज इन मथुरा आर्ट, जर्नल आफ यू0पी0 हिस्टारिकल सोसाइटी, जिल्द XXII पृष्ठ 1 67 वोगेल, मथुरा म्यूजियम कैटलाग, पृष्ठ 104

पद्धति[1] मे मूर्तियो पर रक्ष के साथ उषा और प्रत्यूषा सहायक देवता के रूप मे प्रदर्शित है। विकास के दूसरे चरण मे सूर्य मूर्तियो पर ईरानी प्रभाव – उत्तर की पोशाक, ऊँचे बूट तथा गर्दन मे माला स्पष्ट है।[2] लेकिन धीरे–धीरे गुप्त युग मे सूर्य मूर्तियो का भारतीयकरण हुआ। इसका सबसे बडा प्रमाण मूर्तियो पर कमल[3] का अकन है। कुषाणयुग की मूर्तियाँ दो तरह की आसनस्थ तथा भद्रासन[4] है। इनके अतिरिक्त गुप्तयुग मे एक तीसरे प्रकार – स्थानक मूर्तियो[5] का जन्म हुआ।

गुप्तयुग का सौर सम्प्रदाय बीते युग के विभिन्न रिवाजो का मिश्रण[6] है। प्रारम्भिक पुराणो मे सूर्य के वायुमण्डलीय पहलू पर अधिक पर अधिक जोर है[7], तथा उसे सबसे प्रबल ग्रह दर्शाया[8] गया है। वैदिक युग की प्रतीकात्मक पूजा इस युग मे भी चालू थी। इस युग के अन्त

---

1 दासगुप्ता, पी सी , टेराकोटा फ्राम चन्द्रकेतुगढ़, ललितकला, न 6, पृष्ठ 46 इण्डियन आर्केलाजी प्लेट LXXII-B ईरानी लक्षणो से रहित है। कुमारस्वामी, ए के , हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृष्ठ 32

2 कुमारस्वामी, ए के , हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृष्ठ 66

3 अग्रवाल, वी एस , ए कैटलाग आफ दी ब्राह्मनिकल इमेजेज इन मथुरा आर्ट, जर्नल आफ यू0पी0 हिस्टारिकल सोसाइटी, 1949, जिल्द XXII पृष्ठ 168–170

4 वही , पृष्ठ 167

5 वही , पृष्ठ 169

6 श्रीवास्तव, वी सी , सम एसपेक्ट आफ सनवर्शिप इन दी गुप्त ऐज, युनिवर्सिटी आफ इलाहाबाद स्टडीज, जिल्द–2, (एन एस) न 5 पष्ठृ 369–394

7 मेकडानल ए ए , वैदिक माइथालाजी, पृष्ठ 30साम्बपुराण 29 1–2, मे आया है कि पूर्वकाल मे सूर्य अपने वायुमण्डलीय रूप मे ही पूजा जाता था।

8 विष्णु पुराण – 28

मे मगो को हिन्दू समाज द्वारा मान्यता[1] प्राप्त हुई। सूर्य के दया भाव[2] पर ज्यादा जोर दिया गया। द्वादश आदित्य सूर्य के विभिन्न रूप मान लिये गये। आदित्य[3] सूर्य का लोकप्रिय नाम हो गया तथा मार्तण्ड[4] नाम सूर्य के साथ जोड दिया गया। इस युग की महत्वपूर्ण विशेषता सूर्य पूजा का सर्वोपरि धार्मिक दृष्टिकोण है। सूर्य का वायुमण्डलीय रूप पीछे छूट गया। वह मानव रूप मे परिवार[5] तथा सहायक देवो के साथ उपस्थित हुए। सूर्य की मूर्तियो[6] द्वारा पूजा ने इसे और बल प्रदान किया।

सूर्य की घरेलू पूजा का स्थान विशाल[7] मदिरो मे सार्वजनिक पूजा ने ले लिया। महाराजा सर्वनाथ का खोह ताम्र पत्र, मिहिरकुल का ग्वालियर प्रस्तर लेख, इन्दौर ताम्रपत्र इसके प्रमाण है। इसी युग की समाप्ति के लगभग सौर व्रतो[8] का भी विकास हुआ। इनका सर्वप्रथम उल्लेख

---

1 भण्डारकर, डी आर , फ़ारेन एलीमेन्ट्स इन इण्डियन पापुलेशन, इण्डियन एण्टीक्वेरी, पृष्ठ 18 सूर्य का ईरानियन रूप 'मिहिर' सर्वप्रथम 'निरमण लेघ' (6 वी ई) मे आया है। देखिये, श्रीवास्तव, वी सी भारतीय विद्या – XXVII, पृष्ठ 46

2 मेकनिकोल, इण्डियन थीइज्म पृष्ठ 7 20

3 राय, एस एन , अर्ली पौराणिक एकाउण्ट आन सन एण्ड सोलर कल्ट यूनिवर्सिटी आफ इलाहाबाद स्टडीज पृष्ठ 44

4 वायु पुराण 84,24–29, ब्रह्माण्ड पुराण, 3 59 27–30 मत्स्य पुराण, 2 36

5 विष्णु पुराण 3 2, मार्कण्डेय पुराण LXXVII I-42

6 बनर्जी, जे एन , डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृष्ठ 434

7 गुप्तकालीन अनेक अभिलेख गुप्तकाल मे विभिन्न सूर्य मदिरो का होना प्रमाणित करते है।

श्रीवास्तव, वी सी भारतीय विद्या XXVII (1–4) पृ 41–48

8 हजरा आर सी , पौराणिक रिकार्ड्स आन हिन्दू राइट्स एण्ड कस्टम्स, पृष्ठ 228

मत्स्य पुराण[1] मे हुआ है जिनका समय आर सी हजरा 550–650 ई[2] निर्धारित किया है।

इस युग की खास विशेषता समन्वयीकरण की प्रवृत्ति है। सूर्य, शिव, ब्रह्मा तथा विष्णु सभी को अभेद[3] कहा गया है। यह तथ्य साम्बपुराण[4] के उस विवरण से स्पष्ट हो जाता है जहॉ कहा गया है कि सूर्य की पूजा श्वेत द्वीप मे विष्णु के रूप मे, कुश द्वीप मे महेश्वर के रूप मे, पुष्कर द्वीप मे ब्रह्म के रूप मे, शक द्वीप मे भास्कर के रूप मे होती है। विष्णु तथा अन्य पुराणो मे सूर्य की विष्णु तथा अन्य देवो पर प्रधानता दिखायी गयी है।[5]

कट्टर प्रकृति पन्थी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तीनो ही सौर सम्प्रदाय से सम्बन्धित थे। सिद्ध, किन्नर, गन्धर्व, राक्षस तथा जातुधानो[6] को भी सूर्यपूजक दिखाया गया है। इस प्रकार आर्य और अनार्य दोनो ही इससे सम्बन्धित थे। विदेशी कुषाण, ईरानी, हूण भी सूर्य पूजा से सम्बन्धित थे। इस पथ को राजाश्रय भी प्राप्त था, क्योकि कनिष्क द्वारा मिहिर देवता[7] की पूजा का उल्लेख है। बल्लभी के मैत्रको का भी इस पन्थ की तरफ झुकाव था। हूण शासक मिहिर, तोरमाण[8] भी इससे सम्बन्धित थे। बहुत से व्यापारिक वर्ग सूर्य–मन्दिरो के निर्माण मे काफी अर्थ देते थे।

---

1 मत्स्य पुराण , 75–80

2 हजरा, आर सी , पौराणिक रिकार्ड्स आन हिन्दू राइट्स एण्ड कस्टम्स, पृष्ठ 229

3 मार्कण्डेय पुराण सी 9 69–71 , मत्स्य पुराण, 52–53

4 साम्ब पुराण, अ 26,37,38

5 विष्णु पुराण, 3 2 11

6 मन्दसोर ताम्रपत्र, कुमार गुप्त तथा बन्धुवर्मन, 437–38 तथा 473–74 ई0

7 गार्डनर, पी , ब्रिटिश म्यूजियम कैटलाग आफ कवाइन्स आफ दी ग्रीक एण्ड सीथिक किंग्स आफ इण्डिया, प्ले 6, चित्र 11

8 गुप्ता, पी एल , काइन्स, 16

सौर सम्प्रदाय इस युग मे सम्पूर्ण उत्तरी भारत[1] मे फैल गया क्योकि सूर्य मूर्तियॉ बगाल, उडीसा, बिहार, उत्तर प्रदेश तथ पश्चिमी भारत से मिली है। कुषाण काल मे प्राचीन भारतीय सौर पथ को मागी सूर्य पद्वति ने एक चुनौती दी। गुप्त युग मे मागी पन्थ का भारतीय सौर पूजा पद्धति मे पाचन हुआ। साथ ही इस युग मे मूर्ति पूजा का प्रारभिक विकास हुआ जिसका कि पूर्ण प्रादुर्भाव प्रारभिक मध्य युग मे सम्भव हो सका।

पूर्व मध्य काल सौर सम्प्रदाय की उन्नति का काल था। परवर्ती पुराण और उपपुराण जैसे– भविष्य, स्कन्द, वराह, गरूड़, भविष्योत्तर, साम्ब, कालिका आदि प्रारभिक मध्ययुग के सौर सम्प्रदाय पर प्रकाश डालते है। मयूर, भवभूति, अमरसिह, शकराचार्य, आनन्दगिरि तथा अन्य बहुत से विद्वानो के[2] साहित्यिक ग्रन्थो मे भी सूर्य पूजा के उल्लेख मिलते है। साहित्यिक साक्ष्यो की पुष्टि उत्तर हर्ष युग के मन्दिरो, मूर्तियो और लेखो से होती है।

प्रारभिक मध्ययुग मे मग सम्प्रदाय को कट्टर हिन्दू समाज द्वारा मान्यता मिल गयी प्रतीत होती है।[3] मगो के हिन्दू समाज मे सम्मिश्रण से वासुदेव, कृष्ण, साम्ब आदि की दन्त कथाओ का प्रचलन हुआ। ईरानी प्रभाव को राष्ट्रीय रूप देने के लिए कहानियॉ गढी गयी।[4] फिर भी इस युग की मूर्तियो मे विदेशी प्रभाव स्पष्ट नजर आता है। कुछ कृतियो मे मगो को ब्राह्मणो[5] के

---

1 बनर्जी, जे एन , डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ 432–36

2 भण्डारकर, आर जी , वैष्णविज्म, शैविज्म एण्ड अदर माइनर सेक्ट्स, पृष्ठ 153–54

3 इसका प्रमाण मग प्रभावित सौर धर्म के निरूपण से युक्त साम्बपुराण है। नेपाल से प्राप्त 550 ई की लिपि ब्राह्मणो और मगो को एक ही दर्जा देती है।

4 छत्र–पादुका की भारतीय उत्पत्ति के लिए साम्बपुराण अ 45 मे प्रकरण मिलता है तथा विश्वकर्मा को मूर्ति निर्माण का श्रेय देने के सन्दर्भ मे देखिये– साम्बपुराण, अ 24 – आदि।

5 नेपाल से प्राप्त 550 ई की एक लिपि मे दोनो को एक ही स्थान दिया गया है।

बराबर स्थान दिया गया है। मग प्रभाव इस बात से स्पष्ट है कि बाद के पुराणो मे सूर्य के बारहवे रूप मित्र की विशेष पूजा पर जोर दिया गया। इसके साथ ही सूर्य देवता की पूजा मूर्तियो के रूप मे बढती गयी। इसका प्रमाण इस युग के मन्दिरो से प्राप्त विशाल मूर्तियो की सख्या[1] है। मगो द्वारा बनवाये गये अनेक मन्दिरो (कोणार्क,कालप्रिय) का उल्लेख पुराणो मे मिलता है।

इस युग मे सूर्यपूजा एक विशेष सम्प्रदाय के रूप मे सामने आयी। इसका अपना अलग एक साहित्य था, एक निश्चित आचार सहिता थी, एक अलग पुरोहित वर्ग था।[2] इसे राजकीय सरक्षण भी प्राप्त था जिसकी पुष्टि इस युग की मूर्तियो, मन्दिरो तथा साहित्य से होती है। थानेश्वर का वर्धन साम्राज्य सूर्य का भक्त था। हर्ष के तीन पूर्वजो के नाम के आगे 'परमादित्य भक्त' विशेषण[3] प्रयुक्त है। हर्ष स्वय शैव था पर बाद मे उसका झुकाव बौद्ध धर्म की तरफ हो गया लेकिन उसने अपने पूर्वजो के देवता सूर्य को नही भुलाया। ह्वेनसाग के वर्णन से स्पष्ट है कि प्रयाग मे बुद्ध और शिव की प्रतिमाओ के साथ उसने सूर्य की प्रतिमा भी स्थापित की थी।

सातवी शताब्दी मे सौर सम्प्रदाय प्रमुख पन्थ था। ह्वेनसाग[4] ने लिखा है कि मुल्तान के सूर्य मन्दिर मे हजारो यात्री दर्शन को आते थे। हर्ष के समकालीन मयूर ने अपने ग्रन्थ 'सूर्यशतक' मे कोढ के इलाज हेतु सूर्यदेव की पूजा का निर्देश दिया है। जैनकवि मानतुग ने अपने ग्रन्थ 'भक्तभारस्तोत्र' मे सूर्य देव की प्रशसा की है। परवर्ती गुप्त शासको के शाहपुर[5] और देववरणार्क

---

1 मथुरा म्युजियम मे बहुत सी मूर्तियॉ सग्रहित है। अग्रवाल, वी एस , जर्नल आफ यू पी हिस्टोरिकल सोसाइटी, जिल्द XXII, पृ 171–73

2 भविष्य पुराण 1 100–129

3 सोनपत्र ताम्रपत्र मे परमदित्य भक्त विशेषण आया है।

4 बील, सैमुअल, बुद्धिस्ट रिकार्ड्स आफ दी वेस्टर्न वर्ड, जिल्द 2 पृ 274–75

5 श्रीवास्तव, वी सी , दी सोलर कल्टएज रिवील्ड वाय दी गुप्ता एण्ड पोस्ट गुप्त इन्स्क्रिप्सनस्, भारतीय विद्या, जल्द XXVII न 1–4 पृष्ठ 41–48

अभिलेख से स्पष्ट है कि हर्षोत्तर काल मे सूर्य देव लोकप्रिय रहे। गुर्जर प्रतिहार शासक रामचन्द्र[1] और विनायक पाल सूर्योपासक थे। बहुत से चौहान शासको[2] ने राजस्थान मे सूर्यपूजा को सरक्षण प्रदान किया। चडमहासेन[3] को सूर्योपासक माना जाता है। इन्द्रराज चौहान[4] जो कि प्रतिहार नरेश महेन्द्रपाल द्वितीय का सामन्त था, ने इस सम्प्रदाय को सरक्षण प्रदान किया तथा अपने नाम पर 'इन्द्रादित्यदेव' का मदिर 942 ई0 मे बनवाया। नाडोल और जालोर के क्रमश अल्हन और कीर्तिपाल[5] सूर्यदेव के प्रति अपनी श्रद्धा प्रदर्शित किए, जबकि वे महान शिवोपासक थे। जगल देश का सिहराज, जो कि चौहान वश की एक शाखा थी, ने भी इस सम्प्रदाय को सरक्षण प्रदान किया। वह 'रणादित्य'[6] नामक सूर्य मन्दिर को दान दिया था। मेवाड के महाराजा सामन्त सिह की सहानुभूति भी इस सम्प्रदाय के प्रति जान पडती है। एक लेख से प्रकट होता है कि वामनेरा नामक[7] उसके राज्य मे स्थापित कर दिया गया। परमार शासक विक्रम सिह ने बरमान मे 1299 ई0 मे एक सूर्य मदिर[8] का जीर्णोद्धार करवाया। गहडवाल शासक[9] भी इस सम्प्रदाय के प्रति उदार थे। राजा जयचन्द्र ने लोलार्क[10] नाम के

---

1 एपिग्रापिया इडिका, जिल्द 14, पृ 176

2 शर्मा, दशरथ, अर्ली चौहान डायनेस्टीज, पृष्ठ 235 तथा राजस्थान थ्रू दी एज, पृ 383, 721

3 शर्मा, दशरथ, अर्ली चौहान डायनेस्टीज, पृष्ठ 235

4 ओझा, जी एच , एपिग्राफिया इण्डिका, जिल्द 14 पृ 176–188

5 एपिग्राफिया इण्डिका, जिल्द 9 पृ 65–69

6 शर्मा, दशरथ, राजस्थान थ्रू दी एज, पृष्ठ 383

7 रे , एच सी , डायनेस्टिक हिस्ट्री आफ नार्दन इण्डिया, 2, पृ 1181

8 शर्मा, दशरथ, राजस्थान थ्रू दी एज, पृष्ठ 721

9 एपिग्रापिया इडिका, जिल्द 1 , पृष्ठ 186, इण्डियन एण्टीक्वेरी XV पृष्ठ 9

10 एपिग्राफिया इण्डिका, जिल्द 4 पष्ठ 129

सूर्य मदिर को बहुत से गॉव दिये थे। काठियावाड के वल्लभी शासक[1] तथा गुजरात के सेन्द्रक शासको ने भी इसको सरक्षण प्रदान किया, जैसा कि उनके काल के लेखो से[2] प्रमाणित होता है। यद्यपि चालुक्य शासक सूर्य के पुजारी नही जान पडते फिर भी ऐसे प्रमाण मिलते है कि उन्होने सूर्य मदिरो के निर्माण के लिए दान दिया। बलवर्मन और अवन्तिवर्मन[3] के लेखो से स्पष्ट पता चलता है कि उन्होने तरूणादित्य नामक सूर्य मदिर के निर्माण मे दान दिया। यदि सरस्वती पुराण[4] पर विश्वास किया जाय तो उससे ज्ञात होता है कि गुजरात के चालुक्य शासक महाराज सिद्धराज ने 'भयालस्वामी' नामक सूर्य मदिर की स्थापना की थी। वस्तुपाल नामक प्रसिद्ध जैन मत्री का झुकाव भी इस सम्प्रदाय की ओर था।[5] रामदेव के शासन काल मे विकल नामक एक जैन ने कैम्बे मे[6] सूर्य मदिर मे मण्डप निर्मित करवाया था। कश्मीर का शासक ललितादित्य ने भी इस धर्म के प्रति अपनी श्रद्धा कश्मीर मे मार्तण्ड नामक मदिर का निर्माण कर प्रदर्शित की। राष्ट्रकूट राजा गोविन्द राज ने 'कावी'[7] के सूर्य मदिर को सहायता प्रदान की। बगाल के एक शिलालेख मे सेनराज वश (1200ई0) के केशवसेन और विश्वसेन[8] सूर्योपासक

---

1 फ्लीट, कार्पस इन्स्क्रिप्सनम इण्डिकारम, जिल्द 3 पृष्ठ 164–171

2 साकलिया, एच डी , आर्केलाजी आफ गुजरात, पृष्ठ 39

3 हिस्टारिकल इन्स्क्रिप्सन्स आफ गुजरात, न 234

4 मजुमदार, ए के , चालुक्याज आफ गुजरात (पृष्ठ 299) मे उद्धत किया है।

5 साकलिया, आर्केलाजी आफ गुजरात एण्ड काठियावाड न 224

6 ब्राउन, पर्सी, इण्डियन आर्किटेक्चर, पृष्ठ 158

7 इण्डियन एण्टीक्वेरी, जिल्द 5 पृष्ठ 144

8 मजुमदार, एन जी , इन्स्क्रिप्सन्स आफ बगाल, जिल्द 3, पृष्ठ140–148, 177–180

कहा गया है। उडीसा के पूर्वी गगो ने भी इस सम्प्रदाय को सरक्षण प्रदान किया। कोर्णाक[1] के मन्दिर का निर्माण उन्ही के समय मे हुआ। सूर्यपूजा केवल उच्चवर्ग मे ही प्रचलित नही थी बल्कि सामान्य प्रजा मे उसका प्रचार था। ह्वेनसाग[2] ने स्पष्ट लिखा है कि मुल्तान के सूर्य मन्दिर मे हजारो लोग दर्शनार्थ आया करते थे। प्रसिद्धभीनमल[3] के सूर्य मन्दिर मे भी हजारो भक्त देश के विभिन्न कोनो से आते थे। सूर्य पूजा की लोकप्रियता इसी बात से जानी जा सकती है कि अब्राह्मण लोग भी इसके अनुयायी थे। मग और भोजक सूर्य के विशेष पुजारी थे।

यह सम्प्रदाय सम्पूर्ण उत्तरी भारत मे प्रचलित था जिसका प्रमाण प्राप्त सूर्य मूर्तियो, लेखो, मन्दिरो तथा साहित्य मे मिलता है। मुख्य रूप से पश्चिमी तथा उत्तर पश्चिमी भारत मे इसकी प्रमुखता है क्योकि सबसे अधिक सूर्य मन्दिर इसी क्षेत्र मे पाये जाते है।[4] इस क्षेत्र मे गुर्जर[5], चालुक्य[6], मैत्रक[7], कलचुरि[8] आदि के राजकीय सरक्षण मे इसका उत्तरोत्तर विकास हुआ।

---

1 हटर, डब्लू डब्लू, एहिस्ट्री आफ उडीसा, जिल्द 1, पृष्ठ 126

2 बील, सैमुअल, बुद्धिस्ट रिकार्डस आफ दि वेस्टर्न वर्ल्ड, जिल्द 3 पृष्ठ 274–75

3 शर्मा, दशरथ, अर्ली चौहान डायनेस्टीज, पृष्ठ 235

4 श्रीवास्तव, वी सी , सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इण्डिया, पृ 390

5 मिराशी, वी वी , कार्पस इन्स्क्रिप्सन्स इण्डिकारम, जिल्द 4, प्लेट 1, पृष्ठ 59

6 हिस्टारिकल इन्स्क्रिप्सन्स आफ गुजरात, न 234

7 एपिग्रापिया इडिका, XXI, बन्टिया प्लेट्स, पृष्ठ 179

8 मिराशी, प्लेट 2, पृ 404,428,444,480,492,530,545,551,624,628

सूर्य मन्दिर इन स्थानो– गोप[1], विश्ववाद[2], सूत्रपाद[3], थान[4], किन्डर खेडा[5], पस्थर[6], मोधेरा[7], हिरण्य, सोमनाथ–पट्टन[8], विलेश्वर[9], परवादी[10] (आनन्दपुर से दो मील दूर), त्रिवेनी[11] (सोमनाथ के पास) आदि से पाये गये है। इसके अतिरिक्त सिद्धपुर, लम्बोजी माता तथा अन्य स्थानो से प्राप्त प्रमाण गुजरात–काठियावाडा क्षेत्र मे 7वी–13वी ई0 तक सूर्य पूजा की प्रमुखता को प्रमाणित करते है।[12] भविष्य पुराण तथा उपपुराणो[13] मे साम्ब की कथा को गुजरात क्षेत्र से सम्बन्धित बताया जाता है।

पजाब और राजस्थान भी सूर्योपासना के केन्द्र थे। पजाब मे मुल्तान के सूर्य मन्दिर का

---

1 काजेन, सोमनाथ पट्टन, 37

2 प्रोग्रेस रिपोर्ट, आर्केलाजिकल (वेस्ट सरकेल 1899)

3 वही

4 प्रोग्रेस रिपोर्ट, आर्केलाजिकल (वेस्ट सरकेल 1899)

5 वही

6 बरगस, ए के के, पृष्ठ 186

7 प्रोग्रेस रिपोर्ट आर्केलाजिकल (वेस्ट सरकेल 1899)

8 वही

9 वही

10 वही

11 काजेन, सोमनाथ पट्टन, पृष्ठ 28

12 पाण्डेय, एल पी, सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, पृष्ठ 244–252

13 हजरा, आर सी, स्टडीज इन दी उप पुराणाज, जिल्द 1 पृष्ठ 40

उल्लेख ह्वेनसाग[1], अलबरूनी तथा अन्य अरब लेखको[2] ने किया है। राजस्थान मे[3] सूर्य मन्दिर ओसिया चित्तौडगढ, धौलपुर, सिरोही, भरतपुर, नन्दसेन तथा तोषा आदि स्थानो[4] पर पाये गये है। राजस्थान मे 600ई0 से 1400 ई0 तक सूर्य पूजा इतनी लोकप्रिय थी कि जी0 एच0 ओझा[5] के अनुसार पूरे सिरोही राज्य मे ऐसा कोई गॉव न था जहॉ कि सूर्य मन्दिर तथा टूटी हुई सूर्य मूर्तियॉ न मिली हो। तेरहवी शताब्दी के बहुत से सूर्य मन्दिर राजस्थान मे मिले है, कुछ प्रसिद्ध मदिर वामनेरा, वर्मान, पिण्डवारा, रोहेरा, बसन्तगढ, तलवार, रनकपुर, रामसैन्या तथा पाली[6] आदि है। बडी सख्या मे सूर्यमूर्तियॉ किरादु, तूषा, ओसिया, पोखरन, पाली, बहारा आदि स्थानो से प्राप्त हुयी है तथा अनेक राजकोट, अजमेर के अजायब घरो मे रखी है। सूर्य सम्प्रदाय पूर्व मध्ययुग मे काश्मीर मे भी लोकप्रिय था जिसका प्रमाण काश्मीर का प्रसिद्ध मार्तण्ड[7] मन्दिर है।

---

1 बील, ए , बुद्धिस्ट रिकार्डस आफ वेस्टर्न कन्ट्रीज, जिल्द 2 पृ 274

2 अलबरूनी एद्रिसी, अबू–इश्क–अल इश्तखरी आदि ने इसका उल्लेख किया है। देखिये – इलियट एण्ड डाउसन, हिस्ट्री आफ इण्डिया एज टोल्ड वाय इट्स ओन हिस्टोरियन्स, जिल्द 1 पृष्ठ 18–73

3 शर्मा, दशरथ, राजस्थान थ्रू दी एज, पृष्ठ 327–720

4 पाण्डेय, एल पी , सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इण्डिया, पृष्ठ 231–252

5 ओझा, जी एच , हिस्ट्री आफ राजपुताना

6 शर्मा, दशरथ, अर्ली चौहान डायनेस्टीज, पृष्ठ 235

7 ब्राऊन, पर्शी, इण्डियन आर्चीटेक्चर, सी XXXVI, चित्र 1 , हखने, वी एस , मार्तण्ड दी क्राउनिग फेस आफ एन्शियेन्ट काश्मीर आर्कीटेक्चर, काश्मीर, न 5, पृष्ठ 107–109

सूर्यपूजा का प्रसार गगा दोआब मध्यभारत[1] तथा पूर्वीभारत[2] मे भी हुआ। मध्यभारत मे सौर सम्प्रदाय की प्रमुखता के प्रमाण यहॉ से प्राप्त मूर्तियॉ, लेख तथा साहित्य है। वराहमिहिर[3] मागी सूर्यपूजा के अनुयायी थे। भवभूति ने (8वी शती ई0) उज्जयिनी मे प्रचलित सौर सम्प्रदाय का स्पष्ट उल्लेख किया है। इसका प्रारम्भ उगते सूर्य की प्रार्थना से है। पुराणो मे उल्लिखित कालप्रिय की पहचान भवभूति के कालप्रियनाथ[4] से की जा सकती है। इसकी पहचान उज्जयिनी के महाकाल से भी की जा सकती है। यह भारत का दूसरा सर्वप्रमुख सूर्यपूजा केन्द्र था। इस युग की कुछ मूर्तियॉ खजुराहो[5] तथा बन्गोन से भी प्राप्त हुई है। विदिशा के समीप बज्रमठ सूर्योपासना का एक प्रमुख केन्द्र था। उत्तर–प्रदेश तथा बिहार मे भी सूर्य पूजा प्रचलित थी क्योकि इस प्रदेश के बहुत से राजा[6] सूर्योपासक थे। खजुराहो के चित्रगुप्त मन्दिर (950–1200ई0) तथा मन्दिर से प्राप्त सूर्य मूर्तियॉ इस क्षेत्र मे सौर सम्प्रदाय की लोकप्रियता का प्रमाण है।

इस युग की बहुत सी मूर्तियॉ मथुरा, लखनऊ, इलाहाबाद तथा सारनाथ के अजायबघरो मे प्राप्त है। शाहपुर तथा देव वरनाक (7वी शती ई0) के लेखो से इस सम्प्रदाय के बिहार मे[7]

---

1 पाण्डेय, एल पी , सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इण्डिया, पृष्ठ 210

2 वही पृष्ठ 211–228

3 बाराहमिहिर की बृहत्सहिता (500 ई0) मागी सूर्य पूजा पद्धति से पूरी तरह परिचित है। देखिये, राय, एस एन , पौराणिक धर्म एव समाज, पृष्ठ 164,

4 मिराशी, वी वी , आइडेन्टी फिकेशनआफ कालप्रिया, स्टडीज इन इण्डोलाजी, जिल्द 1, पृष्ठ 33, अल्तेकर, ए एस , राष्ट्रकूट एण्ड देयर टाइम, पृष्ठ 102

5 अवस्थी, आर ए , खजुराहो की देव प्रतिमाए, पृष्ठ 172

6 एडवर्ड, ए , दी मौखरीज, पृष्ठ 117, फ्लीट, सी 2, जिल्द 3, पृष्ठ 215, देववरनाक लेख में वर्णन है।

7 पाण्डेय, एल पी , सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इण्डिया, पृष्ठ 211–217

विस्तार का प्रमाण मिलता है।

पूर्वी भारत[1] मे सौर सम्प्रदाय की लोकप्रियता मण्डा, दक्क चण्डीया मूदा, दीनाजपुर[2] आदि से प्राप्त से सूर्य मूर्तिया तथा खिचिग और कोणार्क[3] के प्रसिद्ध सूर्य मदिरो से प्रमाणित होती है। परवर्ती पुराण जैसे भविष्य तथा साम्ब उपपुराण विशेष रूप से प्रकट करते है कि उडीसा मे कोणार्क सूर्योपासना का तीसरा महत्वपूर्ण केन्द्र था[4]।

सूर्योपासना पर तान्त्रिक दर्शन का प्रभाव पूर्वी भारत मे विशेष था।[5] तान्त्रिक स्वरूप, जो धार्मिक[6] जीवन का प्रमुख अग बन गया था, ने भी सौर सम्प्रदाय को प्रभावित किया। मुख्य रूप से इसका प्रभाव बगाल के पाल शासको के समय मे हुआ। साम्ब पुराण का उत्तरार्ध भाग सूर्य पूजा के विभिन्न तान्त्रिक पहलुओ पर प्रकाश डालता है जैसे मुद्रा, न्यास, बीज, अभिवार[7] आदि। लेकिन इन तान्त्रिक प्रक्रियाओ के बावजूद सूर्य पूजा तन्त्रवाद से स्वतत्र प्रतीत होती है। ब्रह्माण्ड के विकास मे स्त्री के योगदान जैसे सिद्धान्त का प्रतिपादन नही हो सका।[8] एक भी सूर्य

---

1 पाण्डेय, एल पी , सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इण्डिया, पृष्ठ 2 1 1–228

2 बनर्जी, जे एन , डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू इकनोग्राफी, पृष्ठ 550

3 मित्र, आर एल , एन्टीक्वीटीज आफ ओरिसा, जिल्द 2, पृष्ठ 148

4 मिराशी, वी वी , श्री एन्शियेन्ट फेमस टेम्पल्स आफ दी सन–पुराण, जिल्द 8, नम्बर 1

5 पाण्डेय, एल पी , सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इण्डिया, पृष्ठ 121

6 चक्रवर्ती, सी , दी तन्त्राज स्टडीज आन देयर रिलीजन एण्ड लिटरेचर, पृष्ठ 80–89

7 साम्ब पुराण, अ 47–83, चक्रवर्ती, सी , दी तन्त्राज स्टडीज आन देयर रिलीजन एण्ड लिटरेचर, पृष्ठ 38–44, 80–82

8 ऋग्वेद, 1 0 1 7 1 2, महाभारत, 1 66 35, विष्णु पुराण, 3 2, मारकण्डेय पुराण, LXXVI 1 42 साम्ब पुराण, 10–17, स्कन्द पुराण 7, 1 2 65

की प्रतिमा नारी आकृति[1] के साथ तात्रिक प्रभाव युक्त नही मिली है। तात्रिक बौद्ध धर्म की प्रजन कल्पना तथा हिन्दू तत्रवाद की उमा की सकल्पना जैसी विचारधारा का जन्म नही हो सका[2] इस प्रकार सौर सम्प्रदाय तन्त्रवाद से सिर्फ बाहरी रूप से ही प्रभावित हुआ।[3]

इस युग मे सूर्य की पूजा इन्द्रादित्य, भास्कर, आदित्य, वरूण मार्तण्ड, लोलार्क, जगतस्वामी आदि नाम से होने के प्रमाण साहित्य अभिलेखिक, साक्ष्यो मे मिलते है। प्रारभिक मध्ययुग मे सूर्य पूजा का प्रचलन बीमारियो के इलाज के रूप मे विशेष था।[4] रविवार सूर्य के पवित्र दिन के रूप मे माना जाता था। कमल के रूप मे सूर्य पूजा का इस युग मे भी बार–बार उल्लेख मिलता है। सक्रान्ति, सप्तमी, सूर्य ग्रहण[5] आदि अवसरो पर भेट आदि चढाने का प्रावधान था।

समन्वय की भावना का विकास इस युग मे हुआ जान पडता है। उसका कारण[6] सभवत प्रचलित विभिन्न सम्प्रदायो मे अपने–अपने इष्ट देवो को सर्वोच्च बताने की प्रवृत्ति ने लोगो मे मनोवैज्ञानिक डर भर दिया कि वे अन्यो की भी पूजा नही करेगे तो वे उन्हे नुकसान पहुँचा सकते है। इस कारण लोग एक के स्थान पर कई देवो को पूजने लगे। यह प्रवृत्ति जब और बलवती हुई तो एक देव कई स्वरूपो को धारण करने वाला[7] हो गया। इसी प्रवृत्ति से त्रिमूर्ति, चतुर्मूर्ति, पचायतन पूजा अस्तिव मे आयी जिसमे सूर्य प्रमुख देवता के रूप मे थे।[8] सूर्य, शिव और विष्णु

---

1 दिवाकर, आर आर , बिहार थ्रू दी एज, पृष्ठ 363, बनर्जी, जे एन , डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू इकनोग्राफी, पृष्ठ 43

2 श्रीवास्तव, वी सी , सनवर्शिप इन एन्शियेन्ट इण्डिया, पृष्ठ 265

3 वही0

4 मजुमदार, आर सी , हिस्ट्री आफ बगाल, पृष्ठ 456

5 साम्ब पुराण, 23/40, 30/27 55

6 पाण्डेय, एल पी , सनवर्शिप इन एन्शियेन्ट इण्डिया पृष्ठ 120

7 वही0

8 वही0

इस समय एक हो गये जान पडते है।[1] लम्बोजीमाता, ढीलमल (गुजरात), राणापुर, किरादु, हर्षनाथ और झालावाण (राजस्थान) सोमनाथ[2], खजुराहो[3], बाणगॉव[4] आदि स्थानो तथा देश के विभिन्न भागो से प्राप्त सूर्य की त्रिमूर्ति कल्पना इसका प्रमाण है। हर्ष, बुद्ध, और शिव के साथ सूर्य देव की भी पूजा करता था। माधव जो कि प्रतिहार साम्राज्य के शैव शासक महेन्द्रपाल का राज्यपाल था, ने सूर्यदेव के मन्दिर के जीर्णोद्धार के लिए एक गॉव दिया था। बहुत से पुराणो[5] मे सूर्य शिव की अभिन्नता का उल्लेख है।

लोकेश्वर गुहा मे (एलौरा मे) सूर्य को हिन्दुओ के प्रमुख देवताओ[6] मे एक के रूप दिखाया गया है। त्रिमूर्तियो मे गुजरात तथा राजस्थान मे सूर्य को प्रमुख देव दर्शाया गया है। हर्षनाथ से भी प्राप्त मूर्तियो मे सूर्य को सर्वोच्च दिखाया गया है। बगाल के एक लेखक के अनुसार ब्रह्मा का स्थान सूर्य ने ले लिया है। रगपुर[7] से प्राप्त बहुत सी मूर्तियो मे ब्रह्मा, विष्णु और सूर्य प्रदर्शित है, जिससे सिद्ध होता है कि शिव का स्थान सूर्य ने ले लिया। दसवी शती के आसाम के तेजपुर मन्दिर मे ब्रह्मा और शिव तथा सूर्य दिखाये गये है। जिसमे सूर्य द्वारा विष्णु स्थानान्तरित जान पडते है। शकराचार्य के दक्कन मे सूर्य पूजारियो से शास्त्रार्थ करना पडा था। इस प्रकार कुछ

---

1 साम्ब पुराण, अ 26 37–38,

2 साकलिया, एच डी , आर्केलाजी आफ गुजरात, पृष्ठ 163 तथा शर्मा, दशरथ, राजस्थान थ्रू दी एजेज, पृष्ठ 381

3 केम्रिश, हिन्दू टेम्पुल, जिल्द 2, पृष्ठ 373–374, 381

4 हीरा लाल, त्रिमूर्तीज इन बुन्देलखण्ड, इण्डियन एन्टीक्वेरी, पृष्ठ 136–137

5 अग्नि पुराण, 73 16–17, मार्कण्डेय पुराण, 109 5, कालिका पुराण, 74 113, ब्रह्म पुराण, 33 11 14, साम्ब पुराण, 68, आदि।

6 मजुमदार, आर सी , दी एज आफ इम्पीरियल कन्नौज, पृष्ठ 332

7 ओझा, जी एच , हिस्ट्री आफ जोधपुर – 1 पृष्ठ 66

भागो मे सूर्य को प्रमुख देवता के रूप मे पूजा जाता था। वह प्रारम्भिक मध्य युग के पचोपासना[1] के पॉच देवो मे एक थे।

इस युग के सौर सम्प्रदाय की दूसरी विशेषता सौर साहित्य का विकास है। आरम्भिक पुराणो मे सौर साहित्य के प्रमाण स्वरूप बहुत से उद्धरण मिलते है, पर अभी तक इनमे से कोई प्राप्त नही हुये है। सूर्य पुराण, सौर धर्म, सौर–धर्मोत्तर, मार्तण्ड पुराण, आदित्य पुराण, भास्कर पुराण, उत्तर सौर[2] आदि का उल्लेख बाद के युग के साहित्य मे मिलता है। सौर पुराण[3] नाम से जाना जाने वाले एक पुराण मे शिव की कीर्ति वर्णित है। उपलब्ध मुख्य सौर साहित्य मे साम्ब पुराण भी है।

इस प्रकार सौर सम्प्रदाय पूर्व मध्ययुग मे उत्तर भारत के प्रमुख धार्मिक सम्प्रदायो मे से एक था। लेकिन इस विचार से सहमत होना कठिन है कि पूरे उत्तर भारत मे सूर्य, विष्णु के बाद दूसरे नम्बर पर लोकप्रिय थे।[4] उपर्युक्त निष्कर्ष मन्दिरो, मूर्तियो, सिक्को, साहित्यिक साक्ष्यो के आधार पर नही माना जा सकता। शैव और शाक्त, सौर धर्म की अपेक्षा ज्यादा प्रचलित[5] जान पडते है, क्योकि साहित्य मे उनका ज्यादा उल्लेख है। सिक्को, मन्दिरो, मूर्तियो के रूप मे भी उनके प्रमाण ज्यादा है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि सौर सम्प्रदाय हिन्दू धर्म के प्रमुख पन्थो मे एक था लेकिन यह सर्व प्रमुख नही था।

---

1 कलचुरि शासक पृथ्वी देव द्वितीय का 'कोनी का लेख' का उल्लेख तथा मन्दिरो के अवशेष प्रमाण है।

2 पाण्डेय, एल पी , सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इण्डिया, पृष्ठ 152–154

3 सौर पुराण, आनन्दाश्रम, सस्कृत ग्रथावली, 18, 1924

4 उपाध्याय, वी , दी सोशिओ – रिलीजियस कडीशन आफ नार्थ इण्डिया, पृष्ठ 255

5 मजुमदार, आर सी , दी एज आफ इम्पीरियल कन्नौज, पृष्ठ 299

सूर्य की लोकप्रियता का सबसे बडा कारण उसका पालक रूप था। सूर्य को इष्टदेव के रूप मे, अपने देवता या उसके किसी प्रमुख पक्ष को प्रमुखता देकर पूजा जाता था।[1] एक पन्थ के अलावा सूर्य की पूजा भारतीयो की दैनिक चर्या मे शामिल थी। इसके इतने लम्बे समय तक प्रचलित रहने के कारण के रूप मे सूर्य देव के प्रतिदिन के जीवन मे लाभकारी योगदान मे देखा जा सकता है। विज्ञान द्वारा यह स्वीकार किया जाता है कि सौर प्रणाली ऊर्जा[2] का प्रमुख स्रोत है।

---

1 शर्मा, दशरथ, <u>रास्थान थ्रू दी एज</u>, पृष्ठ 720

2 जग, राबर्ट, <u>ब्राइटर दैन ए थाउजैन्ड सन्स</u>, पृष्ठ 11

अध्याय – दो

सौर प्रतीक

अध्याय–द्वितीय

सौर–प्रतीक

भारतीय कला मे सूर्य को प्रतीक और मानव दोनो ही रूपो मे निरूपित किया गया है। आद्यैतिहासिक सभ्यता के कुछ ठीकरो पर कुछ ऐसे चिन्ह प्राप्त होते हे, जो बाद के युग मे सूर्य के प्रतीक के रूप मे स्वीकृत किये गये, जैसे–स्वस्तिक, चक्र, किरण युक्त मण्डल और मयूर[1] आदि। इन प्रतीको का प्रयोग वैदिक कर्मकाण्डियो द्वारा यज्ञो के अवसर पर किया जाता था। चक्र, पद्‌म और रश्मिमडल जैसे प्रतीको का अकन आहत मुद्राओ (लगभग छठी शती ई० पू०) पर देखा जा सकता है।

स्वस्तिक (卐)–

स्वस्तिक चिन्ह एक दूसरे को समकोण पर काटती हुयी दो छोटी रेखाओ से निर्मित है। आर–पार के चारो बिन्दु क्रमश अर्द्धरात्रि, सूर्योदय, मध्यान्ह तथा सन्ध्या के समय सूर्य की स्थिति के सूचक माने गये हैं। स्वस्तिक चिन्ह दिशा की चार छोटी रेखाओ को जोडने से पूर्ण होता है जो सभवत पूरब से पश्चिम सूर्य की गति को सूचित करता है। स्वस्तिक सपूर्ण विश्व में[2] भली–भॉति विदित है। यह ऐतिहासिक भारत मे एक लोक प्रिय धार्मिक प्रतीक रहा है। आज भी यह एक धार्मिक प्रतीक[3] माना जाता है। स्वस्तिक की महत्ता के विषय मे डिवर्स के मत का उल्लेख किया जा सकता है कि यह मूलत सूर्य

---

1 श्रीवास्तव, वी०सी०, सन वर्शिप इन एन्शियन्ट इण्डिया, पृ० 23-36

2 ब्राउन, पर्सी, स्वस्तिक, पृ० 17-18, मार्शल, सरजान, मोहनजोदडो एण्ड दी इण्डस सिविलाइजेशन, जिल्द–I, पृ०–३७।

3 मार्शल, जे०, मोहनजोदडो एण्ड दी इण्डस सिविलाइजेशन जिल्द–I पृ० ४२६।

की गति का प्रतिनिधि प्रतीक था।[1] इस कारण इसका प्रयोग खगोलीय गति को सूचित[2] करने के लिए होने लगा। अन्त मे यह प्रत्येक गतिशील वस्तुओं[3] का सूचक हो गया। कालान्तर मे स्वस्तिक, जीवन ओर मानव की सवृद्धि का प्रतीक[4] हो गया।

चूँकि सूर्य उर्वरता का स्रोत हे[5] इसलिए सूर्य की उत्पादक शक्ति को सकेतित करने के लिए प्रतीक रूप मे स्वस्तिक का प्रयोग किया जा सकता हे।[6] साक्ष्यो से सिद्ध होता है कि प्रागेतिहासिक जगत मे सूर्य का यह भाव प्रचलित था। मातृ देवी की एक छोटी मूर्ति के शरीर के निचले हिस्से मे[7] इस आशय का सकेत है। यह ट्राय के चट्टानी निधियो[8] से पायी गयी है। यह प्रतीक मछलियो से घिरे V आकार वाली प्रतिमूर्ति पर

---

1 हेस्टिग्स, जे०, इन्साइक्लोपिडिया आफ रिलीजन एण्ड इथिक्स, जिल्द–IV पृ० ३२८।

2 थामस, ई०बी०, इण्डियन स्वस्तिक एण्ड इट्स वेस्टर्न काउण्टर पार्ट, पृ० १८–४३, फर्म, वी,इनसाइक्लोपीडिया आफ रिलीजन, पृ० ७५२, हेस्टिग्स, जे० इनसाइक्लोपीडिया आफ रिलीजन एण्ड इथिक्स, जिल्द–IV पृ० ३२८, बर्डबुड, जी० ओल्ड रिकार्डस आफ इडियन आफिस, पृ० Xff डुमन्ट, पी०ई०, जर्नल आफ अमेरिकन ओरियन्टल सोसायटी, जिल्द–५३, पृ० ३२६–३४।

3 श्रीवास्तव, विनोद चन्द्र, सन वर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १६७२, पृ० ३१।

4 वही०, पाण्डेय, लालता प्रसाद, सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १६७१, पृ० ३

5 वही०

6 वही०

7 मकैन्जी, डॉ० ए० , क्रीट एण्ड प्री–हेलनिक यूरोप, पृ० २३७, देखे–मेन इन इडिया, जिल्द–XII, १६३२ (राची) पृ० १४१–१४२।

8 पाण्डेय, लालता प्रसाद, सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १६७१, पृ० ३

चित्रित है और स्पष्ट रूप से उर्वरता का प्रतीक है।"[1] प्राचीन यूनानियो की भॉति भारत के प्रागैतिहासिक आदिम लोग भी सूर्य को उर्वरता के देवता के रूप मे स्वीकार करते थे और सन्तति प्राप्त करने के उद्देश्य से उनकी पूजा किया करते थे। क्रुक के अनुसार आदिम समाज मे यह आम विश्वास था कि स्त्रियॉ भी सूर्य के द्वारा गर्भवती हो सकती है और लडकियॉ युवा होने पर सूर्य की दृष्टि से बचाव करती है। एक सतानहीन स्त्री सतान की इच्छा से सूर्य के समक्ष स्नान करती और नगी खडी रहती है, तथा अपने बॉझपन को दूर करने के लिए उनकी प्रार्थना करती है।"[2]

बेनिआबेरिगुफा[3] (म०प्र० मे पचमढी क्षेत्र) से प्राप्त पाषाण चित्रो मे स्वस्तिक का अकन उपासना के उद्देश्य से किया गया प्रतीत होता हे। सभव हे कि यह सोरगति से सम्बन्धित रहा हो। हडप्पा सस्कृति[4] की मुहरो, ताबीजो ओर मनको पर स्वस्तिक का अकन हुआ है। इस प्रतीक के सबसे साधारण रूप मे दो रेखाएँ हे– एक लम्बवत् ओर

---

1 मकेन्जी, डॉ० ए०, क्रीट एण्ड प्री– हेलनिक यूरोप, पृ० २३५, मैन इन इडिया मे उद्धत, जिल्द–XII,१६३२, 'दी स्वस्तिक' पृ० ८३

2 डॉ० क्रुक, "रिलीजन एण्ड फाकलोर आफ नार्दन इडिया (१६२६) पृ० ३४, मैन इन इडिया मे उद्धत जिल्द–XII, 'दी स्वास्तिक', १६३२ पृ० ८७

3 मारिन्जर, जे०, दी गाड्स आफ प्री–हिस्टोरिक मैन, लदन, १६५६, पृ० १६४, चित्र, ४६, गुप्ता, जे०, पूर्वोद्धत––––––, पृ० ४१८।

4 मार्शल, जॉन, मोहनजोदडो एण्ड दी इण्डस सिविलाइजेशन, जिल्द–I (ऑन सील्स), प्लेट, CXIV चित्र, ५००–५१५, मैके, ई० जे० एच०, दी इण्डस सिविलाइजेशन, लदन १६३५ (आन एमुलेट्स), प्लेट CII नम्बर Iऔर II (आन वीड्स) प्लेट LXXXVI 172, LXXXVIII-320, एज ए ब्रान्ड ऑन कैटिल XCVIII,619 और ६२४ ,वाट्स, एम० एस०, एक्सक्वेशन एट हडप्पा, जिल्द–२, प्लेट XCIII,306 एण्ड ३१७, प्लेट XCV-392,396,399, एन्शियन्ट इडिया नम्बर १४।

चित्रित है और स्पष्ट रूप से उर्वरता का प्रतीक है।'[1] प्राचीन यूनानियो की भॉति भारत के प्रागैतिहासिक आदिम लोग भी सूर्य को उर्वरता के देवता के रूप मे स्वीकार करते थे और सन्तति प्राप्त करने के उद्देश्य से उनकी पूजा किया करते थे। क्रुक के अनुसार आदिम समाज मे यह आम विश्वास था कि स्त्रियॉ भी सूर्य के द्वारा गर्भवती हो सकती है और लडकियॉ युवा होने पर सूर्य की दृष्टि से बचाव करती है। एक सतानहीन स्त्री सतान की इच्छा से सूर्य के समक्ष स्नान करती और नगी खडी रहती है, तथा अपने बॉझपन को दूर करने के लिए उनकी प्रार्थना करती है।"[2]

बेनिआबेरिगुफा[3] (म०प्र० मे पचमढी क्षेत्र) से प्राप्त पाषाण चित्रो मे स्वस्तिक का अकन उपासना के उद्देश्य से किया गया प्रतीत होता हे। सभव हे कि यह सोरगति से सम्बन्धित रहा हो। हडप्पा सस्कृति[4] की मुहरो, ताबीजो और मनको पर स्वस्तिक का अकन हुआ है। इस प्रतीक के सबसे साधारण रूप मे दो रेखाऍ हे– एक लम्बवत् और

---

1 मकेन्जी, डॉ० ए०, क्रीट एण्ड प्री– हेलनिक यूरोप, पृ० २३५, मैन इन इडिया मे उद्धत, जिल्द–XII,१६३२, 'दी स्वस्तिक' पृ० ८३

2 डॉ० क्रुक, "रिलीजन एण्ड फाकलोर आफ नार्दन इडिया (१६२६) पृ० ३४, मैन इन इडिया मे उद्धत जिल्द–XII, 'दी स्वास्तिक', १६३२ पृ० ८७

3 मारिन्जर, जे०, दी गाड्स आफ प्री–हिस्टोरिक मैन, लदन, १६५६, पृ० १६४, चित्र, ४६, गुप्ता, जे०, पूर्वोद्धत———, पृ० ४१८।

4 मार्शल, जॉन, मोहनजोदडो एण्ड दी इण्डस सिविलाइजेशन, जिल्द–I (ऑन सील्स), प्लेट, CXIV चित्र, ५००–५१५, मैके, ई० जे० एच०, दी इण्डस सिविलाइजेशन, लदन १६३५ (आन एमुलेट्स), प्लेट CII नम्बर Iऔर II (आन वीड्स) प्लेट LXXXVI 172, LXXXVIII-320, एज ए ब्रान्ड ऑन कैटिल XCVIII,619 और ६२४ ,वाट्स, एम० एस०, एक्सक्वेशन एट हडप्पा, जिल्द–२, प्लेट XCIII,306 एण्ड ३१७, प्लेट XCV-392,396,399, एन्शियन्ट इडिया नम्बर १४।

दूसरी क्षैतिज, जो एक दूसरे को समकोण पर खीची गयी है जो बाये से दाये या दाये से बाये चल रही है। ई०बी० हावेल के अनुसार, 'यह स्पष्ट रूप से पृथ्वी के चारो ओर सूर्य की गति को सकेतित करता है।[1]" दायी ओर मुडा हुआ स्वस्तिक[2] सृष्टि निर्माण की सोर शक्ति और विश्व की प्रतिरक्षा सकेतित करता है। इसका अकन हडप्पोत्तर काल के शाही–टम्प पात्रो[3] पर देखा जा सकता है। यह रगपुर और नवदाटोली से प्राप्त ताम्रपाषाणिक पात्रो के साथ–साथ कुर्ग और कोयम्बटूर[4] से पाये गये महापाषाणिक पात्रो पर खुरचकर बनाया गया है। ब्राह्मण ग्रन्थो मे[5] स्वस्तिक के माध्यम से सूर्योपासना का वर्णन मिलता है। अशोक के कुछ अभिलेखो मे[6] स्वस्तिक प्रतीक का अकन हुआ है जिसे शुभ सूचक सामान्य प्रतीक या पाली मोनोग्राम[7] माना जा सकता है क्योकि वह बौद्ध धर्मानुयायी था। साम्ब पुराण[8] मे सूर्योपासना हेतु इस प्रतीक का उल्लेख हुआ है।

कमल –

कमल का अकन सिन्धुघाटी की सभ्यता से ही प्राप्त होने लगता है। इस सभ्यता की कतिपय मुहरो पर केश मे कमल धारण किये देवियो की आकृति चित्रित है।[9] हैवेल

---

1 हावेल, ई०बी०, दी आइडिएलस आफ इडियन आर्ट, पृ० ६८

2 प्रसाद दुर्गा,'जर्नल एण्ड प्रोसिडिग्स आफ एसियाटिक सोसायटी आफ बगाल, पृ० ३२, चित्र सख्या १०५।

3 वाट्स, एम० एस०, एक्सक्वेशन एट हडप्पा, LXVIII, नम्बर ७२।

4 एन्शियन्ट इडिया १६, प्लेट XIV पृ० ४,६,१,२

5 शतपथ ब्राह्मण, III,9,2,9,VII,4,1,10, देखे–ऋग्वेद I, 175, 4, IV, 30, 14, V, 29, 10

6 मुकर्जी, आर० के०, 'अशोक' पृ० २४५, फूटनोट ४

7 देव, एच० के०, जर्नल आफ ओरियन्टल इन्स्टीच्यूट, जिल्द–१७, पृ० २३२

8 साम्ब पुराण, २६,२६

9 अग्रवाल, वासुदेव शरण, भारतीय कला, पृ० २८ तथा वर्मा, परिपूर्णानन्द, प्रतीक शास्त्र, पृ० २३६

के अनुसार[1] कमल पुष्प का मूल स्थान भारत ही था। यही से यह प्रतीक मिस्र, असीरिया, ईरान आदि देशो मे पहुँचा था।

केवल कमल के अकन के माध्यम से सूर्य की उपस्थिति का भान साहित्य और कला दोनो मे यत्र–तत्र कराया गया है।

भारत मे बहुत प्राचीन काल से[2] कमल पुष्प का सूर्य के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। सौरप्रतिमाशास्त्र और पुराणो से[3] स्पष्ट है कि ऐतिहासिक भारत मे कमल सूर्य का प्रतीक था। कमल सूर्य की उर्वरा शक्ति का प्रतिनिधि है।[4] वैदिक कर्मकाण्डो मे सूर्य की उर्वरता शक्ति को सकेतित करने के लिए कमल का प्रयोग किया जाता था। वहाँ कमल की माला का उल्लेख है जिसमे बारह कमल पुष्प गुथे है[5] जो वर्ष के बारह महीनो के सूचक है। अश्विनिकुमार कमल वृन्दो मे गजरादार[6] कहे गये हैं। अग्निकायन यज्ञ मे मध्य मे[7] प्रथम तह मे कमल पत्र रखने का विधान है। यह कमल–पत्र, सुनहले बिम्ब के

---

1 हैवेल, ए हैन्डबुक आव इन्डियन आर्ट, पृ० ४४

2 स्मिथ, वी०ए०, कैटलाग आफ क्वाइन्स इन दी इण्डियन म्युजियम, जिल्द–I पृ० १३६, Nos I,15 आदि, Nos,2,3-5,6,56,69 इत्यादि देखे–फाउचर, एम०, विग्निगस आफ बुद्धिस्ट आर्ट, प्लेट, I चित्र १–४,८

3 बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट ऑफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० १०६

4 वही०, गोन्ड, जे०, एस्पेक्ट्स ऑफ अर्ली विष्णुइज्म।

5 पचविशब्राह्मण,XVII,9,6,8, श्रीवास्तव, विनोद चन्द्र, पौराणिक रिकार्ड्स आन दी सन वर्शिप पुराण, प्लेट XI नम्बर २ पृ० २४०–४२

6 आश्वलायन ग्रहयसूत्र, I. 15 2 पारश्करगृहयसूत्र, II,4,8, हिरण्यकेशिन गृहयसूत्र, I,2,6

7 तैत्तिरीय सहिता, IV,2,8, काठक सहिता, XVI,15, वाजसनेयी सहिता, XIII,2 तैत्तिरीय सहिता ब्राह्मण, 2,6,5, काठक सहिता ब्राह्मण, XX5, मैत्रायणी सहिता ब्राह्मण, III, 2,6, शतपथ ब्राह्मण, VII, 4,1,7, बौद्धश्रौत सूत्र, X,30, आपस्तम्ब श्रौत सूत्र, XVI,22,2, वैखानस श्रौतसूत्र, XXIX/XVIII, 17

साथ सयुक्त है जो सौर प्रतीक था। इस प्रकार यह कहना तर्कसगत है कि कमल पत्र भी अपनी उर्वरा शक्ति के कारण सौर प्रतीक था।[1] कमल का खिलना और बन्द होना सूर्य के उगने और छिपने के अनुरूप है।[2] अर्थवेद मे[3] कमल को सूर्य से सम्बन्धित बताया गया है। वैदिकोत्तर सूर्योपासना मे भी कमल[4] सूर्यदेव का प्रतीक था। मत्स्यपुराण[5] मे कमल सप्तमी व्रत का उल्लेख प्राप्त होता है जिसमे यह विधान उल्लखित है कि स्वर्ण मय तिल पात्र मे कमल को रख कर गन्ध, पुष्प, वस्त्र इत्यादि से "दिवाकर नमस्तुभ्य प्रभाकर। नमाऽस्तुते" इत्यादि स्तुतियो से उपासना करना चाहिए। इसी प्रकार आदित्यवार व्रत मे[6] भी द्वादश दल कमल की स्थापना करने का विधान प्राप्त होता है। उद्यापन के समय भी अष्टदल कमल को सकर्णिक अकित करने की परम्परा प्राप्त होती है। गरूड पुराण मे[7] सूर्य के विष्णुस्वरूप का वर्णन करते हुए 'ॐ पद्माय नम' तथा 'ॐ कर्णिकायै नम' के रूप

---

1 श्रीवास्तव, विनोद चन्द्र सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १६७२, पृ० १५८

2 हेस्टिग्स, जे०, इनसाइक्लोपिडिया आफ रिलीजन एण्ड इथिक्स, जिल्द–८, पृ० १४२–५

3 अथर्ववेद, XIII,3, 10

4 पुराण, XI नम्बर, २, पृ० २४१

5 वसन्तामलसप्तम्या स्नात गौरसर्षपै। तिलपात्रे च सौवर्णेविधाय कमल शुभम्। वस्त्रयुग्मावृत्तम् कृत्वा गन्धपुष्पै समर्चयेत। नम कमलहस्ताय नमस्ते विश्व धारिणे। दिवाकर नमस्तुभ्य प्रभाकर नमो स्तुते।।

मत्स्यपुराण, ७७,२–४

6 मत्स्य पुराण १६,५

7 गरूडपुराण ३६,४

मे स्तुति की गई है। साम्बपुराण मे[1] इस तरह के विधान अनेक स्थलो पर प्राप्त होते हैं। द्वादश कमल–सूर्य को पीठिका रूप मे भी स्वीकार किया गया है।[2] ऐसे उल्लेख मे कमल के द्वादश दल बारह राशियो के प्रतीक बन जाते है। अग्निपुराण मे[3] स्पष्टत सूर्य के लिए द्वादश दल कमल का अकन कर उन पर बारह राशियो की कल्पना करने का उल्लेख किया गया है। सूर्य मडल का विस्तृत विवरण साम्बपुराण[4] मे प्राप्त होता है जिसके आधार पर यह अनुमानित किया जा सकता हे कि मडल की सरचना मे विभिन्न दलो वाले कमल की कितनी महत्ता थी। कला मे ग्रहराजमडल के अनेक उदाहरण प्राप्त होते है। अष्टदल कमल के अकन से युक्त एक मृण्फलक चिराद से प्राप्त हुआ है[5] जिसे सूर्य का प्रतीक माना गया है। इसी प्रकार मूर्तजागज से प्राप्त[6] एक प्रस्तर चकिया पर भी सूर्य का अकन कमल के रूप मे किया गया है। कन्नौज से प्राप्त त्रिरथ ओर भद्रप्रक्षेपण युक्त प्रस्तर खड पर[7] द्वादशदल कमल का चित्रण किया गया है जो सूर्य का ही प्रतीक है। मुण्डेश्वरी मे[8] सूर्य यत्र की प्रतिष्ठा की गयी थी। जितेन्द्र नाथ बनर्जी ने[9] आहत मुद्राओ तथा एरण से प्राप्त मुद्राओ पर अकित कमल को सूर्य का ही पर्याय माना है।

---

1 साम्बपुराण (हिन्दी अनु०) पृ० २२६,२४६,२५४,२५५ आदि।

2 साम्ब पुराण २४६

3 अग्निपुराण, ५१,४–६

4 साम्बपुराण, अध्याय ५५

5 कृष्णदेव का लेख,"लोटस सिम्बालिज्म ऑव ग्रहराज मडल," जर्नल ऑव इण्डियन सोसायटी आव ओरिएण्टल आर्ट, वाल्यूम ३३ पृ० १०६

6 वही० पृ० १०६

7 वही० पृ० १०६

8 वही० पृ० १०६

9 जितेन्द्र नाथ बनर्जी, डिवलपमेन्ट आव हिन्दू आइकोनोग्राफी, पृ० १३७–१३६

सूर्योपासक सूर्य देव को उनके दोनो हाथो मे[1] कमल पुष्प लिए हुए प्रदर्शित करते हे। परवर्तीकाल मे उनकी मूर्तियो के साथ कमल पुष्प का अकन कला का एक स्थायी और आवश्यक अग हो गया। विष्णु, जो मूलत एक सौर देवता हे, के एक हाथ मे कमल पुष्प[2] दिखायी देता है।

चक्र –

आद्यैतिहासिक पात्रो और मुहरो पर अकित चक्र को सौर प्रतीक स्वीकार किया जाता है। कब्रपहर नामक स्थान से प्राप्त पाषाण चित्रो मे चक्र–जैसी आकृति अकित हे। उनमे[3] ३६ तिलियॉ लगी है। पिकलिहल[4] से प्राप्त नवपाषाणिक पात्रो पर यह प्रतीक देखा जा सकता है। चक्र का ऐसा ही अकन सैधव और परवर्ती सैंधव पात्रो पर[5] दिखाई देता है। मोहनजोदडो[6] से प्राप्त एक मुहर पर चार तिलियो वाला एक चक्र अकित है। मोहनजोदडो के पात्रों[7] पर तीली लगा हुआ चक्र अकित है। हडप्पा की कब्रो से प्राप्त[8]

---

1 पाण्डेय, लालता प्रसाद, सन वर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १९७१, पृ० ७३

2 वही०

3 मार्जिनर, जे०,दी गाड्स आफ प्री–हिस्टोरिक मैन, पृ० XVII

4 आलचिन, एफ० आर०, पिकलिहल एक्सक्वेशनस, पृ० ७४

5 मार्शल, जॉन, मोहनजोदडो एण्ड दी इण्डस सिविलाइजेशन, जिल्द–I, प्लेट LXXXVII चित्र, ३, प्लेट III चित्र ३

6 मैके, ई०, अर्ली इण्डस सिविलाइजेशन, प्लेट XCVII, 554, देखे–लाल, बी०बी०, एन्शियन्ट इडिया, नम्बर १६,१९६०, बुलेटिन, प्लेट XXIB, प्रतीक ३६, पृ० १४–१५

7 मार्शल, जॉन, मोहनजोदडो एण्ड दी इण्डस सिविलीजेशन, प्लेट LXXXVIII 3

8 वाट्स एम०एस०, एक्सक्वेशन एट हडप्पा, जिल्द–२, प्लेट LVIII चित्र B-3,5,6; C,4

बर्तनो पर चक्र का अकन मिलता है। इसी प्रकर का चित्र रगपुर से[1] प्राप्त पात्रो पर चित्रित है। यह सूर्यगति[2] का सूचक है। चक्र मे लगे सेल्ट्स सूर्य के प्रतीक हैं।[3]

ऋग्वेद मे सूर्यरथ के पहियो[4] का वर्णन है। वैदिक यज्ञो[5] और अयनान्त जैसे त्यौहारो[6] पर सूर्य देव के प्रतीक रूप मे चक्र का प्रयोग होता था। परवर्ती साहित्य[7] ओर प्रतिमाशास्त्र चक्र के सौर स्वरूप को इगित करते हैं। परवर्ती वैदिक शास्त्र मे चक्र को भारत के सूर्य देव विष्णु[8] का एक प्रतीक माना गया था।

प्राचीन भारतीय मुद्रा साक्ष्यो[9] से ज्ञात होता है कि ऐतिहासिक भारत मे यह एक प्रसिद्ध सौर प्रतीक था।

पश्चिमी यूरोप मे नवपाषाणकाल मे[10] चक्र सूर्य का प्रतीक था। बेबीलोनिया मे सिप्पर नामक स्थान से प्राप्त एक पाषाण खण्ड पर चक्र का अकन मिलता है शमस (सूर्य देव) के समक्ष दीप्तमान तीलियो वाला एक चक्र है।[11]

---

1 आल्चिन बी० एण्ड अर०, पिकलिहल एक्सक्वेशनस, पृ० १८१ चित्र ४४ नम्बर १२

2 डुमण्ट पी०ई०, 'जर्नल आफ अमेरिकन ओरियन्टल सोसाइटी', जिल्द–५३ पृ० ३२४–३४

3 हेस्टिग्स, जे०, 'इन्साक्लोपीडिया आफ रिलीजन एण्ड इथिक्स, जिल्द–III पृ० ३०१

4 ऋग्वेद I, 175 4, IV, 30,4, IV 28, 2, V29,10, देखे–अथर्ववेद XIII 3,18

5 बेबर, वाजपेय,पृ० २०,३४f

6 ओल्डेनवर्ग, डाई रिलीजन डेर वेद (O R V)८८, नम्बर ४

7 मत्स्यपुराण, अध्याय ७४–८४ हजारा, आर०सी०, स्टडीज इन दी उपपुराणस, जिल्द–I पृ० ३१

8 गोण्डा जे०, एस्पेक्ट्स आफ अर्ली विष्णुइज्म, पृ० ६६ff

9 बनर्जी, जे० एन, सूर्य इन ब्राह्मनिकल आर्ट, एन्शियन्ट इडिया, पृ० १३७

10 मार्जिनर, जे, दी गाड्स आफ प्री–हिस्टोरिक मैन, पृ० १७३

11 जस्ट्रोव, एम०, रिलीजन आफ बेबीलोनिया एण्ड असीरिया, पृ० ६२८

इस प्रकार हम कह सकते है कि चक्र सूर्य देव का लोकप्रिय प्रतीक था जो उसकी आकृति और गति दोनो[1] का सूचक है।

स्वर्ण चक्र –

वैदिक कर्मकाण्ड मे[2] स्वर्ण–चक्र सूर्य का प्रतीक था। ऋग्वेद[3] के एक उल्लेख मे सूर्य को आकाश मे रूक्म' कहा गया है। चूँकि यह वाक्याश ऋग्वेद मे[4] किसी अन्य देवता के लिए नही दुहराया गया है इसलिए यह विशेष रूप से सूर्य के लिए वर्णित है। सायण ने रूक्म'[5] का अर्थ 'चमकीला' या अलकार माना है। अत इसका अर्थ हुआ कि यह सूर्य, जो आकाश के अलकार है, निकल चुके है। ब्राह्मण ग्रथो मे यह शब्द सूर्य के प्रसग मे स्वर्णचक्र और अन्य जगह मात्र स्वर्णाभूषण के[6] अर्थ मे प्रयुक्त है। वैदिक कर्मकाण्ड मे सूर्य देव को[7] सकेतित करने के लिए स्वर्ण–तश्तरी का व्यवहार होता था।[8] सूर्य के प्रतीक

---

1 मैकडानल, ए०ए०, वैदिक मिथोलाजी, प्रथम सस्करण, पृ० १५५

2 मैकडोनल, ए०ए० वैदिक मिथोलाजी, पृ० १५५

3 VII 63, 4- देवो रूक्म उरूचक्षा उदेति।

4 ब्लूम फील्ड, एम०, ऋग्वेद रिपिटीसनस, पृ० ३२४

5 अय सूर्यो रूक्मो रोचमान----यद्वा दिवोन्तरिक्षय रूक्म आभरणस्थानीय, मैक्समूलर, पृ० १३५

6 मैकडोनल एण्ड कीथ, वैदिक इण्डेक्स, जिल्द–II पृ० २२४

7 पचविश ब्राह्मण,XVIII 9,9, शतपथ ब्राह्मण,VII,4,1,10- अथ रूक्मम् उपदधाति असवो वा आदित्य एष रूक्म----, III 5,1,20, V,2,1,21, V,4,1,13 तैत्तिरीय सहिता, IV, 2,8, वाजसनेयी सहिता, XIII 3, तैत्तिरीय सहिता ब्राह्मण, V,2,7,1, काठक सहिता ब्राह्मण, XX,5, मैत्रायणी सहिता ब्राह्मण,III, 2, 6, बौधायन श्रौत सूत्र, X, 30, आपस्तम्ब श्रौतसूत्र, XVI, 22, 3, वैखानस श्रौत सूत्र, XXIX/XVIII, 17, काठक श्रौत सूत्र, XVII 74

8 शतपथ ब्राह्मण, III, 9,2,9, XII 4 4 6, अथर्ववेद VII,12

रूप मे अग्नि छाप का भी प्रयोग होता था।[1] स्वर्ण अपनी चमक के कारण प्रकाश के देवता के लिए उपयुक्त प्रतीक था। स्वर्ण चक्र सौर मण्डल के आकार के सदृश है। इसलिए इसे सूर्य सकेत मानना तर्कसगत है।

एक नेत्र –

सिन्धु घाटी के बहुदेववाद मे[2] सभवत एक नेत्र सूर्य का प्रतीक था। ऋग्वेद मे[3] सूर्य को विश्व का नेत्र कहा गया है। सूर्य का तादात्म्य नेत्र से इसलिए भी स्थापित किया जा सकता है कि वह सभी आकृतियो और सुन्दर मूर्तियो के निर्माता है।[4] नेत्र, सूर्य से सम्बन्धित है, इसका आशय है कि मरने पर दृष्टि[5] शक्ति समाप्त हो जाती हे। सूर्य का प्रकाश ही नेत्रो को देखने की शक्ति प्रदान करता है। सिन्धु घाटी के निवासियो की यही धारणा थी।[6]

घोडा –

घोडा सूर्य का लाक्षणिक प्रतीक है। ऋग्वेद और परवर्ती वैदिक साहित्य मे इसके कई उल्लेखो से इसकी पुष्टि होती है। ऋग्वेद मे सूर्य का उल्लेख घोडे के रूप मे[7] हुआ है। याज्ञिक घोडा सूर्य का[8] प्रतिरूप है। ऋग्वेद मे सूर्य को घोडे का सभी कार्य प्रदत्त है।

---

1 शतपथ ब्राह्मण, XII 4 4,6

2 पुसाल्कर, डॉ० ए०डी० दी ग्लोरिज दैट वाज दी गुर्जर देस, अपेन्डिक्स–अ, दी डिवनिटिज इन दी इण्डस वैली, पृ० ८६

3 पाण्डेय, लालता प्रसाद (द्वारा उद्‌घृत) सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १६७१, पृ० ५

4 अग्रवाल, वासुदेव शरण, ललितकला, नम्बर ६ अक्टूबर, १६५६ 'विश्वकर्मा' पृ० ३४

5 अथर्ववेद, XVIII 2,7

6 पाण्डेय, लालता प्रसाद, सन वर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १६७१, पृ० ५

7 पाण्डेय, लालता प्रसाद, सन वर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १६७१, पृ० ११

8 ऋग्वेद I, १६३,२, सूरादश्वम् वसवो निर्तस्ट

वह, तीव्र धावक के रूप मे भी वर्णित है।[1] ऋग्वेद के एक अश मे[2] सूर्य के लिए वाजिन शब्द प्रयुक्त है जो उनकी तीव्र गति को सूचित करता है ऋग्वेद मे अश्व शब्द का कुछ उल्लेख है जिससे स्पष्ट है कि पूर्ववैदिक आर्य कभी–कभी सूर्य का उल्लेख घोडा से नही[3] बल्कि अश्व शब्द से करते थे।

शुक्ल यजुर्वेद मे सूर्य का उल्लेख घोडे के रूप मे मिलता है। अग्निकायनोत्सव[4] मे सवितृ की प्रार्थना की जाती थी। अथर्ववेद मे काले कान वाले सफेद घोडे का विशेष माहात्म्य[5] वर्णित है। शुक्ल यजुर्वेद मे कई मत्रो मे[6] घोडे का विस्तृत उल्लेख हे। इसी ग्रन्थ मे अन्य जगह[7] घोडे का समीकरण सूर्य के साथ किया गया है। सफेद घोडा[8] अरूणोदय का प्रतिनिध है। सूर्य के सात घोडे उनको हम तक ले[9] आते हे। यहॉ उनके घोडो की पूजा[10] की गयी है। ब्राह्मण ग्रन्थो मे सूर्य का तादात्म्य घोडे से[11] स्थापित किया गया है। यज्ञो के सस्थापन और पुर्नसस्थापन मे सूर्य के प्रतीक रूप मे[12] घोडा व्यवहृत है।

---

1 पाण्डेय, लालता प्रसाद, सन वर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १६७१, पृ० १२

2 ऋग्वेद (विल्सन द्वारा अनूदित) VI, 2,2

3 स्वामी सकरानन्द, दी ऋग्वैदिक कल्चर आफ दी प्री हिस्टोरिक इण्डस, पृ० ४, भूमिका

4 शुक्ल यजुर्वेद, XI,12

5 अथर्ववेद, V,17,15

6 शुक्ल यजुर्वेद, 25,24-47

7 शुक्ल यजुर्वेद XXIX, 12-25

8 ऋग्वेद, VII 77-3 श्वेतम् नयन्ति सुदृशिकमश्वम्

9 ऋग्वेद I 50 I 8 9, I 115 3

10 ऋग्वेद, V 45 9, VII 60 3, अथर्ववेद, XIII 3 18, तैत्तीरीय सहिता, V 6 4

11 शतपथ ब्राह्मण, VI.3 I 29, VI 3 310, VII.3 2 10, II.6 3 12, ऐतरेय ब्राह्मण, VI 35

12 कीथ, ए०बी०, दी रिलीजन एण्ड फिलोसफी आफ दी वेद एण्ड उपनिषस जिल्द-II पृ० 316

वैदिक यज्ञो मे घोडे की महत्वपूर्ण भूमिका थी। सूर्य की तुलना सफेद घोडे से ओर वर्णन सफेद घोडे के रूप मे किया गया है। इसलिए यज्ञो मे सूर्यदेव की अभिव्यक्ति हेतु घोडा प्रयुक्त किया जाता था।[1] पूर्व वैदिककाल मे सूर्योपासना हेतु विशेष रूप से अश्वमेघ यज्ञ का आयोजन किया जाता था। ऋग्वेद के दो सूक्तो मे अश्वमेघ यज्ञ का उल्लेख है। इनमे से एक सूक्त मे याज्ञिक विधि का वर्णन है जिसमे घोडे को एक खूँटे मे बॉधना, उसे स्नान कराना, सजाना, उसका बलिदान, मृतक घोडे के शरीर को कपडे से ढकना उसे टुकडो मे काटना और तत्पश्चात् मास के टुकडो का जले हुए बलि–भेट के रूप मे प्रदर्शन पूर्णत वर्णित है। इसी सूक्त मे घोडे की पूजा की गयी है और उसका तादात्म्य सूर्यदेव से स्थापित किया गया है[2]। तत्पश्चात् घोडे को सूर्य देव के पास भेजने के लिए बलिकर दिया जाता था जिसकी आवश्यकता सूर्य देव के रथ के लिए समझी जाती थी। इस यज्ञ का सम्पादन धन और सतति प्राप्त करने के लिए होता था।[3] अश्वमेघ यज्ञ मे घोडा स्वर्ग के स्वामी सूर्य के प्रतीक रूप मे व्यवह्रत है।[4] यह उल्लिखित है कि भ्रमण हेतु घोडा छोडने से पूर्व तीन दिनो तक[5] विभिन्न रूपो मे सवितृ को केक की भेट दी जाती थी। इसएिल अवश्मेघ यज्ञ मे व्यवह्रत घोडा सूर्य का प्रतीक था।[6]

---

1 पाण्डेय, लालता प्रसाद, (द्वारा उद्घृत) सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १६७१ पृ० ३३

2 वही० पृ० २७

3 वही० पृ० २८

4 ऐतरेय ब्राह्मण VIII 20

5 साख्यायन श्रौत सूत्र, XVI I 21

6 कीथ, ए०बी०,दी रिलीजन एण्ड फिलासफी आफ दी वेद एण्ड उपनिषद्स, जिल्द II, पृ० 345-47 'जर्नल आफ रायल एशियाटिक सोसायटी आफ ग्रेठ ब्रिटेन एण्ड आयरलैण्ड, लदन, 1916, पृ० 548, तैत्तिरीय सहिता, I पृ० CXXXIV ff

सोमयज्ञ के सोदचिन् (Sodacın) रूप पर जब सूर्यास्त के समय स्तोत्र पढा जाता है तो एक श्वेत या कृष्ण वर्ण का घोडा उपस्थित रहता है। घोडे का श्वेत रग उगते हुए और कृष्ण रग छिपते हुए सूर्य का सूचक है।[1] आग्रायण यष्टि मे कृष्ण अश्व वर्षा यत्र के रूप मे वर्णित है जिसे जल प्रदान करने[2] की अपनी सामर्थ्य के कारण सूर्य प्रतीक माना जाता है। इस प्रकार वैदिक आध्यात्मविद्या मे अश्व सूर्य का प्रतीक था।

अशोक के सारनाथ स्तभ पट्टिका पर घोडा प्रदर्शित है। बलॉख (Block)[3] का मानना है कि घोडे का अकन सूर्य का प्रतीक है। वहा सूर्य देव इन्द्र, शिव और दुर्गा आदि हिन्दू–देवताओ के साथ प्रदर्शित है जो क्रमश तीन अन्य पशुओ–हाथी, बैल और शेर के रूप मे अकित है।

बिहार मे पटना से प्राप्त एक पात्र–खण्ड पर[4] सूर्य चार घोडो द्वारा खीचे जा रहे अपने रथ के साथ चित्रित है। वह रथ पर अपने सारथि अरूण के साथ खडे है। सूर्य देव के हाथ मे एक सूच्याकार किनारदार बाण है। सूर्य देव का निचला भाग रथ से छिपा है।

---

1 तैत्तिरीय सहिता, VI 6 11 6

2 कीथ, ए०बी०, दी रिलीजन एण्ड फिलासफी आफ दी वेद एण्ड उपनिषदस, जिल्द–II पृ० ३२४

3 साहनी, दया राम, गाइड टू दी बुद्धिस्ट रूइन्स एट सारनाथ, पृ० ४१, रायचौधरी, हेमचन्द्र, इण्डियन कल्चर, जिल्द–१५,१९४८–४९, पृ० १७९–८३, स्मिथ, वी०ए०, हिस्ट्री आफ फाइन आर्ट इन इड़िया एण्ड सिलोन, १९११, पृ०, ५६ f

4 'जर्नल आफ दी इडियन सोसायटी आफ ओरियन्टल आर्ट' जिल्द III, नम्बर २, १९३५, पृ० १२५, भारतीय कला को बिहार की देन, द्वारा सिह, विन्धेश्वरी प्रसाद, पृ० ८२, फोटो नम्बर ४६

साड –

साड सूर्य का अन्य पशु प्रतीक[1] है। यह सूर्य की[2] उत्पादक क्षमता को सूचित करता है। हडप्पा सस्कृति मे[3] साड की पूजा प्रचलित थी। ऋग्वेद मे[4] सूर्य को साड कहा गया है। परवर्ती वैदिक साहित्य मे[5] भी सूर्य साड के रूप मे उल्लिखित है। अथर्ववेद मे[6] रोहित (सूर्य देव) साड के रूप मे वर्णित है। अथर्ववेद के कई कर्मकाण्डो मे सूर्य के प्रतीक[7] रूप मे साड व्यवहृत था। ब्राह्मण ग्रन्थो मे[8] लाल–सफेद साड सूर्य देव सवितृ के लिए शुल्क (वेतन) कहा गया है। यह इन्द्र आदि देवताओ का भी प्रतीक है।[9]

बकरी –

बकरी[10] भी सूर्य का पशु–प्रतीक है। सूर्यदेव पूषन विशेष रूप से बकरी से[11] सयुक्त है। यह (बकरी) अजा एक पाद[12] के रूप मे दैवीय स्वरूप की अभिव्यक्ति करती है।

---

1 श्रीवास्तव, विनोद चन्द्र, सन वर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १६७२ पृ० १५४

2 कुमार स्वमी,'जर्नल आफ अमेरिकन ओरियन्टल सोसायटी, जिल्द ६० पृ० ४७–६७, मैके, ई० जे० एस०, दी इण्डस सिविलीजेसन, लन्दन, १६३५, पृ० ३३६

3 मार्शल, जॉन, मोहनजोदडो एण्ड इण्डस सिविलीजेसन, जिल्द–I पृ० ७२

4 ऋग्वेद X 189 1

5 तैत्तिरीय सहिता, I 5 3 , शतपथ ब्राह्मण, II 1 4 29

6 अथर्ववेद, XIII 2 4 2

7 अथर्ववेद, IV38 IV2, V7, VI 31

8 शतपथ ब्राह्मण, V3 1 7

9 मैकडानल, ए०ए०, वैदिक मिथोलाजी, वाराणसी, १६६३, पृ० १५०

10 श्रीवास्तव, विनोदचन्द्र, सन वर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १६७२ पृ० १५५

11 मैकडानल, ए०ए०, वैदिक मिथोलाजी, पृ० ३५

12 वही० पृ० ७३

सौर–पक्षी –

पक्षी अपनी तीव्र गति के कारण सौर प्रतीक[1] माने जाते है। सैन्धव मुहरो और पात्रो पर[2] गरूड या बाज का अकन मिलता है। हडप्पा स्थलो से प्राप्त कुछ पात्रो और पात्र ठीकरो पर एक पक्षी का चित्र है जो या तो बाज या मोर प्रतीत होता है साथ ही तारो का अकन भी है। इससे ज्ञात होता है कि हडप्पा निवासी सूर्योपासना से परिचित थे।[3] डॉ० ए०डी० पुसाल्कर के अनुसार मिस्र और मेसोपोटामिया सम्यताओ की भॉति सिन्धु सम्यता मे भी बाज सूर्यदेवता[4] का प्रतीक था। हडप्पा स्थल से प्राप्त कुछ पात्र ठीकरो[5] के कधो जैसे उभरे भाग पर लहरदार बादलो मे[6] तारो और चिडियो का अकन है। यह तथ्य इस बात का सकेतक है कि पक्षी प्रतीक सूर्य से सम्बन्धित था। उसी स्थल से प्राप्त एक पात्र खण्ड पर मोर की आकृति[7] का अकन है। कब्रिस्तान एच० स्थल से प्राप्त एक पात्र पर कुछ तारो[8] की आकृतियो के साथ पॉच लौकिक मोर[9] रूक्षता से चित्रित है। वाट्स मोर को[10] सूर्य का प्रतीक मानते है।

1 श्रीवास्तव, विनोद चन्द्र, सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १६७२, पृ० १५५

2 मार्शल, सर जॉन, मोहन जोदडो एण्ड दी इण्डस सिविलाइजेशन, पृ० ३२४

3 पाण्डेय, लालता प्रसाद, सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १६७१ पृ० ५

4 पुसाल्कर, डॉ० डी०, दी ग्लोरिज दैट वाज दी गुर्जर देश, अपेन्डिक्स अ, दी डिवाइनिटिज इन दी इण्डस बैली, पृ० ८६

5 १०२२, और नम्बर १११५, राय बहादुर, दया राम साहनी, आर्कोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया एन्युअल रिपोर्टस १६२६–२७ इण्डस बैली पृ० १०८

6 वही० पृ० १०८

7 वही०, पृ० १०८

8 वाट्स, एम०एस०, आर्कोलाजिकल सर्वे आफ इडिया एन्युअल रिपोर्टस, १६२६–३० 'एक्सकवेसन एट हडप्पा' प्लेट XXIX चित्र १०

9 वही०, चित्र ६

10 वाट्स एम०एस०, प्रोसीडिंग्स आफ इण्डियन हिस्ट्री काग्रेस १६४४, जिल्द–७ 'प्रेसीडेन्टीअल अड्रेस' पृ० ३१

ऋग्वेद[1] और परवर्ती वैदिक–साहित्य[2] मे अनेक बार सूर्य का उल्लेख पक्षी रूप मे हुआ है। ऋग्वेद मे सौर पक्षी[3] का उल्लेख है। ऋग्वेद मे सूर्य की तुलना पक्षियो[4] से की गयी है। कभी यह पक्षी बाज कभी स्वान या गरूड है।[5] ऋग्वेद के एक सूक्ति मे श्येन या बाज पक्षी[6] का उल्लेख है। पुनश्च दूसरे सूक्त[7] के कुछ अश मे बाज या श्येन को प्रमुख देवता माना गया है। गरूड भारत का[8] श्रेष्ठ सौर पक्षी हे।

परवर्ती वैदिक ग्रन्थो मे[9] सुपर्ण गरूतमत को सूर्य का प्रतीक माना गया है। कुछ प्रसगो मे विशेष रूप से सुपर्णगरूतमत या सामान्य रूप से सुपर्ण उनसे सम्बद्ध है।[10] वैदिकोत्तर काल मे सुपर्णगरूतमत विष्णु के व्यक्तित्व का अभिन्न अग हो गया।[11] इस पक्षी की पहचान कठिन है। सभवत यह पौराणिक पक्षी था।

---

1 ऋग्वेद, IV 40 5, V 45 9, VII 63 5

2 अथर्ववेद VI 12 X 8 17, IV 20 3 XII 3 38

3 ऋग्वेद X-177-I, 2 V-47-3, VII-63-5, V-45-9

4 ऋग्वेद V 47 3, VII 60 5, X 177 1 2

5 श्रीवास्तव, विनोद चन्द्र, सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १६७२, पृ० १५५

6 ऋग्वेद IV 3 6

7 ऋग्वेद IV 3 5 4-7

8 गोड, जे०, एस्पेक्ट्स आफ अर्ली विष्णुइज्म, पृ० 96 ff

9 अथर्ववेद, XII 3 38; VI 12, VII 39, X 8 17; ऐतरेय ब्राह्मण, IV 7, XVIII 4; पचविश ब्राह्मण, XIII 10 14 शतपथ ब्राह्मण, IX 4 43, IX 2 3 18 शेन्डे, एन०जे०, दी रिलीजन एण्ड फिलोसफी आफ अथर्ववेद, पूना, १६५२ पृ० ३८५

10 मैकडोनल, ए०ए०, वैदिक मिथोलाजी, पृ० १५२

11 गोण्ड, जे०, एस्पेक्टस आफ अर्ली विष्णुइज्म, पृ० १०१
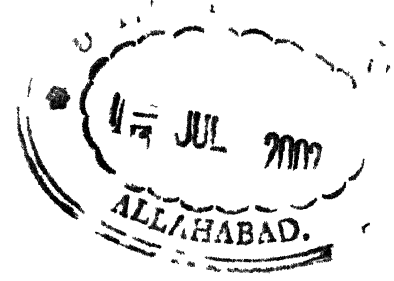
मथुरा सग्रहालय से प्राप्त चित्र सख्या १२२० मे ऊपर की ओर कोने मे गरूड पर आरूढ चार भुजाओ वाले विष्णु का अकन है।[1] देलमल (उत्तरीगुजरात) के लम्बोजी माता के मदिर से एक ऐसा चित्र पाया गया है जिसमे देवता गरूड पर आरूढ है।[2]

कई प्राचीन सभ्यताओ मे सौर पक्षी की धारणा का प्रमाण मिलता है। मिस्रवासी बाज को सूर्य देव का पवित्र पक्षी[3] मानते थे। बेबीलोनिया मे भी सूर्य को पक्षी से[4] सकेतित किया जाता था। यूनानी, सूर्य देव अपोलो की स्वान से सम्बन्धित करते थे।[5]

इस प्रकार अन्य प्राचीन सभ्यताओ की भॉति भारत मे भी सूर्य को पक्षी के रूप मे सकेतित किया जाता था।

'सिक्को पर सौर प्रतीक' –

सूर्य और उनके गुणो को वैदिक, महाकाव्यकालीन और पौराणिक वर्णनो के आलोक मे कुछ प्रतीको और डिजाइनो के रूप मे अकित किया जाता था। चक्र कमल, स्वस्तिक, किरणयुक्त मडल, छ भुजाओ वाला प्रतीक और वृषभीय प्रतीक[6] को सूर्य प्रतीक रूप मे स्वीकार किया गया। स्वस्तिक और चक्र सौर गति[7] की आदिम अवधारणा के

---

1 श्रीवास्तव, विनोद चन्द्र, सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १६७२, पृ० ३११

2 साकलिया, एच०डी०, आर्कोलाजी आफ गुजरात, पृ० १६३, बर्गेस, जे०, आर्किटेक्चरल एन्टीक्यूटीज आफ नार्थ गुजरात, पृ० ८८–८६, प्लेट LXIX,LXXI 7

3 ब्रेस्टेड, जे०एच०, डिवलपमेन्ट आफ रिलीजन एण्ड थाट इन एन्शियन्ट इजिप्ट, पृ० १०६

4 देखे, फर्नेल, ग्रीस एण्ड बेबीलोन, पृ० 55ff ,75ff

5 वही०

6 श्रीवास्तव, विनोदचन्द्र, सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १६७२, पृ० २७४

7 डुमन्ट, पी०ई०, अजा–एकपाद, जर्नल आफ अमेरिकन ओरियन्टल सोसायटी, जिल्द–५३, पृ० ३२६–३४

सूचक है। कमल सूर्य के उत्पादक स्वरूप[1] का द्योतक है। छ भुजाओ वाला प्रतीक छ ऋतुओ के निर्माता[2] के रूप मे उनकी सामर्थ्य का सकेतक है। वृषभ प्रतीक[3] सूर्य देव के लिए प्रयुक्त है।

<u>आहत सिक्को</u> पर सौर प्रतीक स्वस्तिक का अकन मिलता है ई०बी० हावेल के अनुसार "यह स्पष्ट रूप से पृथ्वी के चतुर्दिक सौर गति को सूचित करता है।"[4] दाये मुडा हुआ (卐)[5] स्वस्तिक सभवत जगत की सृष्टि और प्रतिरक्षण की सौर शक्ति को सूचित करता है। अवति से[6] प्राप्त कुछ सिक्को के अग्रभाग पर ऊपर की ओर[7] स्वस्तिक का अकन हुआ है। एरण–उज्जैन[8] से प्राप्त कुछ मुद्राओ के पृष्ठ भाग पर स्वस्तिक चिन्ह पाया गया है।

---

1 बनर्जी, जे०एन०, <u>डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी</u>, पृ० १०६, देखे–गोन्ड, जे०, <u>एस्पेक्टस ऑफ अर्ली वैष्णविज्म</u>

2 <u>विष्णुपुराण</u> II 8 4

3 बनर्जी, जे०एन०, <u>इण्डियन आर्ट</u>, १६२५, पृ० १६२, फब्री, सी० एल०, <u>जर्नल आफ रायल एशियाटिक सोसायटी आफ ग्रेट ब्रिटेन एण्ड आयरलैण्ड</u>, लदन, १६३५, पृ० ३१४

4 हावेल, ई०बी०, <u>दी आइडिएलस आफ इडियन आर्ट</u>, पृ० ६८

5 प्रसाद, दुर्गा, जर्नल एण्ड प्रोसीडिग्स आफ एशियाटिक सोसायटी आफ बगाल, पृ० ३२, देखे चित्र नम्बर १०५

6 श्रीवास्तव, विनोद चन्द्र, <u>दी रिलीजियस स्टडी आफ ए सिम्बल आन एन अवति क्वाइन्स</u>, मेमोरिज, नम्बर–२, बनारस हिन्दू यूनीवर्सीटी, पृ० १३३–३६

7 स्मिथ, बी०ए०, <u>इडियन म्युजियम कलकत्ता</u>, जिल्द I पृ० १५३, प्लेट XX-2, देखे–पृ० १५३ II टाइप, १३,१४,१५

8 साकलिया, एच०डी०, <u>थ्री न्यू स्पेसिमेन्स आफ रेयर वेराइटी आफ एरण उज्जैन क्वाइन्स</u>, जर्नल आफ दी न्यूमिस्मेटिक सोसाइटी आफ इडिया, जिल्द–II पृ० ८१–८२, कनिघम, ए०, <u>क्वाइन्स आफ एन्शियन्ट इडिया, १८६१,</u> पृ० ६८ प्लेट C-11

आहत सिक्को पर चक्र का अकन, एक और सौर प्रतीक[1] रूप मे मिलता है। भारत के प्रारभिक आहत सिक्को[2] के साथ–साथ प्रारम्भिक एकल प्रकार की रजत मुद्राओ पर[3] चक्र और उसके भेद अकित है। चक्र का अकन आद्यऐतिहासिक मुहरो और वर्तनो पर भी मिलता है। वैदिक, महाकाव्य तथा पौराणिक परम्परा मे चक्र को विशिष्ट स्थान दिया गया है। इसमे आठ तीलियॉ, एक पहिया और पहिये का एक धुरा है।[4] कनिंघम[5] और फोउचर[6] इसे धर्मचक्र मानते हैं। मगध के आहत सिक्को के शाही प्रकार मे सूर्य का प्रत्यक्ष[7] अकन है। इन साक्ष्यो के आलोक मे भारत मे प्रारम्भिक सिक्को पर अकित चक्र और उसके भेदो को सौर पथ से सम्बन्धित किया जा सकता है। कभी–कभी हमे षडर–चक्र या छ तीलियो वाले चक्र का अकन मिलता है, जिसे घूमते हुए सूर्य और उस सौर ऊर्जा का सूचक माना जा सकता है जो ऋतृ निर्माण हेतु उत्तरदायी है।

---

1 पाण्डेय, लालता प्रसाद, <u>सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया</u>, १६७१ पृ० ६४

2 एलन, जे०, कैटलाग आफ इडियन क्वाइन्स इन दी ब्रिटिश म्यूजियम, क्वाइन्स आफ एन्शियन्ट इडिया, भाग–१, क्लास–१, पृ० XV, 1-3, प्लेट, V चित्र–१

3 वही०, भाग II पृ० XXII स्मिथ, आई० एम०सी०, जिल्द–I पृ० १३२, दुर्गा प्रसाद, <u>क्लासीफिकेशन एण्ड सिगनीफिकेन्स आफ दी सिम्बल्स आन दी सिल्वर पचमार्कड क्वाइन्स आफ एन्शियन्ट इडिया</u>, जर्नल आफ दी ओरियन्टल इन्सटीच्यूट, बडोदा, (न्य सिरीज) जिल्द– XXX नम्बर३, न्यूमिस्मेटिक सप्लीमेन्ट नम्बर–XLV

4 पाण्डेय, लालता प्रसाद, <u>सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया</u>, १६७१, पृ० ६४

5 कनिधम, ए०, <u>क्वाइन्स आफ एन्शियन्ट इडिया</u>, प्लेट III,14,IV,13; V6 आदि

6 फोउचर, एम०, <u>बिग्निगस आफ बुद्धिस्ट आर्ट</u>, प्लेट I चित्र C-I

7 गुप्ता, परमेश्वरी लाल, <u>क्वाइन्स</u>, पृ० १८६–८७६

कुछ परवर्ती सिक्को पर भी चक्र का अकन मिलता है। वृष्णि–राजन्य[1] गण की रजत मुद्रा के पृष्ठ भाग पर एक विस्तृत चक्र दिखायी देता है। कुलूट प्रमुख वीरयशस (१००ई०) की मुद्राओ के अग्रभाग पर विन्दुओ के घेरे से घिरा हुआ चक्र[2] दिखायी देता है। सूर्योपासक वराहमिहिर[3] से कुलूट का घनिष्ठ सपर्क था। अक्यूट[4] (चौथी शती ई०) की ताम्रमुद्रा के पृष्ठ भाग पर चक्र के एक भेद का अकन है। सुदर्शन चक्र[5] को नियन्त्रित करने वाले परावासुदेव के चौबीस नामो मे से एक नाम अक्यूट है। लक्षशिला के[6] स्थानीय सिक्को पर चक्र अकित है। औदुम्बर[7] और अन्य कई शासको के सिक्को पर चक्र प्रतीक मिलता है। पाचालशासक सूर्यमित्र के सिक्को पर चक्र प्रतीक मिलता है। पाचालशासक सूर्य मित्र के सिक्को पर सूर्य देव एक गेद के रूप मे अकित हैं जिससे किरणे निकल रही है।[8]

---

1 कनिघम, ए०, क्वाइन्स आफ एन्शियन्ट इडिया, पृ० ७० IV १५

2 एलन, जे०, कैटलाग आफ इडियन क्वाइन्स इन दी ब्रिटीश म्यूजियम, क्वाइन्स आफ एन्शियन्ट इडिया, पृ० बनर्जी, जे० एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० १०६ बनर्जी, इसे सौर प्रतीक मानते है जबकि एलन धर्म चक्र मानते है।

3 मुद्राराक्षस (सपादक, काले) पृ० ३४ बृहत्सहिता, XIV-22,XIV 29

4 एलन, कैटलाग आफ इडियन क्वाइन्स इन दी ब्रिटिश म्यूजियम, क्वाइन्स आफ एन्शियन्ट इडिया, पृ० LXXIX, 117-19

5 बनर्जी, जे० एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० १०६ प्रागैतिहासिक काल की कुछ पाषाण गुफाओ के चित्रण मे चक्र प्रतीक दिखायी देता है। देखे–दत्त, ए०एन०, ए फ्यू प्री–हिस्टोरिक रिलीफ एण्ड दी राक पेटिग्स आव दी सिगपुर, रायगढ़ स्टेट (सेन्ट्रल प्राविन्स), इडिया, पृ० XV-XIX

6 क्वाइन्स आफ एन्शियन्ट इडिया, प्लेट १११, १३

7 क्वाइन्स आफ एन्शियन्ट इडिया, प्लेट IV 14,15

8 एलन, जे०, क्वाइन्स आफ एन्शियन्ट इडिया, पृ० CXVIII-CXIX

प्रारम्भिक और परवर्ती आहत सिक्को पर अकित कमल का अपक्व रूप सूर्य का सूचक[1] है। आहत मुद्राओ की श्रेणी मे[2] कुछ प्राचीनतम मुद्राओ और एरण की स्थानीय मुद्राओ पर (तृतीय शती ई०पू०)[3] प्राय कमल अकित है। सभवत वर्तमान उत्तर प्रदेश के दक्षिणी भाग से प्राप्त ताम्र आहत सिक्को के पृष्ठ भाग पर[4] अपक्व कमल अकित है जो एरण मुद्रा पर अकित आठ पुष्पदल वाले[5] कमल के सदृश है। मगध के परवर्ती आहत सिक्को[6] पर कमल का अकन मिलता है।

भारत मे प्राचीनकाल से[7] कमल पुष्प का सूर्य के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। हिन्दू धर्म की पौराणिक कथा मे इसकी महत्वपूर्ण भूमिका थी। परवर्ती साहित्य[8] तथा

---

1 बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृष्ठ १५३ देखे–एन्टीक्वायरी, जिल्द–५४,१९२५, पृ० १६२

2 प्रसाद दुर्गा क्लासीफिकेसन एण्ड सिगनीफिकेन्स आफ दी सिम्बल्स ऑन दी सिल्वर पचमार्कड क्वाइन्स आफ एन्शियन्ट इडिया, जर्नल आफ ओरियन्टल इन्स्टीच्यूट, बडोदा, प्लेट–I 2LA2,III 10 LC2, पृ० २३–१४५

3 एलन, कैटलाग आफ इडियन क्वाइन्स इन दी ब्रिटिश म्यूजियम, क्वाइन्स आफ एन्शियन्ट इडिया, पृ० १४१–४३ नम्बर ५,६,१६–२५

4 एलन, जे०, कैटलाग आफ दी क्वाइन्स आफ एन्शियन्ट इडिया (लदन),पृ० LXXVIII, देखे–जर्नल आफ रायल ऐशियाटिक सोसायटी (ग्रेट ब्रिटेन), वर्ष १९४१ द्वारा वाल्स, ई० एच०सी०.

5 एलन, जे०, वही० पृ० १४३

6 गुप्ता, परमेश्वरी लाल, क्वाइन्स, पृ० १८७, प्लेट–I २६

7 स्मिथ, विन्सेन्ट ए०, कैटलाग आफ क्वाइन्स इन दी इडियन म्यूजिसयम, जिल्द–I पृ० १३६ नम्बर १,१५ आदि, नम्बर २,३,५,६,५६,६६ आदि देखे फाउचर, एम०, बिग्निस आफ बुद्धिस्ट आर्ट, प्लेट I चित्र I-4,8

8 हेमाद्रि इन हिज चतुर्वर्ग चिन्तामणि (ब्रतखण्ड), भाग–दो पृ० ५२८–३८,५३६–३७ ff

पौराणिक साक्ष्यो से[1] सूर्य के साथ इसके सम्बन्ध की पुष्टि होती है। सौर प्रतिमाशास्त्र मे कमल का अकन मिलता है। ग्रन्थो मे, इसके अकन के सदर्भ मे[2] विस्तृत सूचनाएँ मिलती है जिससे इसकी महत्ता का आभास होता है। ज्ञात है कि कमल का खुलना और बन्द होना क्रमश सूर्य के उगने और छिपने के ही समय होता है।[3]

रश्मि युक्त बिम्ब सूर्य का सर्वाधिक प्रत्यक्ष चित्रण है। मगध से प्राप्त प्रारम्भिक और परवर्ती किस्म के आहत सिक्को पर[4] यह प्रतीक अकित है। आहत सिक्को पर रश्मि युक्त बिम्ब की चार किस्मे प्राप्त होती है।[5] इस प्रतीक वाले सिक्के सपूर्ण भारत मे पाये गये है। दक्षिण भारत[6] के (पाड्य) रजत आहत सिक्को पर सूर्य अपने प्राकृतिक रूप मे चित्रित हैं। काड की गोलाकार ढली कुछ ताम्र मुँद्राओ पर अकित ज्वालायुक्त बिम्ब सूर्य का सूचक[7] है। पश्चिमी क्षत्रयो[8] के सिक्को पर सूर्य–चन्द्रमा अपने प्राकृतिक रूप मे चित्रित है। हूण शासक तोरमाण के सिक्को पर[9] सूर्य अपने प्राकृतिक रूप मे चित्रित है। पुराणो मे भी कहा

---

1 मत्स्यपुराण, अध्याय–७४–८०, गोन्ड, जे०, एस्पेक्टस आफ अर्ली विष्णुइज्म, पृ० १०३–१०४ देखे–जिम्मर एच०, दी आर्ट आफ इडियन एशिया, जिल्द–I

2 विष्णुपुराण, III.45 1-8

3 हेस्टिग्स, इन्साइक्लोपीडिया आफ रिलीजन एण्ड इथिक्स, जिल्द,८ पृ० १४२–५

4 गुप्ता, परमेश्वरी लाल, क्वाइन्स प्लेट I और II चित्र, १५–२५

5 एलन, जे०, कैटलाग आफ इडियन क्वाइन्स इन दी ब्रिटिश म्यूजियम, क्वाइन्स आव एन्शियन्ट इडिया, पृष्ठ II प्लेट, XXXVII,XLII-7,VI-25

6 गुप्ता, परमेश्वरी लाल, क्वाइन्स, प्लेट XII पृ० ११६

7 एलन, जे०, वही०, प्लेट XCII, पृ० १४५

8 गुप्ता, परमेश्वरी लाल, क्वाइन्स, प्लेट XIII चित्र १३४

9 वही० प्लेट, XVI चित्र १६८

गया है कि प्राचीन काल मे सूर्य आकाश मे दिखने वाले गोले[1] के रूप मे उपासित थे। ब्राह्मणिक कर्मकाण्ड मे सुनहला बिम्ब या अग्नि–गोला सूर्य देव के प्रतीक[2] रूप मे प्रयुक्त है।

पचाल–मित्र शासको के सिक्को पर रश्मियुक्त बिम्ब अकित है। सूर्यमित्र और भानुमित्र के सिक्को पर प्राप्त अकनो से सौर पथ के इतिहास पर प्रकाश पडता है। भानुमित्र के अन्य सिक्को के पृ० भाग पर[3] नन्दिपाद प्रतीक से निकलती हुयी पॉच नोक वाली ज्वाला (लव) अकित है। इन सिक्को पर प्राप्त सौर बिम्ब और इनके प्रचलन कत्ताओ के नाम सौर पथ से सम्बन्धित[4] है। भानुमित्र के सिक्को पर अकित वृषभ प्रतीक सौर प्रतीक[5] है।

कुषाण शाषक बिमकड फिसस[6] की कुछ प्रारम्भिक मुद्राओ पर यज्ञ वेदी का अकन है। प्रारम्भिक कुषाण मुद्राओ[7] पर सूर्यदेव का कोई मानवीय चित्रण नही मिलता।

---

1 <u>साम्बपुराण</u>, २६ २ यथैतम् मडल व्योमनि स्थीयते सवितुस तदा।

2 <u>शतपथ ब्राह्मण</u>, VII 4 1 10 III 9 2 9 देखे हरदत्त, <u>आपस्तब धर्म सूत्र</u>, II 11 29

3 इण्डियन म्युजियम, कलकत्ता, I प्लेट XXII, नम्बर ४

4 मजुमदार, अर०सी०, (सपादक), <u>एज आफ इम्पीरियल यूनिटी</u>, पृ० १७२, सूर्य, भानु और मित्र सूर्य देव के नाम है।

5 बनर्जी, जे० एन०, <u>दी रिप्रजेन्टेशन आफ सूर्य इन ब्राह्मनिकल आर्ट इडियन एन्टीकयूअरी</u>, १६२५, पृ० १६२, फूटनोट ६, फब्री, सी०एल०, 'जर्नल आफ रायल एशियाटिक सोसायटी आफ ग्रेट ब्रिटेन एण्ड आयरलैण्ड, लदन, १६३२, पृ० ३१४

6 बनर्जी, जे० एन०, <u>डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी</u>, पृ० १६८

7 भारत मे मिश्र का प्राचीनतम मानवीय चित्रण कुषाण शाषक कनि क की मुद्राओ पर मिलता है। देखे –बनर्जी, जे० एन०, <u>डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी</u> पृ० १४०

बसाढ[1],भीटा,[2],सुनेट[3] तथा राजघाट[4] से प्राप्त गुप्तकालीन कुछ मुहरो पर सोरमण्डल (बिम्ब) के साथ यज्ञवेदी का अकन मिलता हे। अग्नि ओर सूर्य का सम्बन्ध सूर्योपासना की ईरानी परम्परा का सूचक है।[5] बनर्जी[6] भी इसे ईरानी प्रभाव स्वीकार करते हे।

---

1 आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इडिया एनुएल रिपोर्टस, १९१३–१४, पृ० ११८–१२०, १४०, प्लेट XLIX

2 वही०, १९११–१९१२, पृ० ५८, नम्बर ६८

3 जर्नल आफ रायल एसिआटिक सोसाइटी आफ ग्रेट ब्रिटेन एण्ड आयरलैण्ड, लदन १९०१ पृ० ६८

4 जर्नल आफ न्यूमिस्मेटिक सोसायटी आफ इडिया, XIX भाग II पृ० १७६–१७८

5 रैप्सन, स्पूनर और मार्शल ने इन मुहरो की खोज की और सहमत हुए कि यज्ञवेदी पर सौर मडल (बिम्ब) का चित्रण ईरानी प्रेरणा का परिणाम हे।

6 बनर्जी, जे० एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी पृ० १९८–९९

❀❀❀

अध्यांय – तीन

सूर्य मन्दिर

अध्याय–तीन

सूर्य मन्दिर

मन्दिर धार्मिक वास्तु है। वास्तुकला का मूर्तिकला से घनिष्ठ सम्बन्ध रहा हे।[1] मन्दिर जन समुदाय मे व्याप्त धार्मिक चेतना के नूतन रूप को अभिव्यक्ति करते हे।[2] पूजाघर होने के साथ–साथ प्राचीन भारतीय सास्कृतिक गतिविधियो के भी केन्द्र थे। देवता अथवा महापुरूष की उपासना के लिए मदिर का निर्माण, उनकी प्रतिमाओ के आवास के रूप मे हुआ होगा। मदिर के लिए देवायतन, देवालय, वेदस्थान देवगृह एव प्रासाद आदि शब्दो के प्रयोग से भी यही सकेत मिलता है। मन्दिर निर्माण के कार्य की तुलना यज्ञ के अनुष्ठान से की गयी है। जिस क्षेत्र मे मन्दिर निर्माण किया जाता था, वह स्थान एक तीर्थ बन जाता था। वहॉ पर आस–पास के निवासियो की धार्मिक गतिविधियॉ केन्द्रित हो जाती थी।

साहित्यिक साधनो के साथ–साथ पुरातात्विक साधना भी भारत मे सूर्य मन्दिरो के निर्माण एव अस्तित्व की सूचना देते है। वैदिक साहित्य मे मन्दिर का उल्लेख नही मिलता है। लेकिन गृह्यसूत्रो मे[3] मदिर सूचक शब्द मिलने प्रारभ हो जाते हैं जिससे सकेत मिलता हे कि हिन्दू समाज मे पॉचवी–चौथी शताब्दी ई०पू० मे मदिर निर्माण परम्परा विद्यमान थी।

भक्ति मदिर निर्माण परम्परा[4] को प्रेरित करने मे उत्तरदायी थी। सर्वप्रथम <u>साम्ब</u>, <u>भविष्य</u> और कई अन्य परवर्ती पुराणो मे[5] मूलस्थान मे (आधुनिक मुल्तान) साम्ब द्वारा

---

1 सरस्वती, एस०के०, <u>अर्ली स्कल्पचर आफ बगाल</u>, पेज ६

2 ब्राउन, पर्सी, <u>इण्डियन आर्किटेक्चर</u>, पेज ४

3 <u>साख्यायन गृहय सूत्र</u>, II.12.6 ,<u>खादिर गृहय सूत्र</u>, II 7 21; <u>पारस्कर गृहय सूत्र</u>, III 14 8

4 मजुमदार, आर०सी०, <u>एज आफ इम्पीरियल यूनिटी</u>, पेज ३६१

5 हजरा, आर०सी०, <u>स्टडीज इन दी उप पुराणस</u>, जिल्द I पेज ४०

स्थापित एक सूर्य मदिर का उल्लेख मिलता है। इस आख्यान मे मगो को पजाब मे चन्द्रभागा के तट पर मूलस्थान नामक एक शहर और एक सूर्य मदिर के निर्माण का श्रेय प्रदान किया गया है। इस ऐतिहासिक सूर्य मदिर का उल्लेख ह्वेनसाग[1] के अतिरिक्त अलबरूनी अलइद्रिसी अबू इश्क अल इश्तखरि और कई अन्य[2] लेखको ने किया हें ह्वेनसाग के अनुसार यह मूर्ति स्वर्ण निर्मित तथा बहुमूल्य पदार्थ से अलकृत थी।[3] पुराणो मे मगो द्वारा स्थापित कोणार्क और कालप्रिय[4] के अन्य सूर्य मदिरो[5] का उल्लेख हें गुप्तकाल तक मदिर निर्माण की परम्परा स्थापित हो चुकी थी किन्तु सूर्य मन्दिर निर्माण की परम्परा यूनानी-मिथ्रवाद और स्वदेशी परम्पराओ के सयुक्त प्रभाव के बहुत पहले ही लोगो के मध्य अस्तित्व मे आ चुकी थी।

सभवत मुल्तान के सूर्य मदिर का निर्माण शक–कुषाणकाल (द्वितीय शताब्दी ई०पू०–द्वितीय शताब्दी ई०) मे हुआ। लाला भगत स्तभ (द्वितीय शताब्दी ई०) लुप्तप्राय सूर्य मदिर[6] का एक हिस्सा प्रतीत होता हे। लक्षशिला मे जन्डिअल का मदिर (द्वितीय शताब्दी ई० पू०)[7] सूर्योपासना से सम्बन्धित था। फिलार्कस और प्लुटार्क के विवरण से ज्ञात है कि पोरस के राज्य मे[8] सूर्य मदिर विद्यमान थे। इन साक्ष्यो के आलोक मे कहा

---

1 बिल, सैमुअल, <u>बुद्धिस्ट रिकार्डस आफ दी वेस्टर्न वर्ड</u>, जिल्द II पेज, २७४–७५

2 इलियट एड डाउसन, <u>हिस्ट्री आफ इडिया एज टोल्ड वाई इट्स ओन हिस्टोरियन्स</u>, जिल्द I पृ० १८–७३

3 वाटर्स, टी०, फारेन एकाउण्टस <u>आन युवान–च्वाग्डस ट्रेवल्स इन इडिया</u>, जिल्द II लन्दन, १९०४–५, पृ० २५४

4 <u>भविष्य पुराण</u>, I १२६ १००

5 फ्लीट, जे०एफ०, <u>सी०आई०ओ०</u>,, जिल्द III पृ० ७०,८०,१६२,२१८

6 बनर्जी, जे०एन०, <u>डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी</u>, पृ० १०५–०६

7 ब्राऊन, पर्सी, <u>इण्डियन आर्किटेक्चर</u>, पृ० ३३

8 कनिघम, ए०, <u>दी क्वाइन्स आफ दी शक</u>, पृ० २२ ff

जा सकता है कि सूर्य मन्दिर निर्माण की परम्परा चोथी शताब्दी ई०पू० पुरानी हे। किन्तु गुप्तकाल[1] से सूर्य मदिरो के पुरातात्विक साक्ष्य प्राप्त होते हे।

तथ्यो के आलोक मे यह कहा जा सकता है कि सूर्य मन्दिरो का निर्माण पश्चिमी भारत के शकद्वीपी ब्राह्मणो ने प्रारभ किया। गुप्त और गुप्तोत्तर काल के अधिकाश सूर्य मदिर इसी क्षेत्र से सम्बन्धित है। गुप्तकाल के अभिलेखीय साक्ष्यो[2] से अनेक सूर्य मदिरो का अस्तित्व प्रमाणित होता है। शाहीगुप्त शासको के समय मे निर्मित बघेलखण्ड मे अश्रमक[3] नामक स्थान से एक सूर्य मदिर का प्रमाण मिलता है। कुमारगुप्त प्रथम के समय के मन्दसोर अभिलेख से ज्ञात होता है कि रेशम बुनने वालो के एक सघ ने ४३६ ई० मे दशपुर मे (मालवा, म०प्र०) एक सूर्य मदिर निर्मित करवाया और ४७३ई० मे उसका जीर्णोद्वार करवाया था।[4] इन्दोर ताम्रपत्र अभिलेख इदोर (बुलन्दशहर, उ०प्र०) के सूर्य मदिर मे निरन्तर दीप प्रज्जवलित करने हेत ४६५ ई० मे देवविष्णु के धर्मस्व का उल्लेख करता है।[5] ५११ ई० के एक अन्य अनुदान–पत्र मे एक सूर्यमदिर का उल्लेख हे।[6] मिहिरकुल के १५ वे वर्ष के ग्वालियर लेख से स्पष्ट हे कि मातृचेट नामक एक व्यक्ति ने गोपाद्रि (ग्वालियर राज्य) मे[7] एक पाषाण सूर्य मदिर निर्मित करवाया था। जीवितगुप्त द्वितीय[8] के देवबरणार्क अभिलेख मे एक सूर्य मदिर का उल्लेख है। दुर्भाग्यवश इनमे से आज कोई भी मन्दिर उपलब्ध नही हे।

---

1 दी स्ट्रगल फार इम्पायर, पृ० ६६६ फूटनोट ७७

2 फलीट, जे०एफ०, कार्पस इन्सक्रिप्सनम इण्डिकारम, जिल्द III पृ० ७०,८०,१६२,२१८

3 फलीट, जे०एफ०, कार्पस इन्सक्रिप्सनम इडिकारम,जिल्द III खोह कापर प्लेट इन्सक्रिप्सन आफ महाराज सर्वनाथ, पृ० १२६ f

4 श्रीवास्तव, वी०सी०, सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १९७२, पृ० ३२४

5 वही०

6 वही०

7 वही०

8 वही०

राष्ट्र कूट शासक गोविन्दराज ने कावी के सूर्य मदिर[1] (जयादित्य) को दान दिया था। पश्चिमी भारत में[2] मध्यकालीन (सातवी–बारहवी शताब्दी ई०) कई सूर्य मदिर–विसावाद, किन्दरखेद, मोढेरा, सोमनाथपत्तन, थान, सूत्रपादा, पस्थर, भीमनाथ और भग्वदर हैं। राजस्थान मे[3] धौलपुर का सूर्य मदिर (६वी शताब्दी ई०), ओसिआ का सूर्य मन्दिर (१०वी शताब्दी ई०), सिरोही का सूर्य मन्दिर और प्राचीन जोधपुर जिले मे स्थित भरतपुर का सूर्य मदिर विशेष उल्लेखनीय है। मध्य भारत मे पूर्वमध्यकालीन दो प्रसिद्ध सूर्य मन्दिर है–एक मनखेरा (जिला तिकमगढ) मे प्रतिहारो[4] द्वारा निर्मित किया गया था तथा दूसरा खजुराहो मे (चित्रगुप्त मन्दिर) चदेलो[5] ने बनवाया था। पूर्वीभारत मे भी अनेक सूर्य मन्दिर प्राप्त हुए है। उडीसा मे खिचिग्ड और कोणार्क[6] का सूर्य मन्दिर है। दक्षिण भारत मे बहुत कम सूर्य मन्दिर[7] पाये गये है। तजौर जिले से सूर्यनारकोयिल मे एक सूर्य मन्दिर मिला है। अभिलेखीय आधार पर इसका काल १०८०–१११८ ई० के मध्य निश्चित किया जाता है। इस समय कुलोत्तुग चोल देव का शासन था। इसलिए यह कुलोत्तुग चोल मार्तण्डालय[8] कहा जाता था। ऐहोल का दुर्गा मन्दिर[9] (मैसूर), लादखान मन्दिर[10] और पट्टदकल[11] का

---

1 मजुमदार, आ०सी० (सम्पादक), दी एज आफ इम्पीरियल कन्नौज, पृ० ३३२

2 कजेन्स, एच०, एन्शियन्ट टेम्पुल्स आफ ऐहोल, ए०एस०आई०ए०आर०, १६०७–०८

3 शर्मा, डी०, राजस्थान थ्रू दी एजेज, पृ० ३२७

4 देव, के०, एन्शियन्ट इडिया, १५, पृ० ४४

5 विद्या प्रकाश, खजुराहो, पृ० १३

6 मित्र, आर०एल०, एन्टीक्यूटीज आफ उडीसा, जिल्द– II पृ० १४८

7 शास्त्री, एच०के०, साउथ इडियन इमजेज आफ गाड्स एण्ड गाडेज, पृ० २३५

8 राव०,टी०ए०जी०, ऐलीमेन्ट्स आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० २६६–३००

9 कौसेन्स, एच०, एन्शियन्ट टेम्पल्स आफ ऐहोल, ए०एस०आई०ए०आर०, १६०७–०८

10 गुप्त, आर०एस०, दी आर्ट एण्ड आर्चिटेक्चर आफ ऐहोल, पृ० २२

11 मजुमदार, आर०सी० (सपादक), दी एज आफ इम्पीरियल कन्नौज, पृ० ३३३

पापनाथ मन्दिर सूर्योपासना से सम्बन्धित थे। दक्षिण भारत मे सूर्य मन्दिरो की दुर्लभता एव उत्तर भारत मे सूर्य मन्दिरो की बहुलता के आधार पर यह कहा जा सकता हे कि दक्षिण भारत मग परम्परा से अप्रभावित रहा। सूर्य मदिर निर्माण की परम्परा को आरभ एव लोकप्रिय बनाने मे मग वास्तविक रूप से उत्तरदायी रहे।

'कालप्रिय का सूर्य मन्दिर'–

गरूडपुराण के अनुसार कृष्ण पुत्र साम्ब कुष्ठ रोग से मुक्त होने के लिए मित्रवन मे तपस्या की थी। इसके पश्चात् उसने सूर्य देव की तीन मूर्ति स्थापित की एक उदयाचल मे, दूसरी यमुना के दक्षिण मे कालप्रिय मे और तीसरी मूलस्थान (मुल्तान)[1] मे। यह भी कहा गया है कि उन्हे सर्वाधिक लाभ उदयाचल के उगते हुए सूर्य, कालप्रिय के मध्यान्ह सूर्य और मूलस्थान के छिपते हुए सूर्य की पूजा से हुआ। इससे स्पष्ट है कि उदयाचल पूरब मे, कालप्रिय यमुना के दक्षिण मे, मध्य मे और मूलस्थान (मूल्तान) पश्चिम मे स्थित थे। पुराणो मे कालप्रिय के सूर्य मन्दिर का निर्माता मगो[2] को बताया गया है।

कालप्रिय का दो समीकरण है। कुछ लोग इसकी पहचान उ०प्र० के झॉसी जिले[3] मे स्थित यमुना के दक्षिणी किनारे पर अवस्थित आधुनिक कालपी से की है। अन्य लोग कालप्रिय का तादात्म्य उज्जैन[4] के महाकाल से करते है। वर्तमान मे न तो कालपी और न उज्जैन ही सूर्योपासना के केन्द्र है। अपने ज्ञान के वर्तमान स्तर पर पुराणो मे उल्लिखित द्वितीय सौर तीर्थ का समीकरण सुनिश्चित करना कठिन है।

---

1 गरूड पुराण अध्याय २३६ (सरस्वती सस्करण, कलकत्ता), देखे, गरूड पुराण, पृ० ५६ (द्वारा अनुवाद, एम०एन०दत्त)

2 भविष्य पुराण I,129,100

3 मिराशी, वी०वी०,फ्रेस लाइट आन दी आइडेन्टीफिकेसन आफ कालप्रियनाथ' अध्याय, लिटरेरी एण्ड हिस्टोरिकल स्टडीज इन इण्डोलाजी (देहली, १६७५) पृ० २१, अल्तेकर, ए०एस०, राष्ट्रकूटाज एण्ड देअर टाइम्स (पूना, १६६७ द्वितीय सस्करण) पृ० १०२

4 काणे, पी०वी० (सपादक), उत्तररामचरितम, प्रस्तावना पृ० २१

मुल्तान का सूर्य मन्दिर

मुल्तान सूर्यपूजा का एक महान केन्द्र था। भविष्य और साम्ब पुराण मे इस स्थान को आदिस्थान या मूल स्थान[1] कहा गया है। ऐतिहासिक तथ्यो के आलोक मे कहा जा सकता है कि पश्चिमोत्तर भारत मे सूर्य की मूर्ति–मन्दिर उपासना[2] का प्रचार मगो ने किया था। इसलिए यह स्थान सूर्यदेव का मूल स्थान माना जा सकता है। भविष्य, साम्ब एव वामनपुराण मे कृष्ण पुत्र साम्ब को चन्द्र भागा नदी के किनारे मूलस्थानपुर (अब मुल्तान) नामक स्थान पर एक बडे सूर्य मदिर के निर्माण का श्रेय प्रदान किया गया है। मन्दिर निर्माण एव उसमे स्थापित सूर्य प्रतिमा की वास्तविक तिथि अज्ञात है। सातवी शताब्दी ई० मे चीनी यात्री हेनसाग ने इस मन्दिर को देखा था। सूर्य मन्दिर और इसकी मूर्ति का उल्लेख अबूजइद, अलमसूदी, अल इश्तखरी, अल इद्रीसी[3] और अलबरूनी[4] जैसे यात्रियो ने किया है। इनके वर्णन से ऐसा प्रतीत होता है कि मुल्तान मे एक की अपेक्षा कई सूर्य मन्दिर थे।

ह्वेनसाग के समय मुल्तान सूर्योपासना का एक महान केन्द्र था। यहॉ देश के विभिन्न भागो से सूर्योपासक सूर्य को श्रद्धाजलि अर्पित करने आया करते थे। उसने मन्दिर और उसके परिवेश का बहुत ही सजीव वर्णन प्रस्तुत किया है। वह लिखता है, ''वहॉ (मूल स्थानपुर) एक शानदार और अलकृत सूर्य मन्दिर है। सूर्य की मूर्ति सुनहले पीले रग की और दुर्लभ रत्नजडित आभूषणो से युक्त है। उनके सम्मान मे स्त्रिया नृत्य–सगीत का आयोजन करती, दीप प्रज्जवलित करती और पुष्प आदि सुगन्धित पदार्थ चढाती थी। यह

1 भविष्य पुराण, ११२६, साम्ब पुराण, २४–२६, हजरा, आर०सी०, स्टडीज इन दी उपपुराणस, वाल्यू० पृ० ३६१

2 श्रीवास्तव, वी०सी०, सन वर्शिप इन एन्शियन्ट इण्डिया, पृ० २४१

3 इलियट एण्ड डाउसन, हिस्ट्री आफ इण्डिया एज टोल्ड वाय इटस ओन हिस्टोरियन्स, पृ० ११,२२३,२७

4 सखाऊ, अलबरूनी'ज इण्डिया, पृ० ११६

प्रथा अति प्राचीन काल से प्रचलित थी। इस मदिर के देव के लिए राजा और पचभारत के उच्चवर्गीय परिवार के लोग रत्नो और कीमती पत्थरो की भेट देते थे। इन्होने गरीब एव रोगग्रस्त व्यक्तियो के सेवार्थ एक धर्मशाला (कृपागृह) की स्थापना की जहॉ भोजन, पेय और औषधि की सुविधा थी। यहॉ विभिन्न देशो के लोग पूजा करने आते थे और कई हज़ार लोग हमेशा पूजा करते रहते थे। मदिर के चतुर्दिक खिले हुए कुञ्जो से युक्त तालाब है जिसे देखकर कोई भी व्यक्ति आश्चर्य चकित हुए बिना नही रह सकता है।[1]

इसके विषय मे अरब यात्रियो के विवरण से पर्याप्त जानकारी प्राप्त होती है। उनमे से एक लिखता है कि मुल्तान के हिन्दू सूर्य देवता के[2] सम्मान मे 'साम्बपुर यात्रा नामक उत्सव का आयोजन करते थे। उन्होने सूर्य देव की प्रतिमा का भिन्न–भिन्न प्रकार से वर्णन किया है। अल इश्तखरी के अनुसार, इसका सपूर्ण शरीर बकरी के लाल चमडे जैसे आवरण से ढका हुआ था। अल एद्रीसी के अनुसार, 'इस प्रतिमा की चार भुजाएँ थी, जिसका विकास बाद मे हुआ। यह (भुजाएँ) मूर्ति की एक विशेषता है।

ज्ञात होता है कि अलबरूनी के समय सूर्यदेव की सुनहली प्रतिमा को हटाकर एक काष्ठ प्रतिमा की स्थापना की गयी। अलबरूनी के अनुसार, ' मगो की एक प्रमुख मूर्ति मुल्तान के सूर्य देव की थी जो आदित्य कही जाती थी। यह काष्ठ निर्मित थी और लाल चमडे के आवरण से ढकी थी। इसकी दोनो आखो मे दो लाल माणिक्य थे।[3] वह मन्दिर और मूर्ति की तिथि का भी उल्लेख करता है। उसके अनुसार "ऐसा कहा जाता है कि इसका निर्माण सतयुग के अन्त मे हुआ था।"[4]

---

1 युवान च्वाग, बुद्धिस्ट रिकार्डस आफ दी वेस्टर्न वर्ड, ट्रेवल्स आफ ह्वेनसाग, जिल्द–IV सैम्युल बिल, पृ० ४६३

2 सखाऊ, अलबरूनी'ज इण्डिया, पृ० ११६

3 वही०, अध्याय–XI पृ० ११६

4 वही०

कनिघम[1] कहता है कि इस मदिर का निर्माण ईटो से हुआ था, अल् इश्तखरी[2] के अनुसार सूर्य देव का सिहासन ईटो और चूना–सुरखी (मसाला) से निर्मित था। प्रतिमा की चार भुजाऍ कालान्तर के विकास का परिणाम प्रतीत होती है। मन्दिर भी अत्यधिक अलकृत है जो परवर्ती गुप्तकाल की अन्य विशेषता है। इन तथ्यो के आलोक मे हम कह सकते है कि मन्दिर का निर्माण सभवत गुप्तकाल या परवर्ती गुप्तकाल मे किसी समय हुआ था।

सभवत सिन्ध के अरब विजेताओ के आक्रमण के परिणाम स्वरूप मन्दिर का पतन प्रारम्भ हो गया। जब वे शहर पर अधिकार कर लिए तो सूर्य मन्दिर और उसकी प्रतिमा पवित्र[3] न रह सकी। अलबरूनी के अनुसार,' जब मुहम्मद अबू अल् कासिम इब्न उमुनभिह मुल्तान को जीत लिया तो वह इस नगर की समृद्धि और सम्पन्नता के विषय मे पूछा और तब उसने निष्कर्ष लिकाला कि यह सूर्य प्रतिमा ही इसका कारण है। जिसके दर्शनार्थ देश के सभी भागो से तीर्थ–यात्री आया करते थे। इसलिए उसने मूर्ति को उसी जगह रहने देना सबसे उपयुक्त समझा लेकिन उपहास मे उसके गले मे गाय के मास का एक टुकडा लटका दिया। उसी स्थान पर एक मस्जिद निर्मित कर दी गयी।

जब कर्मतियो ने मुल्तान पर अधिकार कर लिया तो जलम इब्न शाल्बन ने मूर्ति को टुकडे–टुकडे कर दिया और उसके पुजारियो की हत्या कर दी।[4] सभव है कि पुजारियो ने नापाक प्रतिमा को किसी से बदलना उपयुक्त समझा हो जिससे विजेता की अर्थलिप्सा थोडा उत्तेजित हो गयी हो।

---

1 आर्कोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया रिपोर्ट (कनिघम) जिल्द– V पृ० १२६

2 इलियट एण्ड डाउसन, जिल्द–I (1867) पृ० २८

3 वही० I पृ० २७–८

4 सखाऊ, अलबरूनीज इण्डिया, अध्याय–XI पृ० ११६

यह दुर्भाग्य की बात है कि अब इस सूर्य–तीर्थ का कुछ भी मूर्त रूप अवशिष्ट नही है। लेकिन यह निश्चयत अतीत का एक महान् सूर्य–तीर्थ था जैसा कि चीनी यात्री ह्वेनसाग और अलबरूनी, अल इद्रीसी, अबू इश्क इश्तखरी आदि मुस्लिम विद्वानो[1] ने प्रमाणित किया है।

---

1 इलियट एण्ड डाउसन, दी हिस्ट्री आफ इण्डिया एज टोल्ड वाय इट्स ओन हिस्टोरियन्स, भाग I पृ १८–७३

देव (औरगाबाद, बिहार) का सूर्य मन्दिर –

देव का सूर्य मन्दिर विश्व विख्यात पवित्र तीर्थ गया से लगभग ८२ किमी० दूर दक्षिण पश्चिम मे स्थित है। यह मन्दिर देव नामक स्थान के मध्य मे स्थित है। मन्दिर का मुँह पश्चिम की ओर है, जबकि सूर्यकुण्ड पूरब मे स्थित है। मौखिक परम्परा से ज्ञात होता है कि मन्दिर का वास्तविक मुँह पूरब की ओर सूर्य कुण्ड के सामने था, लेकिन मध्यकाल मे धर्मान्ध मुसलमानो द्वारा यह पश्चिम की ओर घुमा दिया गया। मुस्लिम इसका प्रयोग मस्जिद के रूप मे करते थे। दूसरी परम्परा से ज्ञात होता है कि जब मुस्लिम मन्दिर मे स्थापित मूर्ति को ध्वस्त कर रहे थे तो मन्दिर का मुँह स्वत पश्चिम की ओर घूम गया। मन्दिर से सम्बन्धित श्रेष्ठ मानवीय शक्ति को देखकर वे मन्दिर की सपूर्ण सरचना को नष्ट करने का विचार त्याग दिये। जब हिन्दू राजा ने मुस्लिमो से मन्दिर को मुक्त किया तो उन्होने मन्दिर के विनष्ट हिस्से और मूर्ति की पुन मरम्मत की लेकिन पश्चिम से पूरब इसका मुँह परिवर्तित न कर सके।

मन्दिर की मुख्य इमारत प्रागण के मध्य मे स्थित है। यह समतल धरातल पर निर्मित है। मन्दिर का निचला भाग वर्गाकार कुर्सी के रूप मे है। मन्दिर की दीवार और कुर्सी कलात्मक रूप से नक्काशी की हुई वर्गाकार पत्थर की चौकोर पटियो से निर्मित है। मन्दिर की कुर्सी का क्षेत्रफल १४४ वर्गफीट है। कुर्सी की ऊँचाई ५ फीट है। मन्दिर की दीवाल की मोटाई २ फीट है। मन्दिर एकाश्मक प्रारूप मे निर्मित है। प्रत्येक पटिया लोहे की कीलो की सहायता से एक–दूसरे से जुडी है। वाह्य रूप से प्रत्येक पटिया की मूर्तियो और अन्य कला–कौशल मे कलात्मक रूप से नक्काशी की गई है। मन्दिर के सामने की दीवाल मे गणेश की एक मूर्ति देखी जा सकती है। मौखिक परम्परा के अनुसार मन्दिर की ऊँचाई ५२ पोर्स (१पोर्स=७फीट) थी लेकिन निरीक्षण से स्पप्ट है कि वर्तमान मन्दिर की ऊँचाई १०० फीट से अधिक नही है। ४०फीट की ऊँचाई के बाद मन्दिर की दीवाल सभी दिशाओ से एक दूसरे के समीप होनी प्रारभ हो जाती है। मन्दिर वास्तु की इस शैली के अनुसरण के परिणाम स्वरूप चोटी की सरचना गर्दन जैसी हो गई है। जिसके ऊपर कमलाकृति की एक गोल पटिया रखी गई है और पुन इस गोल पटिया पर एक स्वर्ण

स्तभ स्थापित किया गया है। मौखिक परम्परा के अनुसार स्वर्ण स्तभ का वजन ३७ मौण्ड है (१मौण्ड=४०किग्रा) लेकिन निरीक्षण से ज्ञात होता है कि इसका वजन १०० किग्रा से अधिक नही है। गर्दन से स्वर्णस्तभ तक सपूर्ण सरचना को शिखर का नाम दिया गया है। मन्दिर की आतरिक सरचना गुफा जैसी है और वाह्य रूप से शिखर का आकार पिरामिडाकार है। मन्दिर की वाह्य सरचना तीन भागो मे विभक्त है– कुर्सी, शरीर और शिखर।

देव का सूर्य मन्दिर मन्दिरवास्तु की नागर शैली का एक नमूना है। देव के सूर्य मन्दिर पर मन्दिर वास्तु की उडीसा शैली का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। अलकृत और कलात्मक रूप से नक्काशी किया हुआ गोलाकार शिखर, मन्दिर के मण्डप मे उमा, महेश, और गणेश की मूर्तियो की उपस्थिति, मन्दिर के सामने की दीवाल के मध्य मे गणेश की मूर्ति, मन्दिर की वाह्य दीवाल मे नरसिह की एक मूर्ति आदि देव के सूर्य मन्दिर पर उडीसा शैली के प्रभाव को स्पष्ट करते है।

सूर्य देव की प्रतिमा गर्भगृह मे स्थित है। गर्भगृह का द्वार मण्डप मे खुलता है। मण्डप, गर्भगृह से लगा हुआ एक अलग स्मारक है। मण्डप की ऊँचाई २५ फीट है। इसकी वाह्य सरचना मन्दिर की मुख्य इमारत जैसी है लेकिन पटियो से निर्मित दीवाल मे कलात्मक नक्काशी नही की गई है। मण्डप के भीतर चार पाषाण निर्मित स्तभ हे जिनकी ऊँचाई २१फीट है और प्रत्येक की मोटाई १५ फीट है। ये स्तभ भारी स्मारक है और मण्डप के छत को सहारा देते है। मण्डप अर्द्धमण्डप के नजदीक है। अद्धमण्डप के साथ मण्डप एक बडे हाल का निर्माण करता है, लेकिन उनके छत के ऊपर शिखर नहीं है। मण्डप के भीतर प्रवेश हेतु छोटे द्वार वाले दो छोटे कमरे हैं। उनके ऊपर दो स्तभो वाला हाल है। गर्भगृह और मण्डप दोनो का द्वारमार्ग उसी कतार और दिशा मे पश्चिम की ओर खुलता है।

देव का मन्दिर १६०० वर्ग फीट के क्षेत्र मे विस्तृत है। प्रागण चतुर्दिक ईटो और सीमेन्ट वाली चहरदीवारी से घिरा है। मौखिक परम्परा के अनुसार मन्दिर की चहरदीवारी देव राजाओ द्वारा निर्मित की गई थी जब वे १८वीं शती ई० मे देव में बसे। प्रागण की फर्स

मूलरूप से कच्ची थी लेकिन १९८३–८४ ई० मे औरगाबाद जिला प्रशासन द्वारा इसे ईटो और सीमेन्ट की सहायता से पक्का किया गया है। कैम्पस के दो द्वार है–एक पश्चिम की ओर और दूसरा चहरदीवारी के उत्तर मे। पहले प्रवेश द्वार से भक्तगण पूजा–पाठ और कर्मकाण्ड करने के लिए प्रागण मे प्रवेश करते हैं जबकि दूसरे द्वार से पूजा–पाठ सम्पादित कर बाहर आते है। प्रवेश द्वार से ठीक सटा हुआ पाषाण निर्मित एक कमरा है जहॉ मन्दिर के पुजारी और अन्य साधुगण शरण लेते है। इस कमरे से सलग्न एक पुराना कुँआ है जिसका जल पूजा और पीने के उद्देश्य से प्रयोग किया जाता है।

'वाराणसी का लोलार्क मन्दिर'

वाराणसी क्षेत्र मे प्रचलित सूर्योपासना के विषय मे स्कन्द पुराण से विस्तृत जानकारी प्राप्त होती है। स्कन्दपुराण के काशीखण्ड से ज्ञात होता है कि वाराणसी मे एक सूर्य मन्दिर था जिसका स्थानीय नाम लोलार्क[1] था। कहा गया है कि जिस स्थान पर काशी के दर्शन से सूर्य देव का मन 'लोल' हो गया, उस स्थान का नाम, लोलार्क' पड गया।

तस्यार्कस्य मनोलोल यदासीत्काशिदर्शन।

अतो लोलार्क इत्याख्या काश्यॉ जाता विवस्वत ।।४८।। काशीखण्ड ४६ ४८

सभव है कि यह कन्नौज[2] के गहडवाल शासक जयचन्द्र के एक अभिलेख मे[3] उल्लिखित लोलार्क सूर्य देव का मन्दिर हो।(११७७ई०) जयचन्द्र ने लोलार्क नामक सूर्य देव को कई गॉव दान मे दिया था। लोलार्क सूर्यदेव का स्थानीय नाम[4] था।

स्कन्द पुराण मे वाराणसी के राजा दिवोदास की एक रूचिकर कहानी मिलती है। ज्ञात होता है कि पौराणिक देवताओ मे उनका कोई विश्वास नही था, इसलिए उसने सूर्यदेव को छोडकर उन सभी[5] को अपने राज्य से बहिष्कृत कर दिया सूर्य देव उनके परिवार[6] के सरक्षक देवता थे। बहिष्कृत देवता, जिसमे शिव भी थे, मदराचल गये और वाराणसी की गद्दी से दिवोदास को हटाने का उपाय सोचा। योजना को कार्यान्वित करने के प्रयास मे सभी देवी–देवता एक के बाद एक वाराणसी गये और वही बस गये।

---

1 स्कन्द पुराण, काशीखण्ड, पृ० ११२

2 इपिग्राफिआ इडिका, जिल्द पृ० १२८

3 वही०, जिल्द– I पृ० १८६, इडियन एन्टीक्वीटी, जिल्द–XV पृ० ६

4 वही०, जिल्द–IV पृ० १२५

5 स्कन्द पुराण, काशी खण्ड, अध्याय ४२,पृ० ५५३–५६४

6 वही० अध्याय ४३ वर्स–१०

यह कहानी काशी मे प्रचलित धार्मिक दशा के सदर्भ मे बहुत–कुछ रूचिकर तथ्य प्रकाश मे लाती है। ऐसा प्रतीत होता है कि पहले यह पौराणिक धर्म का केन्द्र था। तत्पश्चात् बौद्धधर्म का विकास हुआ। दिवोदास बौद्धधर्मानुयायी प्रतीत होता है क्योकि वह एक महान् सन्यासी भी था जिसका बुद्ध की ही तरह धार्मिक कर्मकाण्डो मे कोई विश्वास नही था। बौद्ध साहित्य और अभिलेखो[1] से ज्ञात होता है कि बुद्ध सूर्य (आदित्यबन्धु) के सम्बन्धी थे। सभव है कि वाराणसी के आस–पास के क्षेत्रो मे बुद्ध के साथ–साथ सूर्योपासना भी प्रचलित रही हो जो कालान्तर मे वहॉ से पूर्णत समाप्त हो गई ओर मध्यकाल मे पौराणिक हिन्दू सम्प्रदायो द्वारा पुन स्थापित की गई।

वामन और कुछ अन्य पुराणो के अनुसार लोलार्क[2] नामक सूर्य देव असुरो[3] के साथ कुछ झगडो के कारण वरूणा और असी नदियो के मध्य पडे थे। अन्त मे, उन्होने अपने स्थान, जो वाराणसी मे भदैनी के निकट सभवत लोलार्क कुण्ड ही है, को पुन प्राप्त कर लिया। काशीखण्ड मे उल्लिखित हैं कि काशी मे दक्षिण दिशा मे असि सगम के समीप लोलार्क विद्यमान है।[4] इस स्थान पर वे अन्य पौराणिक देवताओ जैसे–भैरव, लिग, गणेश, शिव, गौरी और केशव[5] के साथ पूजित थे।

गाहडवालो ने इस स्थल पर एक बावडी बनवायी थी। जिसके नष्टप्राय हो जाने पर कूच बिहार स्टेट (पश्चिम बगाल) के वशजो ने १८वी शती के अन्त मे प्राचीन बावडी

---

1 देखे, एपेन्डिक्स, सी–१७

2 वामन पुराण, पृ० ७६–४१, देखे– श्रीमद्भगवत पुराण, अध्याय ७ वर्स–१८

3 वी०एस० अग्रवाल, दी वामन पुराण–ए स्टडी, पृ० ३४, (डा० अग्रवाल के अनुसार इस तथ्य से हर्ष के समय उत्तर भारत मे बौद्ध और पौराणिक धर्मो के बीच एक सघर्ष का पता चलता है।)

4 वी०एस० अग्रवाल, दी वामन पुराण–ए स्टडी, पृ० ३४

5 काशीखण्ड, ४६–६६

का जीर्णोद्धार[1] करवाया। इसके निर्माण मे चुनार का बलुआ प्रस्तर प्रयुक्त किया गया है। इस कुण्ड मे नीचे उतरने के लिए तीन दिशा मे सोपान निर्मित है एव पूर्वी दिशा मे कुँआ सरचित है जो गगा से जुडा है। इस कुएँ के द्वारा गगा से जल आता है जिससे कुण्ड मे पानी की पूर्ति होती हे।

कुण्ड के निचले हिस्से मे तीनो दिशा मे एक बराबर सोपान निर्मित है। परन्तु कुण्ड के ऊर्ध्व हिस्से से जुडे सोपानो की सख्या प्रत्येक दिशा मे अलग–अलग है यथा दक्षिण दिशा की ओर ३६ सोपानो की श्रखला है तो उत्तर दिशा मे ४० सोपान निर्मित है। पश्चिम दिशा मे ३८ सोपान नियोजित हैं। वस्तुत दक्षिण से उत्तर की ओर सोपान श्रृखलाओ मे दो–दो अतिरिक्त सोपानो की वृद्धि हुई है। कुण्ड मे नीचे उतरने के लिए दक्षिण एव पश्चिम दिशा मे दो मार्ग अवरूद्ध कर दिया गया है। कुण्ड के पूर्व दिशा मे सोपानो के साथ ऊँचाई मिलाती भित्ति आकारित है जिसका मध्य भाग अर्द्धवृत्ताकार रूप मे रिक्त है। इसी से कुँआ भी सलग्न है। कुण्ड की पूर्वी भित्ति के बायी ओर बगला एव सस्कृत भाषा मे अभिलेख खुदा है जो काले सगमरमर पर अकित है। इसमे सवत् १६ की तिथि अकित है जो इसके निर्माण काल का समय है। कुण्ड के पश्चिमी सोपान पक्ति के दाये कोने मे एक रथिका बिम्ब मे सूर्य का प्रतीक रूप मे अकन हुआ है जहॉ उन्हे गोलाकार स्वरूप मे दिखाया गया है। उत्तर पश्चिमी कोने मे पुजारियो द्वारा चतुर्भुज गणेश की मूर्ति रख दी गई है जो स्थानक मुद्रा मे अकुश व पुष्प लिये है।

कुण्ड के ऊपर दक्षिण दिशा मे जगती पर लोलार्केश्वर महादेव का मन्दिर प्रतिष्ठित है जो निसदेह सूर्य की आराधना से सम्बन्धित है। कथानुसार सूर्य शिव के आदेश पर ही काशी आये थे। मन्दिर का गर्भगृह चौकोर जगती पर निर्मित है। इसकी ऊँचाई १५ फुट है। प्रवेश द्वार उत्तर दिशा मे है एव अन्य तीनो दिशाओ मे वातायन है। गर्भगृह के अदर २०" व्यास वाला शिवलिग स्थापित[2] है जिसका योनिपट्ट पूर्वाभिमुख है।

---

1 अभिलेख, कुण्ड की पूर्वी भित्ति

2 अवध बिहारी खरे, वाराणसी के उत्तर मध्यकालीन देवालय स्थापत्य, अप्रकाशित शोधग्रथ, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, १६८८

इस शिवलिग को स्थानीय लोग स्वयभू मानते हे। मन्दिर की भित्तियॉ सादी हे एव ऊपर आमलक, चन्द्रिका एव दो कलश[1] है जिसके मध्य मे बीज पूरक सयोजित है। मन्दिर के चारो ओर प्रदक्षिणा के लिए खुली जगती की सरचना है। कूच बिहार स्टेट द्वारा इस मन्दिर का दायित्व बालाशकर पाण्डेय को सुपुर्द किया गया था।[2] उनके वशज ही इस मन्दिर एव कुण्ड की देखभाल करते है।

मन्दिर के वाम पार्श्व मे पीपल वृक्ष के नीचे सूर्य, हनुमान, काली एव नवग्रहो की मूर्तियॉ अलग–अलग रथिकाओ मे क्रमश उत्तर, पूर्व, दक्षिण एव पश्चिम दिशा मे स्थापित है जो मात्र दस वर्ष पुरानी हैं। सूर्य की मूर्ति चतुर्भुज एव सप्ताश्व रथ पर आसीन है जिसके उर्ध्वकरो मे सनालपद्म है।

1 अवध बिहारी खरे, वाराणसी के उत्तर मध्यकालीन देवालय स्थापत्य, अप्रकाशित शोधग्रथ, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, १९८८

2 बालाशकर पाण्डेय के वशज एव इस मन्दिर के पुजारी से लिए गये साक्षात्कार के आधार पर।

'कश्मीर का मार्तण्ड मदिर' –

कश्मीर मे सूर्यपूजा को अत्यधिक राजकीय सरक्षण प्राप्त था। गुप्तकाल मे यह देश के प्रमुख सूर्यपूजा केन्द्रो मे से एक था। राजतरगिणी से ज्ञात होता है कि रणादित्य राजा ने सिहरोत्सिक[1] गॉव मे मार्त्तण्डदेव या सूर्यदेव का एक मदिर निर्मित करवाया था। यह गॉव अनन्तनाग कस्बे[2] से ५ मील की दूरी पर स्थित था।

कुछ विद्वानो के अनुसार, कश्मीर के इतिहास मे रणादित्य एक पौराणिक राजा के रूप मे उपस्थित होता है। उनके अनुसार मार्त्तदण्ड मदिर का वास्तविक निर्माणकर्त्ता ललितादित्य[3] (७२४–६० ई०) था। इसने लगभग ८वी शताब्दी के मध्य इसे निर्मित करवाया था। परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि यह मदिर ललितादित्य के समय से कुछ पहले का है। वास्तुगत विशेषताओ की दृष्टि से मार्तण्ड मदिर गुप्तकालीन प्रतीत होता है। मदिर के 'अन्तराल' के सामने की दीवार पर गगा और यमुना नदियो की मूर्तियॉ उत्कीर्ण हैं जिन्हे उनके अलग–अलग वाहनो के साथ चित्रित किया गया है। ये मूर्तियॉ गुप्तकाल की प्रमुख विशेषताएॅ है।[4] दूसरी ओर विक्रमादित्य, जिसके पश्चात् रणादित्य ने शासन किया, की पहचान सामान्य रूप से चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य[5] से की गई है। अत हम मदिर निर्माण की वास्तविक तिथि ५०० ई० के मध्य मान सकते है।[6]

---

1 राजतरगिणी, III, और ४६७

2 रामाचन्द्र काक, एन्शियन्ट मोनुमेन्टस आफ कश्मीर, पृ० १३१

3 एस०सी०राय, जर्नल आफ बिहार रिसर्च सोसायटी, जिल्द–४१, 'रिलीजन इन एन्शियन्ट कश्मीर' पृ० १६४–१६५

4 आर्कोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया एनुयल रिपोर्टस (१९१५–१६), पृ० ६२–६३

5 पर्सी, ब्राउन, इण्डियन आर्क्टिक्चर जिल्द–I पृ० ५५

6 जर्नल आफ दी ओरियन्टल इन्स्टीटयूट, बडोदा भाग–II ,जिल्द–१७, (वर्ष १९४८) पृ० २६१

मार्तण्ड मदिर पौराणिक हिन्दू परम्परा का विशाल मदिर है। यह वस्तुत कश्मीर[1] के सभी परवर्ती पौराणिक मन्दिरो के लिए प्रतिमान ओर आदर्श स्वरूप है। इसे कश्मीरी शैली[2] का अनुपम उदाहरण माना जा सकता है। यह एक ऊँचे पठार पर अवस्थित हे जहॉ से घाटी का अतिविस्तृत दृश्य देखा जा सकता हे। इसके पीछे स्वर्ग को स्पर्श करने वाली पर्वत श्रेणियॉ है तथा सामने प्रकाश एव हरियाली युक्त[3] बडी घाटी है। सूर्य मदिर के लिए इस स्थान से बेहतर दूसरा कोई स्थान नही है क्योकि यहॉ स्वर्ग, पृथ्वी और जल के तत्वो का उसी प्रकार मिलन हुआ है जैसे कोणार्क मे। पर्सी ब्राउन ने मार्तण्ड मन्दिर का बहुत ही यथार्थचित्रण प्रस्तुत किया है। उनके अनुसार, यह मदिर एक विस्तृत प्रागण के अन्तगर्त निर्मित है। गर्भगृह के चारो ओर जालीदार स्तभो वाला बरामदा तथा पक्तिबद्ध कक्ष है। इसमे प्रवेश हेतु एक शानदार प्रवेश द्वार है। दक्षिण पूर्व एशिया[4] के कुछ पौराणिक मदिरो मे भी प्रभावशाली प्रवेश द्वार देखे जा सकते है। इसके उत्कीर्ण स्तभो और भित्तियो पर उत्कीर्ण मूर्तियॉ बगाल के पाल शासको के युग की कला से प्रभावित जान पडती है। इसके स्तभ–दीवार का ऊपरी तल विदेशी प्रभाव को दर्शाता है। स्तभो पर हलेनैस्टिक प्रभाव परिलक्षित है। तक्षशिला के जन्डियल मदिर पर भी हेलेनिस्टिक प्रभाव[5] दृष्टिगोचर होता है। मुख्य इमारत के समक्ष इसके प्रत्येक पार्श्वभाग मे दो कमरो वाला एक अलग मण्डप है। इसका अतिरिक्त भाग —>

---

1 ब्राउन पर्सी, इण्डियन आर्किटेक्चर, पृ० १५८, प्लेट–CXXXVI चित्र–I नरवाने, वी०सी०, मार्तण्ड, दी क्राउनिग फेज आफ एन्शियन्ट कश्मीर आर्किटेक्चर, काश्मीर, जिल्द V न०–५ १६५५, पृ० १०७–६

2 एच०आई०ई०ए०, जिल्द–I पृ० २५६

3 रोनाल्ड, बी०, दी आर्ट एण्ड आर्किटेक्चर आफ इण्डिया, पृ० १११

4 मजुमदार, आर०सी०, हिन्दू कालोनीज इन दी फार ईस्ट, पृ० १७२–७३, २१४

5 ब्राउन, पर्सी, इण्डियन आर्किटेक्चर, पृ० ३३–३४

सौर सम्प्रदाय के अनुयायियो के निवास ओर आनुष्ठानिक क्रिया कलाप से सम्बन्धित प्रतीत होते है। जिस कौशलपूर्ण तरीके से इसका निर्माण किया गया वह उसके अनुपम सौन्दर्य और वास्तुगत[1] विशेषताओ को परिलक्षित करता है। फर्गुसन के अनुसार[2] इसकी छत लकडी की थी। छत पिरामिडाकार है तथा छत का भीतरी तल लालटेन का आकार लिये हुए है। यह आकार एक दूसरे को काटते हुए वर्गो[3] के कारण है। अपने प्रभावशाली विशालता के बावजूद यह औसत आकार का है।[4]

चौरस स्तर पर निर्मित यह मदिर आयताकार हे। इसकी लम्बाई ६२ फीट और चौडाई ३५ फीट है। मण्डप का बढा हुआ पार्श्व भाग सामने की ओर ५६ फीट चौडा हे। मुख्य मदिर का भीतरी भाग १८.५ फीट लम्बा और १४ फीट चौडा है। सपूर्ण मुख्य इमारत की ऊँचाई लगभग ७० फीट है। इसका आयताकार प्रागण २२० फीट लम्बा और १४२ फीट चौडा है। इसमे लगे हुए स्तभो की सख्या ८४ है। प्रत्येक स्तभ ६.५ फीट ऊँचा हे और प्रत्येक स्तम्भो के बीच का अन्तराल 6¼ फीट है।

इस प्रकार यह मदिर छोटे आकार का है फिर भी विशालता का आभास होता हे। यद्यपि अब यह ध्वस्त अवस्था मे है फिर भी अपने प्रभावशाली[5] आकार ओर स्थिति के कारण ७५०–१२०० ई० के मध्य निर्मित सभी कश्मीरी मदिरो मे महत्वपूर्ण है।

---

1 ब्राउन, पर्सी, इण्डियन आर्किटक्चर, पृ० १५८

2 एच०आई०ई०ए०, जिल्द I, पृ० २६१

3 दी स्ट्रगल फार इम्पायर, पृ० ६३५

4 स्मिथ, वी०ए०, हिस्ट्री आफ फाइन आर्ट इन इडिया एण्ड सिलोन, पृ० ४५

5 बाशम, ए०एल०, दी बान्डर दैट वाज इण्डिया, पृ० ३५५

मोढेरा का सूर्य मन्दिर –

मोढेरा[1] मे चालुक्यकालीन कई सूर्य मदिर है। इस सूर्य मन्दिर का निर्माण ११वी शताब्दी ई०[2] मे हुआ था। सूर्य मन्दिर पर उत्कीर्ण लेख की तिथि (वि०स० १०८३–१०२६–२७ई०) तथा शैलीगत विशेषताओ के आधार पर इस मन्दिर को सोलकी शासक भीम प्रथम (१०२४–६६ई०) के काल मे निर्मित माना गया है।[3]

सूर्य–मन्दिर एक जगती पर स्थित है। भूरे रग के बलुए पत्थर से निर्मित पूर्वाभिमुख मन्दिर तल योजना मे प्रदक्षिणायुक्त मूल प्रसाद (या गर्भगृह), मुखालिन्द (अन्तराल), गूढमण्डप एव मुख चतुष्की (या अर्धमण्डप) से युक्त है। एक पक्ति मे बने ये सभी भाग जगती के १६ १० मीटर लम्बे और ११ ६० मी० चौडे भाग पर स्थित है। गूढमण्डप से कुछ हटकर अत्यन्त अलकृत एव विभिन्न आकार की मूर्तियो से परिवृत्त सभामण्डप (या रगमण्डप) है। सभामण्डप के पूर्व मे एक विशाल कुण्ड है।[4] सभामण्डलप से कुण्ड तक पहुचने के लिए सीढिया बनी है। इन्ही सीढियो पर स्थान–स्थान पर विभिन्न देवी–देवताओ से सम्बन्धित देवकुलिकाओ का अद्भूत सयोजन हुआ है। सभामण्डप एव सूर्य कुण्ड के मध्य उत्तर–पूर्व मे स्थित एक तोरण इस बात का प्रमाण है कि सूर्यकुण्ड से आते समय प्रवेश द्वार के रूप मे दोनो ओर तोरण भी स्थित थे।

मन्दिर का निर्माण कुछ इस प्रकार हुआ है कि प्रात कालीन सूर्य की किरणे सभामण्डप से होती हुई सीधी मूल प्रसाद मे प्रवेश करती है। यह मन्दिर अलकरण–शिल्प, सयोजना एव उनकी विषयगत विविधता की दृष्टि से विशेषत उल्लेखनीय है। स्थापत्य एव मूर्तियो का सामन्जस्यपूर्ण उकेरन भी सुन्दर बन पडा है।

---

1 भरूचा, एस०, दी सन टेम्पिल एट मोढेरा, मार्ग, जिल्द–V,न०१, ब्राउन,पी०, इण्डियन आर्किटेक्चर, प्लेट्स,CV,CVI,CVII

2 साकलिया, एच०डी०, आर्केलाजी आफ उडीसा, पृ० ८४

3 ब्राउन, पर्सी, इण्डियन आर्किटेक्चर (बुद्धिस्ट एण्ड हिन्दू) पृ० १२०

4 कृष्णदेव, टेम्पिल्स आफ नार्थ इडिया, पृ० ४५–४६

गर्भगृह चौकोर आकार वाला है जिसका बाहरी क्षेत्र 5 22x5 22 मी० और भीतरी क्षेत्र 3 36x3 39 मी० नीचे की ओर स्थित है। गर्भगृह के चारो ओर 1 15 मी० चोडा प्रदक्षिणापथ है जिसमे प्रकाश के लिए तीन बातायन बने है। ये वातायन गहराई (2 25 M) मे सभामण्डय मे बने वातायनो के समान है किन्तु इनकी चोडाई 2 82 मी० हे। इन वातायनो मे पाट्टिका स्वरूप मे भित्ति से लगे चार चौकोर स्तभ अन्दर और बाहर दोनो ओर बने है। प्रदक्षिणा के वितान पर पुष्पालकृत पाषाण खण्ड सज्जित है।

गर्भगृह के अन्दर की भित्तियो पर कोई अलकरण नही है। वर्तमान मे ये भित्तिया गर्भगृह की मूल भित्तिया नही जान पडती है। गर्भगृह की पश्चिमी भित्ति पर देवनागरी लिपि मे एक लेख उत्कीर्ण है जिसमे विक्रम सवत १०८३ (१०२६–२७ ई०) तिथि अकित है। वर्तमान मे गर्भगृह का वितान और शिखर शेष नही हे। गर्भगृह ओर इसके भूमिगृह का मध्यभाग भी नष्टप्राय है। भूमिगृह मे प्रवेश की क्या व्यवस्था थी, यह स्पष्ट नही हे। वर्तमान मे न तो सोपान के कोई अवशेष हे और न ही कोई प्रवेश द्वार।

गर्भगृह एव गूढमण्डप तो सयुक्त है किन्तु सभामण्डप कुछ दूर है जो एक सकुचित मार्ग से जुडा है। मन्दिर की सम्पूर्ण लम्बाई १४५ फीट है। वाह्यत तीनो भाग पृथक प्रतीत होते है, किन्तु इन्हे इतनी कुशलता से सलग्न किया गया हे कि सभी एक दूसरे के आवश्यक अग प्रतीत होते है।

मोढेरा मन्दिर का सभामण्डप सौन्दर्य एव वास्तु की दृष्टि से अत्यन्त ही स्तुत्य है। इसमे चारो दिशाओ मे एक–एक प्रवेश द्वार अलकृत स्तम्भो पर तोरण द्वार बने है। अन्य भाग ऊर्ध्वाधर पट्टो से अलकृत है। किनारे–किनारे लघु स्तम्भ है जिनके शीर्ष से तोरण बने है। इन स्तम्भो के सहारे एक नीची दीवार है जिससे कक्षासनों का निर्माण किया गया है। लघु स्तभो के ऊपर छज्जे बने है जिस पर छत आधृत है। दो–दो स्तम्भ पक्तियॉ एक दूसरे को धन (+) चिन्ह की भॉति काटती है जिन पर सभामण्डप की छत है। धनाकार स्तम्भ पक्तियो एव गुम्बद का अन्तः तथा वाह्य भाग मूर्तियों से परिपूर्ण है किन्तु इन मूर्तियो को इतने सुनियोजित ढग से अलकृत किया गया है कि कहीं से भी इनका आधिक्य अतिशयता नही उत्पन्न करता।

गर्भगृह मे नीचे भूमिगृह मे ११८ मी० चौडा और ४४ सेमी ऊँचा कुछ गहरा स्थान बना है। सभवत इसी मे मन्दिर की मूल सूर्य प्रतिमा प्रतिष्ठित थी। वर्तमान मे सूर्यमूर्ति की पीठिका की केवल सात अश्व आकृतियॉ ही सुरक्षित है। भूमिगृह मे मूलमूर्ति के स्थित होने का क्या कारण था स्पष्ट नही है। सभव है कि मुस्लिम मूर्ति विनाशको से मूल प्रतिमा को सुरक्षित रखने के लिए ही उसे भूमिगृह मे छिपा दिया गया हो और गर्भगृह मे मूलमूर्ति के स्थान पर दूसरी मूर्ति रख दी गई हो।[1]

मन्दिर के आगिक सन्तुलन से यह आभासित होता हे कि किसी अत्यन्त कुशल बुद्धि द्वारा इस मन्दिर की योजना निर्धारित की गई होगी तथा किसी प्रबुद्ध एव कुशल कलाकार द्वारा इसे सम्पादित किया गया होगा। मोढेरा का सूर्य मन्दिर अपनी बनावट मे सामजस्य और सौन्दर्य के कारण आगन्तुको को आकर्षित करता है मानो यह अखण्ड और पूर्ण सरचना सजीव प्रेरणा शक्ति और आध्यात्मिक अनुग्रह[2] का जीता जागता मिशाल है।

---

1 बर्जेस, जे० एव एच० कजेन्स, दी आर्किटेक्चुरल ऐन्टिक्विटीज आफ नादर्न गुजरात, पृ० ७५

2 ब्राउन, पर्सी, इण्डियन आर्किटेक्चर, पृ० १२०

'कोणार्क का सूर्य मन्दिर'

कोणार्क न केवल उडीसा बल्कि समस्त पूर्वी भारत मे सूर्योपासना का महानतम केन्द्र था। यह पुरी से लगभग १६ मील दूर उत्तर–पश्चिम मे स्थित हे। यह मन्दिर सूर्योपासना का उत्तम स्मारक[1] है। अपनी वास्तुगत ओर मूर्तिगत सुन्दरता के कारण यह आज तक ध्यानाकर्षण का केन्द्र रहा है। इसे वास्तुकला की पूर्वीशैली की शानदार उपलब्धि[2] स्वीकार किया जा सकता है। यह 'मध्यकालीन भारतीय कला के प्रमुख स्मारको मे से एक है।[3] यह सूर्य मन्दिर अपने कल्पनामय चित्रो के कारण प्रसिद्ध हे। इसमे वास्तुकला और मूर्तिकला का सुन्दर समन्वय हुआ हैं इसमे विभिन्न प्रकार की सुन्दर नक्काशी एव मूर्तियो का अकन मिलता है।

साम्ब पुराण[4] के परवर्ती अध्यायो मे कृष्ण के पुत्र साम्ब को कोणार्क के सूर्य मन्दिर का निर्माता कहा गया है। इतिहास मे पूर्वी गग राजवश के शासक नरसिह प्रथम[5] को इस

---

1 ब्राउन पर्सी, इण्डियन आर्किटेक्चर पृ० १२०

2 वही० पृ० १०६

3 कुमार स्वामी, ए०के०, फोर डेज इन उडीसा, मार्डन रिव्यू, अप्रैल १६११ पृ० ३४५–५०१

4 अध्याय, ४२–४३, हजरा, स्टडीज, पृ० १०५–१०८, ब्रह्मपुराण, पृ० २८–३२

5 स्टर्लिग, ए, एन एकाउण्ट, स्टेटीस्टीकल एण्ड हिस्टोरिकल आफ उडीसा प्रापर, कोणार्क, १८२५, पृ ठ १६४–७६, हण्टर, डब्लूडब्लू, ए हिस्ट्री आफ उडीसा, पृ० १२६, कुमार स्वामी, ए०के०, एम० आर०, अप्रैल १६११ पृ० ३४५–५०, क्रमरिस्छ, एस०, इण्डियन स्कल्पचर, पृ० ११३–१४, ब्राउन, पर्सी, इण्डियन आर्किटेक्चर पृ० १०६ सरस्वती, एस० के०, दी स्ट्रगल फार इम्पायर, पृ० ५५१ रोनाल्ड, बी, दी आर्ट आर्किटेक्चर आफ इण्डिया, पृ० १६१, गागुली, ओ०सी० और चौधरी, एस०, कोणार्क, पृ० १–२, एबर्सोल, आर०, ब्लैक पैगोडा, पृ० ६४

महत्वपूर्ण सूर्य मन्दिर के निर्माण का श्रेय प्रदान किया गया है। नरसिह द्वितीय के ताम्रपत्र अभिलेख (शक, १२५५) मे भी कहा गया हे कि राजा नरसिह प्रथम ने कोनकन (आधुनिक कोणार्क)[1] मे भगवान सूर्य का मन्दिर निर्मित करवाया था।

सामान्यत यह स्वीकार किया जाता है कि मन्दिर का निर्माण लगभग १३वी शताब्दी ई०[2] के मध्य हुआ, लेकिन फर्गुसन[3] महोदय, अबुलफजल के कथन ओर शेलीगत विशेषताओ के आधार पर इस स्मारक का समय ६वी शताब्दी मानते है। फर्गुसन महोदय का मत इसलिए स्वीकार नही किया जा सकता क्योकि अबुलफजल का यह कथन कि इस मन्दिर का निर्माण नरसिह प्रथम के काल मे और उसके समय (१६वी शताब्दी) से ७३० वर्ष पहले, हुआ था मे विरोधाभास है। स्पष्टत ३३० के स्थान पर ७३० रखना आलेखन भूल प्रतीत होता है। दूसरे फर्गुसन का यह कथन कि पुरी के मन्दिर जैसी तुच्छ कला के निर्माण के पश्चात् कोणार्क जैसी सौन्दर्य शैली की पुनरावृत्ति सभव नही है, किसी ठोस प्रमाण पर आधारित नही है। शैली मे सुधार के अक्सर सदैव हैं। यदि कोणार्क के मन्दिर मे पुरी के मन्दिरो की अपेक्षा सुधार किया गया है अथवा कोणार्क का मन्दिर पुरी के मन्दिरो का परिष्कार है तो इसे अपेक्षाकृत प्राचीन मानने का कोई आधार नही है। कोणार्क से सम्बन्धित साम्ब कथानक का उल्लेख पौराणिक साहित्य के ऐसे भाग मे आता है जिसकी तिथि १२५०–१५०० ई० के मध्य निर्धारित की जाती है। इसलिए, यह स्पष्ट है कि कोणार्क का सूर्य मन्दिर, जो मगो के प्रभाव के अन्तर्गत निर्मित किया गया था, १३वी शताब्दी ई० के मध्य से बहुत पूर्व का नही है। इस मन्दिर मे वास्तुगत और मूर्तिगत एकता के ऐसे प्रगति चिन्ह हैं जो ६वी शताब्दी ई० के पूर्व के नहीं हो सकते। आर०एल०

---

1 डी०सी० सरकार, इपिग्राफिका इण्डिका, जिल्द–३१, न० १६ "असणखलि प्लेट्स आफ नरसिह I शक १२२५, पृ० १११

2 मित्र, आर०एल०, एन्टीक्वीटी आफ उडीसा, जिल्द II पृ० १५६

3 फर्गुसन, जे०, हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड ईस्टर्न आर्किटेक्चर, जिल्द–२ पृ० १०६

मित्र[1] का विचार है कि यह स्थान प्राचीन काल से ही सूर्य–पूजा का केन्द्र रहा ओर यह मन्दिर एक पुराने आधार पर निर्मित हे, किन्तु आधार स्तर के उत्खनन के अभाव मे इसकी तिथि के सदर्भ मे निश्चित रूप से कुछ नही कहा जा सकता। ताम्रपत्र अभिलेख और मन्दिर की शैलीगत विशेषताओ से प्राप्त साक्ष्यो के आधार पर वर्तमान मन्दिर को १३वी शताब्दी ई० का स्मारक स्वीकार किया जा सकता हे।

पौराणिक कथा के अनुसार कोणार्क का सूर्य मन्दिर नरसिह प्रथम द्वारा स्वय कोढ से मुक्ति हेतु निर्मित किया गया था। इतिहास मे उल्लिखित है कि नरसिह प्रथम ने इसे अत्यधिक विस्तृत क्षेत्र[2] पर अपनी विजय के उपलक्ष्य मे निर्मित करवाया था। पर्सी ब्राउन के अनुसार[3] कोणार्क का सूर्य मन्दिर एकान्त स्थल पर इसलिए बनवाया गया था ताकि कामपरक विषयो का चित्रण किया जा सके ।

सूर्य तीर्थ के रूप मे कोणार्क की महत्ता स्कन्द[4], भविष्य[5] और वराह पुराण[6] मे स्पष्ट रूप से वर्णित है। ब्रह्मपुराण[7] मे कोणादित्य को आनन्द और मुक्ति देने वाला कहा गया है। कोणार्क की ख्याति विशेषत कुष्ठ निदान हेतु है जो कुष्ठ रोग निवारण हेतु[8] लम्बे समय से सूर्योपासना से सम्बन्धित है। ब्रह्मपुराण[9] मे कहा गया है कि प्रत्येक व्यक्ति को माघ माह के अर्द्ध शुक्लपक्ष की सप्तमी को कोणार्क के सूर्य की उपासना करनी चाहिए।

---

1 मित्र, आर०एल०, एन्टीक्वीटी आफ उडीसा, जिल्द– II पृ० २५०

2 लाल, के०, मिराकल आफ कोणार्क, पृ० १४–२४

3 ब्राउन पर्सी, पूर्वोद्धत् पृ० १०८

4 स्कन्दपुराण, VI 76

5 भविष्यपुराण, 1 76,4-6,11 29.16-17

6 वराह पुराण, 177.55-77

7 ब्रह्मपुराण, 28 18

8 श्रीवास्तव, वी०सी० सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इण्डियन्ट इण्डिया, पृ० ५६

9 ब्रह्मपुराण, २८ १

कोणार्क का सूर्य मन्दिर नागर शैली की पराकाष्ठा को व्यक्त करता हे। पर्सी ब्राउन[1] के अनुसार इस प्रकार के मन्दिर का निर्माण कई सौ वर्षो के परिपक्व एव सचित अनुभव का परिणाम है। इसमे वास्तुगत एकता के अन्तर्गत इसके विभिन्न अगो का तर्कपूर्ण एव क्रमबद्ध समन्वय है। इस प्रकार कोणार्क के सूर्य मन्दिर का प्रत्येक पहलू शैलीगत पूर्णता एव पराकाष्ठा को दर्शाता है। कोणार्क का सूर्यमन्दिर वही स्थित हे जहॉ समुद्र, आकाश और पृथ्वी का वैभवपूर्ण ढग से मेल है ओर जहॉ सूर्य सर्वप्रथम अपनी सुनहली किरणे विखेरता है और अपनी छिपती हुई किरणे से इस प्राकृतिक भू–भाग का नमन करता है। वस्तुत यह सूर्य मन्दिर के लिए उपयुक्त स्थल था। इस काले पैगोडा का मुख्य निर्माता स्पष्ट एव काल्पनिक विचार के पश्चात् इस मन्दिर की रूपरेखा को सजोया। वैदिक और पौराणिक परम्पराओ मे सूर्यदेव सात घोडो से खीचे जा रहे समयरूपी रथ पर आरूढ चित्रित है जिसके द्वारा वे स्वर्ग की यात्रा[2] करते है। इस पौराणिक आख्यान को वास्तुकार ने एक मन्दिर का रूप दिया है। इमारत को रथ के रूप मे या सूर्य के सात घोडो द्वारा खीचे जा रहे पहिये वाले रथ के रूप मे सजाया गया हे। रथारूढ सूर्य देव द्वारा आकाश की यात्रा[3] करना इस उपाख्यान की अभिव्यक्ति के लिए सूर्य मन्दिर से अधिक उपयुक्त कुछ भी नही है। ऐसा प्रतीत होता है कि मानो रथ सूर्य देव के लिए विशिष्ट रूप से निर्मित किया गया हो। रथ के दोनो ओर १२ पहिये हें जो वर्ष के कृष्ण और शुक्ल पक्ष के प्रतीक हैं। प्रत्येक पहिये मे ८ मोटे और ८ पतली तिलियॉ है जो परम्परावादी हिन्दुओ के दिन और रात के विभाजन की अभिव्यक्ति है। रथ मे जुते सात घोडे, सप्ताह के सात दिनो के सूचक है। इस मन्दिर की अनुपमता इस तथ्य मे निहित है कि अपनी विशिष्ट रथ योजना के कारण स्पष्ट रूप से सूर्य मन्दिर का आभास

---

1 ब्राउन पर्सी, पूर्वोद्धत् पृ० १०७

2 ऋग्वेद, I 115,देखे वैदिक मिथोलाजी, मैकडानल, पृ० ३०–३१, विष्णु पुराण, II 2.2-7,10 1, वायुपुराण, I 89-90,ब्रह्मण्डपुराण, I I 82-83, मत्स्य पुराण १२६ ६

3 लाल, के०, मिराकल्स आफ कोणार्क, पृ० ३३

होता हे। वास्तुगत दृष्टि से यह मन्दिर सूर्य के सात घोडो से खीचे जा रहे सुन्दर रथ जैसा अलकृत है। इसका आधार दोनो ओर लगे १२ बडे पहिये[1] हैं। प्रत्येक पहिये की ऊँचाई लगभग १० फीट है। इस मन्दिर रूपी रथ को खीचते हुए सात घोडे निर्मित किए गए है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस दौडते हुए रथ मे सूर्यदेव शान से बेठे हुए हे, तथा पृथ्वी पर इसे उनके भक्तो द्वारा लाया गया हो।

मन्दिर एक ऊँचे चबूतरे पर निर्मित है और इसके दो भाग है– 'जगमोहन' अर्थात् मुख्य सभा भवन और 'नट मन्दिर'। जगमोहन १०० फीट ऊँचा और १०० फीट चौडा है और पिरामिडाकार शिखर सहित देवल की ऊँचाई २२५ फीट है। शिखर से लगे हुए तीन अन्य मन्दिर है। नट मन्दिर, जो एक वर्गाकार और ऊँचे चबूतरे पर निर्मित था, अब विनष्ट हो गया है। इससे ३० फीट की दूरी पर सभा भवन है। जगमोहन और नट मन्दिर के मध्य स्वतत्र रूप से स्थित स्तभ या कीर्तिस्तभ[2] और दक्षिण–पूर्व मे स्थित एक रसोइयॉ तथा दक्षिण–पश्चिम मे रामचन्द्र का एक लघु मन्दिर, ये मन्दिर के अन्य मुख्य भाग है। ये सभी मन्दिर के प्रागण के अन्तर्गत निर्मित है जिसकी लम्बाई ८६५ फिट और चौडाई ५४० फिट है। इसके तीन ओर प्रवेश द्वार बने है। सभा भवन मे क्लोराइट से निर्मित और मूर्तियो से अलकृत तीन द्वार मार्ग है। जगमोहन का शिखर पिरामिडाकार[3] है और इससे कोणार्क मन्दिर की प्राचीन भव्यता का अनुमान लगता हे। फर्गुसन[4] लिखते है कि भारत मे ऐसी कोई छत नही है जहॉ प्रकाश और छाया अद्भूत रूप से मिश्रित दिखाई पडती है।

---

1 ब्राउन, पर्सी, इडियन आर्किटेक्चर, पृ० १०७ ff ,प्लेट LXXXIX

2 ब्राउन, पर्सी, इडियन आर्किटेक्चर, पृ० १३०

3 कुमार स्वामी, हिस्ट्री आफ इंडिया एण्ड इंडोनेशियन आर्ट, पृ० ११६

4 एच०आई०ए०, जिल्द II पृ० १०७

देवल अब भग्नावस्था मे है। शिखर के लिए उपयोग मे लाए जाने वाले तराशे हुए प्रस्तर खण्ड नीचे बिखरे पडे है। जगमोहन और नटमदिर दोनो भवनो के चबूतरो के चारो ओर अनेक तराशी हुई आकृतियॉ है। ये मूर्तियॉ कामपरक है। मन्दिर के चबूतरे पर निर्मित मन्दिर के दो भवनो, देवल और जगमोहन, धरातल योजना मे पचरथ है और ऊँचाई मे भी पॉच भॉगो मे बटे है। मन्दिर के सभी अग इस तरह विधिवत समन्वित है कि वे एक ही भवन के अविच्छिन्न अग दिखाई देते है। यह मन्दिर वास्तुकला के विकास की चरमावस्था माना गया है।

कोणार्क मन्दिर की एक विशेषता यह है कि मन्दिर के भवनो के सभी वाह्य भाग उकेरी हुई आकृतियो से सजे हुए है। ये उत्कीर्ण आकृतियॉ वास्तुकला का अभिन्न अग है। फूल–पत्तियॉ, पशु, देव–दानव, काल्पनिक पशुओ की मूर्तियॉ छोटे या बडे आकार मे उत्कीर्ण है। सूर्य देव के साथ उनकी पत्नियो, पुत्रो और अनुयायियो की कई मूर्तियॉ हे। अधिकाश उभरी हुई आकृतियॉ स्त्री–पुरूषो की है और कुछ विद्धानो के अनुसार वे कामसूत्र मे वर्णित कामपरक विषयो का चित्रण करती है। यह कहा जाता है कि कोणार्क का सूर्य मन्दिर अपनी कामुक मूर्तियो के अकन मे खजुराहो की मूर्तियो[1] से भी उत्कृष्ठ है। ऐसा प्रतीत होता है कि सूर्य मन्दिर के साथ इनका अकन सूर्य के उत्पादन और सर्जनात्मक[2] शक्ति का सूचक है। दूसरे, धर्म मे तात्रिक कला का प्रभाव भी स्पष्ट होता है।

अब सभा भवन को छोडकर मन्दिर के कई भाग भग्नावस्था मे है, लेकिन अवशिष्ट भाग समुद्र के तट पर शात और उन्नत खडा है जहॉ बालू भरी मन्द वायु इसके नाम ओर ख्याति का सरगर्भित करती है और इसके गौरवमय अतीत की नित्यता का गान करती है।

---

1 श्रीवास्तव, वी०सी०, सन वर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, पृ० ३३६

2 कुमार स्वामी, ए०के०, फोर डेज इन उडीसा मार्डन रिव्यूय, अप्रैल १६११ पृ० ३४५–५०

इसके अवशेष उत्कृष्ट वास्तुगत कौशल और ललित कलात्मकता के स्पष्ट साक्ष्य है। जिनमे तात्रिक प्रतीको का सयोजन महत्वपूर्ण अवस्था मे भारतीय धरोहर के गौरवमय अतीत का गान कर रहा है। आज भी यह अतुलनीय है। महान सरचना ध्वशावशेषो मे परिवर्तित हो सकती है, लेकिन समुद्र की शाश्वत गर्जना, जो कोणार्क के गौरव रूपी सुगन्ध से युक्त है, सदैव भविष्य मे सुनी जाती रहेगी। अब भी सारा वातावरण धार्मिक पवित्रता और भावनाओ का स्फुरण करता है और यह अद्भुत स्थान विश्व के कोने–कोने से प्रत्येक दिन आने वाले आगन्तुको द्वारा सदैव प्रशसित है।

❀❀❀

अध्याय – चार

सौर मिथक

अध्याय चार
सौर मिथक

सज्ञा–सूर्य

पुराणो मे सूर्य से सम्बन्धित कुछ मिथको का उल्लेख मिलता है। लगभग सभी पुराणो मे सज्ञा और सूर्य की पौराणिक कथा[1] वर्णित है जो सक्षेप मे इस प्रकार है–'दैत्य–दानवो का पराभव हो जाने के बाद पुन देवताओ का राज्य स्थापित हो गया। प्रजापति विश्वकर्मा ने भगवान सूर्य को सुयोग्य मानकर अपनी पुत्री सज्ञा के साथ उनका विवाह कर दिया। उनका दाम्पत्य जीवन प्रेम ओर उल्लास से परिपूर्ण था। उनके परस्पर सम्पर्क से तीन सन्ताने हुई। उनके पुत्रो का नाम मनु और यम तथा पुत्री का नाम यमुना था। सूर्य देव जहॉ प्रचण्ड तेजवान थे, वही सज्ञा अत्यन्त कोमलाङ्गी और शान्त थी। वह सूर्य के असह्य तेज को सहन न कर पाती थी। अत अपनी रक्षा के लिए वह अपने योग बल से अपनी ही तरह अपनी छाया को प्राणवान बनाकर सूर्यदेव के साथ रहने की आज्ञा दी तथा स्वय छिपकर उत्तरकुश मे एकान्तवास करने लगी।

सूर्य को इस परिवर्तन का पता नही चला और वे छाया को ही सज्ञा समझते रहे। छाया ने जिसका नाम सवर्णा भी था– कालान्तर मे तीन सन्तानो को जन्म दिया। उसके पुत्रो का नाम सवीर्ण और शनि तथा पुत्री का नाम तपती हुआ। छाया का स्वभाव धीरे–धीरे मलिन होने लगा। वह अपनी सन्तानो से मोह रखती, परन्तु सज्ञा की सन्तानो की उपेक्षा कर जाती । मनु तो गभीर थे, अत सहन कर गये। परन्तु यम मे क्रोध की प्रधानता

---

1 मार्कण्डेय पुराण, अध्याय, ७७–७८ और अध्याय १०६, मत्स्यपुराण, अध्याय ५२, विष्णु पुराण खण्ड ३ अध्याय–२, पृ० २०६, शिवपुराण, भाग ५, अध्याय ३५, पृ० ६० विष्णुधर्मोत्तर पुराण (श्री वेकट, मुम्बई), भाग–१, अध्याय १०६, ब्रह्मपुराण (आनन्द शर्मा, १८६३) अध्याय ६, ३२,८६, स्कन्दपुराण (काशीखण्ड)(उत्तरार्द्ध) अध्याय ५६, पृ० २०२–२०८, स्कन्दपुराण (प्रभासखण्ड) अध्याय१, हरिवशपुराण (लखनऊ सस्करण) अध्याय ६ पृ० ५।

थी। वह मॉ की क्षुद्रता पर कुपित होकर उस पर चरण–प्रहार करने के लिए तैयार हो गये। उनकी उग्रता पर कुपित होकर छाया ने उन्हे मन्द बुद्धि होने का शाप दिया।

सूर्य को जब छाया की वास्तविकता का पता चला तो वे खिन्न हो गये और यम को वरदान दिया कि 'जाओ, पुत्र! अब से तुम धर्मराज के पद पर आसीन होगे।' बाद मे सूर्य देव उत्तरकुश जाकर सज्ञा से मिले। वहॉ वह अश्विनी– (घोडी) के रूप मे विचरण कर रही थी। सूर्य देव ने अश्व रूप मे उससे सम्पर्क किया। फलत उसने दो और पुत्रो को जन्म दिया। वे दोनो पुत्र अश्विनी कुमार के नाम से प्रसिद्ध हुए। यही अश्विनीकुमार देवताओ के प्रसिद्ध वैद्य कहे जाते है। बाद मे सूर्य ने अपना तेज कम करने के लिए विश्वकर्मा से आग्रह किया। विश्वकर्मा ने उनके मण्डलाकार बिम्ब को सान पर चढाकर उन्हे खरादना शुरू किया। विश्वकर्मा ने सूर्य के १६ भागो मे १५ भागो को खराद डाला। फलत सूर्य का तापकारी शरीर सुदर्शन और कमनीय हो गया। अब सज्ञा का सूर्य के साथ दाम्पत्य जीवन परम सुखमय हो गया। विश्वकर्मा ने सूर्य के शेष पन्द्रह भागो से विष्णु का सुदर्शन चक्र, महादेव का त्रिशूल, कुबेर की शिबिका, यम का दण्ड तथा कार्तिकेय का शक्तिपाश बनाया।

स्कन्द[1] और ब्रह्मपुराण[2] खरादने वाले का नाम विश्वकर्मा तथा खरादने का स्थल प्रभास बताते हैं। जबकि स्कन्द और ब्रह्मपुराण के सिवाय सभी पुराण शकद्वीप मे उनके खरादे जाने का उल्लेख करते है। स्कन्दपुराण के प्रभास खण्ड के ६ वे अध्याय मे सज्ञा और सूर्य की कहानी को शिव और पार्वती से सम्बन्धित किया गया है जिसमे शिव पार्वती से प्रभासक्षेत्र की सृष्टि का कारण और प्रभास नाम के विषय मे प्रश्न करते है। इसके प्रत्युत्तर मे यह कहा गया है कि इस क्षेत्र मे त्वष्टा का जन्म हुआ था। यही वह सूर्य को मानव रूप मे गढे और उसके परिणाम स्वरूप एक प्रभा (दैवीय प्रकाश) उत्पन्न हुई। इसी कारण यह सपूर्ण क्षेत्र प्रभास के नाम से जाना जाने लगा।

---

1 स्कन्दपुराण, प्रभास खण्ड, अध्याय ६

2 ब्रह्मपुराण, अध्याय ३२, ८६

भविष्य पुराण[1] मे भी सज्ञा और विवस्वान (सूर्य) की लोकप्रिय कहानी वर्णित हे। इसमे बताया गया है कि किस प्रकार त्वष्टा की पुत्री सज्ञा सूर्य देव विवस्वान से व्याही गई, किस प्र`कार मनु, यम और यमुना को जन्म देने के पश्चात् जब वह अपने पति के तेज को सह न सकी तो अपनी जगह अपनी छाया छोड दी, किस प्रकार वह अपने पिता के पास गई ओर अपने पति के शरीर के तेज को कम करने के लिए घोडी के रूप मे तपस्या करने लगी और अन्त मे किस प्रकार सूर्य देव अपनी पत्नी के पास गये आदि।

ब्रह्मपुराण के ३२वे अध्याय मे उल्लिखित है कि विश्वकर्मा ने सूर्य को शकद्वीप मे घुटनो तक खरादा था, जबकि ८६ वे अध्याय मे त्वष्टा द्वारा सोमनाथ के समीप प्रभास क्षेत्र (आधुनिक सौराष्ट्र मे स्थित) मे उन्हे खरादने का उल्लेख मिलता है। यह विवरण शकद्वीप की पहचान सौराष्ट्र से करने से सहायक हो सकता है, यद्यपि सूर्य को खरादने का मूल स्थान विचारणीय है।

त्वष्टा के द्वारा सूर्य को खरादने की कहानी विस्तृत रूप से वर्णित है। ज्ञात होता हे कि सूर्य को दैवीय सगतराश ऊपर से खरादना प्रारम्भ किये, लेकिन जब वह घुटनो तक पहॅचे और सबसे नीचे के भाग को खरादना प्रारम्भ किये तो सूर्य देव दर्द को सहन न कर सके और त्वष्टा से बहाना किया कि इसे बाद मे खरादा जाय। इस प्रकार पैर का निचला हिस्सा अनगढ[2] रह गया। यही कारण है कि सूर्य देव के पैर का निचला हिस्सा नही दिखाई देता और वह सदैव ढका रहता है।[3]

---

1 भविष्य पुराण, अध्याय ४७,७६ आदि।

2 भविष्य पुराण, अध्याय, ४७,७६ वर्सेज, ५१–५२, अध्याय १२१

3 वही० अध्याय १२३ वर्सेज ५५–५६

विश्वकर्मा द्वारा सूर्य के शरीर को खरादा जाना सोर प्रतिमाशास्त्र[1] पर भी प्रभाव डाल ता है मत्स्यपुराण से ज्ञात होता है कि सूर्य ने उन्हे अपने पेर के किसी भाग को गढने की अनुमति नही दी थी, इसलिए वे अनगढ और बहुत चमकीले है।[2] यही कारण है कि उपासना के उद्देश्य से कोई भी व्यक्ति सूर्य प्रतिमा मे पैर नही बनाता। आगे यह भी निर्देश दिया गया है कि जो व्यक्ति सूर्य प्रतिमा मे पैर निर्मित करता है वह नरकगामी और कोढी हो जाता है। इसलिए किसी व्यक्ति को चित्रो ओर मन्दिरो मे भी सूर्य के पेरो को निर्मित नही करना चाहिए।[3]

साम्ब का कुष्ठ रोग –

दूसरा सौर मिथक, जो थोडा–बहुत भिन्नता के साथ लगभग सभी पुराणो मे उल्लिखित है, वर्णनीय है। कृष्ण और जाम्बवती के पुत्र साम्ब को उनके पिता ने कोढी हो जाने का शाप दिया था। कारण यह था कि एक बार देवर्षि नारद द्वारिका मे आये थे तब भगवान श्रीकृष्ण गोपीमण्डल के मध्य मे बैठे थे। नारद जी ने बाहर खेल रहे साम्ब से कहा, वत्स! भगवान् श्रीकृष्ण को मेरे आगमन क़ी सूचना दे दो। साम्ब अन्त पुर मे गये तथा भगवान् श्रीकृष्ण को दूर से ही प्रणाम करके नारद के आगमन की सूचना उन्हे दे दी। साम्ब के पीछे–पीछे नारद जी भी वहॉ चले गये।

नारद जी ने गोपियो के मन की विकृति ताडकर भगवान् से कहा–''साम्ब के अतुल सौन्दर्य से मोहित होने के कारण इनमे चचलता आ गयी है।' यद्यपि साम्ब सभी माताओ को अपनी मॉ जाम्बवती के सादृश्य ही देखते थे, तथापि दुर्भाग्यवश भगवान् श्रीकृष्ण ने उन्हे कुष्ठ रोग से आक्रान्त होने का शाप दे दिया। इस घृणित रोग के भय से साम्ब कॉप

---

1 विष्णुपुराण , खण्ड ३ अध्याय २ पृ० २०६ पद्मपुराण (सृष्टि खण्ड) अध्याय ८ वर्सेज ६५–६८

2 मत्स्यपुराण, अध्याय ५२ वर्सेज ३१–३३ (पाणिनि आफिस, इलाहाबाद)

3 मत्स्यपुराण, (लक्ष्मीवेकट सस्करण मुम्बई) ६४,१

गये और भगवान् श्रीकृष्ण से प्रार्थना करने लगे। तब नारद ने उन्हे सूर्योपासना की सलाह दी। उन्होने चन्द्रभागा नदी के तट पर मूलस्थानपुर मे एक सूर्य मन्दिर निर्मित करवाया और मन्दिर के पुरोहित के रूप मे कार्य करने के लिए शकद्वीप से मग ब्राह्मणे को ले आये। यह भी कहा गया है कि साम्ब ने चन्द्रभागा नदी के किनारे[1] मित्रवन मे साम्बपुर नामक शहर की स्थापना की थी। यही उन्होने सूर्य देव का मन्दिर निर्मित, करवाया था। सामान्यत विद्धानो ने साम्बपुर की पहचान मुल्तान (पाकिस्तान के पश्चिमी पजाब मे स्थित) से की है।

इस विवरण से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता हे कि कुष्ठ रोग निवारण हेतु सूर्योपासना की जाती थी। पौराणिक परम्परा मे सूर्य को रोगनाशक के रूप मे चित्रित किया गया है। सूर्य का यह रूप वैदिक काल से ही चला आ रहा[2] था। ऋग्वेद[3] मे सूर्य रोग मुक्तिकारक के रूप मे वर्णित है। सूर्य द्वारा पाण्डुरोग[4] ठीक करने का उल्लेख मिलता है। दृष्टि के लिए[5] उसकी पूजा की जाती थी। अथर्ववेद[6] मे सूर्य का यह रूप ज्यादा मुखर हुआ है जहॉ उससे विभिन्न बीमारियो[7] को ठीक करने की प्रार्थना की गयी। उसे आखो के रक्षक[8] के रूप मे देखा गया है। ब्राह्मण ग्रन्थो मे भी सूर्य को रोग नाशक के रूप मे दिखाया गया है। जहॉ वह ऑख की बीमारियो[9] से विशेष रूप से सम्बन्धित है। स्पष्ट है कि सूर्य का चिकित्सक रूप काफी प्राचीन हे।

---

1 साम्बपुराण, अध्याय ३

2 श्रीवास्तव, वी०सी० सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इण्डिया पृ० ५४–५६

3 ऋग्वेद १० ३७ ४

4 ऋग्वेद १ ५० १२

5 ऋग्वेद १०–३७ ७ तैत्तरीय सहिता २ ३ ७

6 करवेलकर, अथर्ववेद एण्ड आयुर्वेद पृ० ७०–७३

7 अर्थर्ववेद ६ ८,१०,८ २२

8 अथर्ववेद ५ १ ७,२ १६ २,६ १० ३

9 पचविश ब्राह्मण १ ३ ६, शतपथ ब्राह्मण १३ ३ ८ ४

चिकित्सक रूप के ही कारण ऋग्वेद[1] और तैत्तरीय सहिता[2] अथर्ववेद[3] मे उससे लम्बी आयु प्रदान करने की प्रार्थना की गयी है। कोढ के चिकित्सक के रूप मे ऋग्वेद अथर्ववेद मे सूर्यदेव का उल्लेख नही मिलता[4] जबकि पौराणिक काल मे सूर्य को विशेष रूप से कोढ को समाप्त करने वाले देवता के रूप मे वर्णित किया गया है। भविष्य पुराण[5] मे उल्लेख मिलता है कि मयूर ने कोढ से मुक्ति के लिए सूर्यशतक की रचना की थी। साम्बपुराण[6] की भी रचना का कारण साम्ब का कुष्ट रोग ग्रस्त हो जाना कहा जा सकता है। कोढ के चिकित्सक का सूर्य का रूप ब्राह्मण ग्रन्थो[7] मे विकसित हुआ।

सौर पुरोहित (मग–भोजक) –

सूर्योपासना के लिए मगो और भोजको को ही पुरोहित बनाया जाता था। उनके पौरोहित्य[8] को न्याय–सगत ठहराने के लिए साम्ब के कोढ और सूर्योपासना द्वारा उसके उपचार जैसे मिथको को उद्धृत किया जा सकता है। कहा गया है कि जब एक दिन साम्ब चन्द्रभागा नदी मे स्थान करने गए, तो वे एक देदीष्यमान सूर्य मूर्ति पाये जो नदी की धारा द्वारा लायी गयी थी और शकद्वीप मे विश्वकर्मा द्वारा गढकर बनायी गयी थी। इस मूर्ति को साम्ब ने नदी के किनारे स्थापित कर दिया। मन्दिर के चढावे को कौन ग्रहण

---

1 ऋग्वेद १० ३७ ७,७ ६६ १६ शरद शतम् जीवेम शब्द शतम्।

2 तैत्तरीय सहिता ३ ३ २

3 अथर्ववेद २ २६ १

4 श्रीवास्तव, वी०सी०, सनवर्शिप इन एन्शियेन्ट इण्डिया, पृ० ५६

5 भविष्य पुराण अध्याय १३६

6 साम्ब पुराण मे साम्ब का 'कोढ मुक्ति विषय' प्रारम्भ से अन्तिम अध्याय तक प्रमुख हे।

7 पचविश ब्राह्मण २३ १६ १२ के अनुसार उग्रदेव ने कोढ से मुक्ति हेतु २१ दिन का सूर्यानुष्ठान किया।

8 साम्ब पुराण, अध्याय ७०,७२,७३,७४,७५,११७,१२७

करे ? इस समस्या के समाधान हेतु वे नारद के पास गये जिन्होने उन्हे बताया कि सभी ब्राह्मण (द्विज) मन्दिर की भेट को स्वीकार नही कर सकते क्योकि वह देवलोक ओर अपाक्तेय की वस्तु हो जाती है। मन्दिर के चढावे को ग्रहण करना वेदो द्वारा अनुमोदित[1] नही है। तब उन्हे उग्रसेन के पुरोहित गोरमुख के पास जाने की सलाह दी गयी। उन्होने भी उन्हे मगो, जिन्हे मन्दिरो की भेट लेने और उनकी पूजा करने का अधिकार था,[2] को ले आने की सलाह दी। इसके पश्चात् साम्ब सूर्य–मूर्ति की सलाह पर शकद्वीप गये ओर वहॉ से[3] १८ वर्गीय मगो को ले आये।

मगो[4] की उत्पत्ति के विषय मे एक पौराणिक कथा है। ऐसा कहा जाता है कि सुजिह्वा नामक एक सत थे जो मिहिर गोत्र के थे। उनके निक्षुभा नामक एक पुत्री थी, वह बहुत सुन्दर थी। एक बार जब वह स्वय आग मे क्रीडा कर रही थी तो सूर्य देव ने उसे देखा और उनका उससे प्रेम हो गया। तत्पश्चात् अग्नि मे प्रविष्टि होकर वह उसके (अग्नि) पुत्र हो गये और निक्षुभा ने एक पुत्र को जन्म दिया। उसका नाम जराशब्द था। उन्ही से सभी मग प्रकट हुए जो अग्नि से उत्पन्न होने के कारण अग्निजाति[5] से सम्बन्धित माने जाते है।

ये मग सौर पथ[6] के पक्के अनुयायी थे। वे वेदो[7] और वेदागो के ज्ञाता थे। वे ढाढी और मूँछ रखते थे। उनके दाहिने हाथ मे कमण्डल और बाये मे कवच रहता था।[8]

---

1 वही० अध्याय १३६ वर्सेज ५–८

2 वही० अध्याय १३६ २८ तस्याधिकारो देवान्ने देवतानाञ्च पूजने।

3 वही० अध्याय १३६ वर्सेज ८२–६४

4 साम्ब पुराण अध्याय १३६, ३३–४३

5 वही० अग्निजात्या मगा प्रोक्ता सोमजात्या द्विजातय
भोजकादित्यजात्या हि दिव्यास्ते परिकीर्तिता ।।

6 वही० १३६, ५५–६१,

7 वही० १३६, ६२,

8 वही० १३६, ५६,

वे शकद्वीप मे रहते थे, जहॉ चारो वर्ण–मगस्, मगगस्, मानसस् ओर मन्दगस् रहते हें जो क्रमश ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शुद्र थे।[1] वे अव्यग पहनते थे।[2]

एक जगह उनके चार वेदो का नाम इस प्रकार–वेद, विश्वमद, विद्वद्वहि ओर रस, मिलता है जो ब्राह्मणो के वेद–ऋग्वेद, यजुर्वेद साम वेद और अथर्ववेद से भिन्न थे।[3] वे अहिकन्चुक (सर्प के केचुली) की उपासना करते है, जिस प्रकार अन्य ब्राह्मण माला की पूजा करते है।[4]

फिर भी यह कहना कठिन है कि ये मग कौन थे ? और वे कहॉ से आये ? लगभग सभी विद्वान इस बात से सहमत है कि भविष्यपुराण मे उल्लिखित मग पारसिक मगी[5] थे, जो पवित्र कमर–करधनी[6] पहनते थे। विद्वान जराशब्द का समीकरण पारसीक जरथ्रुष्ट से करते हैं जिन्होने अग्नि उपासना की शिक्षा दी थी। आगे उनका निष्कर्ष यह है कि शकद्वीप के मग अग्नि उपासक मगी ही थे जबकि परसिया से शकद्वीप का समीकरण स्वत सदेहास्पद है। सभव है कि जब मगी भारत आये तो उन्होने यहॉ सूर्योपासना के अत्यधिक विकसति रूप को देखा। चूँकि यह उनके अपने विश्वास के अनुरूप था इसलिए उन्होने इसे अपनी जीविका का साधन बना लिया और सूर्य मन्दिर के पुजारी के रूप मे वे कार्य करने लगे। धीरे–धीरे इस व्यवसाय पर उनका एकाधिकार स्थापित हो गया। जहॉ कही भी वे गये उन्होने सूर्योपासना को लोकप्रिय बनाने का प्रयास किया। इस प्रकार उन्होने सम्भवत पौराणिक काल मे सौरपथ के उद्भव और विकास मे पर्याप्त सहायता प्रदान की।

---

1 वही० १३६, ७२–७४

2 वही० १३६, ७८

3 साम्ब पुराण, अध्याय १४० ३६–३८

4 वही० १४० ३६–४५

5 आर०जी० भण्डारकर, वैष्णविज्म शैविज्म एण्ड माइनर रिलीजियस सिस्टम्स, पृ० १५३–१५४ (प्रथम सस्करण)

6 बनर्जी, जे० एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४३८

भोजक ब्राह्मणो का एक दूसरा समूह है। भविष्य पुराण मे उन्हे सूर्य मूर्ति का अधिष्ठापक और अभिषेक कर्त्ता कहा गया है।[1] वे आदित्य के पुत्र रूप मे वर्णित हे और इनकी उत्पत्ति उनके शरीर से बतायी गई है।[2] इस प्रकार वे आदित्य की जाति से सम्बन्धित है।[3]

उनके इतिहास के विषय मे[4] यह कहा जाता हे कि प्रिय ब्रत नामक राजा ने शकद्वीप मे सूर्यदेव का एक मन्दिर पाया। वह इसमे चादी की सूर्यमूर्ति स्थापित करना चाहते थे इसलिए वह आदित्य देव के पास गये जिन्होने इस कार्य के सपादन हेतु भोजको को निर्दिष्ट किया। अकेल होने पर भी वे सूर्य की मूर्ति स्थापित नही करते। भोजक को भोजक इसलिए कहा जाता है क्योकि वे सूर्य देव को भोजन (भोज्य) प्रदान करते है[5] ओर प्रयुक्त भोजन (अभोज्य) स्वीकार[6] नही करते। उन्हे भोजक इसलिए भी कहा जाता है क्योकि वे भोज की पूत्रियो[7] से पैदा हुए थे। भोजक अव्यग पहनते, सिर मुडा रखते, दिन मे तीन बार गायत्री मत्र का जप करते, अपने कर्त्तव्य पालन मे व्यस्त रहते, वेदो का अध्ययन करते, एक गृहस्वामी के कर्त्तव्यो का पालन करते, दिन मे तीन बार स्नान करते, रविवार तथा प्रत्येक शुक्लपक्ष[8] की षष्ठी को उपवास रखते थे। वे शूद्रो के घर भोजन नही

---

1 भविष्य पुराण, अध्याय ११७,१३५,१४०,१४४,१४५,१४६,१४७

2 वही०, अध्याय–११७, २३

3 वही०, अध्याय–१३६, ४४

4 वही०, अध्याय ११७

5 वही०, अध्याय ११७ वर्सेज ५४, देखे अध्याय १४३ २६

6 वही०, अध्याय ११७ ५३

7 वही०

8 वही०, अध्याय ११७ देखे वर्सेज ४०–७०

ग्रहण करते थे ओर सूर्य के अतिरिक्त अन्य देव की मूर्ति नही स्थापित करते थे।[1] वे आर्य देश मे पैदा हुए कुलीन परिवार से सम्बन्धित कहे गये हे ओर सोर ग्रन्थो तथा अन्य वेदो मे[2] उनका स्पष्ट उल्लेख है।

कालान्तर मे भविष्य पुराण मे भोजको का तादात्म्य मगो से स्थापित किया गया हे। यह कहा जाता है कि भोजक पचमकार का चिन्तन करते है जो स्वत सूर्यदेव हे। इसीलिए उन्हे मग कहा जाता है।[3] कभी–कभी उन्हे मगो का सम्बन्धी कहा गया है। यह कहा जाता है कि मगो की पुत्रियॉ भोजको से व्याही गई।[4] दूसरी जगह यह कहा गया है कि मग ही भोजक है क्योकि वे भोजको की पुत्रियो[5] से पैदा हुए है। पुन मगो को भोजवश[6] की लडकियो से शादी करने वाला कहा गया है।

मगो की भॉति भोजको की समस्या का समाधान कठिन है। अनेक अभिलेखो मे उन्हे सूर्य का पुरोहित कहा गया है। हर्षचरित मे भी उनका उल्लेख है। डा०आर०सी०

---

1 वही०

2 वही अध्याय १३५, वर्सेज ५६–६०

कुलीन श्रद्धानश्चार्य देशसमुद्भव ।

न स्थूलो न कृशो दीर्घ सौरशास्त्र विशारद ।।५६।।

3 वही० अध्याय १४४ वर्स २५

मकारोभगवान्देवो भास्कर परिकीर्तित ।

मकारध्यानयोगाच्च मगा हयेते प्रकीर्तित ।।१२५।।

4 वही० अध्याय १४० वर्स६

5 वही० वर्स ३५

6 वही० १४० वर्स १६, साम्बपुराण मे भी भोजको का तादात्म्य मगो से स्थापित किया गया है। वहॉ उन्हे याजक कहा गया है, देखे, साम्बपुराण, २७

हजरा का विचार उचित है कि वे पारसीक अग्नि पूजको के एक दूसरे दल से सम्बन्धित थे जिन्होने भारत मे मगो के आगमन के कुछ समय पश्चात् उनका अनुकरण किया। लेकिन भविष्यपुराण के विवरण से स्पष्ट होता है कि उनका मगो की अपेक्षा ब्राह्मण सस्कृति के अनुयायियो से कुछ अधिक सादृश्य था। भारत मे सूर्योपासना के विस्तार मे उनका योगदान मगो की अपेक्षा अधिक है क्योकि उन्हे अधिक विस्तृत रूप से उल्लिखित किया गया है।

मकर सक्रान्ति –

मकर सक्रान्ति का उल्लेख अनेक ग्रथो[1] मे मिलता है। सूर्य का एक राशि से दूसरी राशि मे जाना सक्रान्ति है। अत वह राशि जिसमे सूर्य प्रवेश करता है सक्रान्ति की सज्ञा से जानी जाती है। जब सूर्य धनुराशि को छोडकर मकरराशि मे प्रवेश करता है तो मकर सक्रान्ति होती है।[2] मेष, वृषभ मीन, कर्कट, सिह, कन्या, तुला तृश्चिक, धनु, मकर कुम्भ, मीन ये बारह राशियॉ हैं। प्रत्येक सक्रान्ति पवित्र दिन के रूप मे जानी जाती हे।

मकर सक्रान्ति का उद्गम बहुत प्राचीन नही है। ईसा के कम से कम एक हजार वर्ष पूर्व ब्राह्मण एव औपनिषदिक ग्रन्थो मे उत्तरायण के छह मासो का उल्लेख है।[3] ऋग्वेद

---

1 मत्स्यपुराण, ६८ विष्णुपुराण, ३ ११ ११८ ११६, विष्णु धर्मसूत्र, ३ ३१६ ३८–४५,७७ १–२, कालनिर्णय पृ० ३३१–३४५, वर्षक्रियाकौमुदी पृ० २१४–२१६,५१४, कालविवेक, पृ० ३८०–३८२, चतुर्वर्गचिन्तामणि, कालखण्ड, ४०७–४३७, स्मृतिकौस्तुभ, पृ० ५३१ कृत्यकल्पतरू, नैवत्कालिक काण्ड ३६०–३६७ समय मयूख, पृ० १३७ बृहत्सहिता ६८ ६, तिथितत्व पृ० १४४–१४५, धर्मसिन्धु पृ० २–३, निर्णय सिन्धु, पृ० २१८

2 रवे सक्रमण राशो सक्रान्तिरिति कथ्यते।

स्नानदानतप श्राद्ध होमादिषु महाफला ।। हेमाद्रि, चतुर्वर्गचितामणि, कालखण्ड पृ० ४१०, कालनिर्णय पृ० ३३१

3 शतपथ ब्राह्मण २ १ ३ १ ३ एव ४, छान्दोग्योपनिषद ४ १५ ५ एव ५ १० १–२

मे अयन[1] शब्द आया है, जिसका अर्थ मार्ग या स्थल' है। गृह्यसूत्रो मे उदगयन' उत्तरायण का ही द्योतक है।[2] जहॉ स्पष्ट रूप से उत्तरायण आदि कालो मे सस्कारो के करने की विधि वर्णित है। प्राचीन श्रौत,गृह्य एव धर्मसूत्रो मे राशियो का उल्लेख नही है। उदगयन बहुत शताब्दीयो पूर्व से शुभकाल माना जाता रहा है। अत मकर सक्रान्ति, जिससे सूर्य की उत्तरायण गति आरम्भ होती है, राशियो के चलन के उपरान्त पवित्र दिन मानी जाने लगी। सक्रान्ति माहात्म्य की प्राचीनता कम से कम ई० सन् के प्रारम्भ से मानी जा सकती है क्योकि काणे[3] के अनुसार भारतीयो को राशियो का ज्ञान तृतीय शताब्दी ई० पू० मे हो गया था। किन्तु हाजरा[4] भारत मे राशि ज्ञान की प्राचीनता द्वितीय शताब्दी ई० सन् मानते है।

मत्स्यपुराण[5] मे मकर सक्रान्ति का वर्णन किया गया है। सक्रान्ति के एक दिन पूर्व व्यक्ति को मध्यान्ह मे भोजन करना चाहिए और सक्रान्ति के दिन दॉतो को स्वच्छ करके तिलयुक्त जल से स्नान करना चाहिए तथा एक गाय यम, रूद्र एव धर्म के नाम पर दे, और चार श्लोको को पढे[6]। यथा सम्भव ब्राह्मण को आभूषणो, पर्यंक, दो स्वर्णपात्र का दान

---

1 ऋग्वेद ३ ३३ ७

2 आश्वलायन गृहयसूत्र १४१–२, कौषीतकी गृहयसूत्र १ ५, आपस्तम्ब गृहयसूत्र ११२

3 काणे, पाण्डुरग वामन, हिस्ट्री आव धर्मशास्त्र (हिन्दी अनुवाद अर्जुन चोबे काश्यय) भाग–५(१), पृ० ६३८

4 हाजरा, आर०सी० स्टडीज इन दि पुराणिक रिकर्डस आन हिन्दू राइट्स एण्ड कस्टमस, पेज २३

5 मत्स्यपुराण ६८

6 जिनमे एक है–"यथा भेद न पश्यामि शिव विष्णवर्कपद्मजान्।

तथा ममास्तु विश्वात्मा शकर शकर सदा।।"

मत्स्यपुराण ६८ १७ शकर सूर्य से भिन्न नही है। दूसरे शकर का अर्थ 'श कल्याण करोति' है।

करे। दरिद्र होने पर केवल फल से काम चलाया जा सकता है। स्वय तैल विहीन भोजन करना चाहिए तथा यथा शक्ति अन्य लोगो को भोजन देना चाहिए।

सक्रान्ति पर गगा स्नान महापुण्य दायक बताया गया है ऐसा करने पर व्यक्ति ब्रह्मलोक प्राप्त करता है।[1] सक्रान्ति पर स्नान नित्यकर्म के रूप मे देवी पुराण[2] मे भी वर्णित किया गया है–"जो व्यक्ति सक्रान्ति के पवित्र दिन स्नान नही करता वह सात जन्मो तक रोगी एव निर्धन रहेगा, सक्रान्ति पर जो देवो को द्रव्य और पितरो को कृत्य दिया जाता है, वह सूर्य द्वारा भविष्य के जन्मो मे लौटा दिया जाता है। हेमाद्रि ने[3] जैमिनीय गृह्यसूत्र एव कालनिर्णय ने[4] ज्योतिषशास्त्र से उद्धरण लेकर सूर्य एव ग्रहो का पुण्यकाल बताया है। सूर्य के विषय मे सक्रान्ति के पूर्व या पश्चात् १६ घटिकाओ का समय पुण्यकाल बताया गया है।

जब सूर्य एक राशि छोडकर दूसरी मे प्रवेश करता है तो उस काल का यथावत् ज्ञान ऑखो द्वारा सभव नही होता है, अत सक्रान्ति की तीस घटिकाये इधर या उधर के काल का द्योतन करती है।[5] सक्रान्ति कृत्यो के लिए ये अधिकतम काल सीमा है। सक्रान्तिकाल अतिलघु है अत इसकी सन्निधि का काल उचित ठहराया गया है। देवीपुराण[6] मे सक्रान्ति–काल की लघुता का उल्लेख किया गया है– स्वस्थ्य एव सुखी

---

1 सक्रान्तिया पक्षयोरन्ते ग्रहणे चन्द्र सूर्ययो ।
गगास्नातो नर कामाद ब्रह्मण सदन ब्रजेत्।। भविष्यपुराण, वर्ष क्रियाकौमुदी, पृ० ५१४

2 देवी पुराण, काल विवेक, पृ० ३८०, कालनिर्णय पृ० ३३३ मे उद्धत।

3 हेमाद्रि चतुर्वर्गचिन्तामणि, कालखण्ड पृ० ४३७

4 कालनिर्णय ३४५

5 कालनिर्णय पृ० ३३३

6 दैवी पुराण कालविवेक,पृ० ३८० कालनिर्णय, पृ० ३३३

मनुष्य जब एक बार पलक गिराता हे तो उसका तीसवॉ काल तत्पर कहलाता है तत्पर का सौवॉ भाग त्रुटि' कहा जाता है। त्रुटि के सौवे भाग मे सूर्य का दूसरी राशि मे प्रवेश होता हे। वास्तविक काल के जितने समीप कृत्य हो वह उतना ही पुनीत माना जाता है। इसी कारणवश सक्रान्तिओ मे पुण्यतम काल सात माने गये है–३,४,५,७,८,६ एव १२ घटिकाये। इन्ही अवधि मे वास्तविक फल प्राप्ति होती हे। सक्रान्ति दिन या रात्रि दोनो मे हो सकती है। दिन वाली सक्रान्ति के विषय मे लम्बे विवेचन मिलते है। तिथि तत्व एव धर्म सिन्धु[1] के अनुसार मकर एव कर्कट को छोडकर दसो सक्रान्तिओ मे पुण्यकाल दिन मे ही होता है, जबकि वे रात्रि मे पडती है।

पुण्यकाल मे ही स्नान–दान से फल प्राप्ति होती है। सामान्यरूप से रात्रि मे स्नान तथा दान का विशेष रूप से निषेध हे। किन्तु ग्रहण, विवाह, सक्रान्ति यात्रा आदि विशिष्ट अवसरो पर रात्रि स्नान की स्वीकृति दी गयी है।[2] मकर सक्रान्ति मे अग्नि, ईंधन, तिल, घृत, कम्बल, दधि मन्थन, दान का विशिषट महत्व है।[3] राजमार्तण्ड मे सक्रान्ति[4] पर किये गये दानो का फल सामान्य दिन के दान के फल का कोटि गुना होता हे।[5] विष्णु धर्मसूत्र[6] मे सक्रान्ति पर श्राद्ध करने का भी उल्लेख आया है। सक्रान्ति पर कुछ कृत्य

---

1 तिथियुक्त, पृ० १४४–१४५, धर्मसिन्धु पृ० २–३

2 भविष्य पुराण, हेमाद्रि ,चतुर्वर्गचिन्तामणि कालखण्ड, पृ० ४३३ कालनिर्णय, पृ० ३३६ निर्णय सिन्धु, पृ० ७

3 शर्मा, श्रवण लाल, व्रतोत्सव चन्द्रिका पृ० २८८

4 मकर सक्रान्ति एव कर्कट सक्रान्ति अयन सक्रान्ति है।

5 वर्षक्रियाकौमुदी, पृ० २१४ कालविवेक पृ० ३०२ मे राजमार्तण्ड का उद्धरण।

6 विष्णुधर्मसूत्र ७७ १–२

वर्जित भी थे। ऐसे अवसर पर सम्भोग करने वाला, तैल एव मास खाने वाला विषमूत्र[1] भोजन नामक नरक मे पडता है।[2]

आगे चलकर सक्रान्ति का दैवीकरण हो गया। वह साक्षात् दुर्गा कही जाने लगी। पचागो मे सक्रान्ति का दैवीकरण मिलता है। उसके बाहन, वस्त्र, आयुध आदि का उल्लेख मिलता है। आज के ज्योतिष शास्त्र के अनुसार अयनकाल २१ दिसम्बर को होता है और उसी दिन से सूर्य उत्तरायण होते है। परन्तु भारत मे प्राचीन पद्धतियो के अनुसार रचे पचागो के अनुसार उत्तरायण का आरम्भ १४ जनवरी से होता हे। इस प्रकार उपर्युक्त मकरसक्रान्ति से ये २३ दिन पीछे है। हेमाद्रि[3] ने भी उल्लेख किया है कि प्रचलित सक्रान्ति से १२ दिन पूर्व ही पुण्यकाल पडता है। अत १२ दिन पूर्व ही दान आदि कृत्य किये जा सकते है।

आज मकर सक्रान्ति का धार्मिक रग फीका पड रहा है। किन्तु पवित्र स्थलो पर लोग स्नान करते है। सभवत मकर सक्रान्ति के समय जाडा होने के कारण तिल जैसे पदार्थ का अतिशय प्रयोग सभव है। उत्तरायण सूर्य के समय प्राय सब जगह कुछ न कुछ उत्सव अवश्य किया जाता था।[4]

सूर्य ग्रहण –

अतिप्राचीन काल से ही सूर्य एव चन्द्र ग्रहणो को महत्व दिया जाता हे। पूर्ण सूर्यग्रहण का सकेत ऋग्वेद[5] मे है। शाखायन ब्राह्मण[6] मे आया है कि अत्रि ने विषुव के

---

1 जहाँ का भोजन मूल मूत्र होता हे।

2 विष्णुपुराण ३ ११ ११८ ११६ कृत्यरत्नाकर पृ० ५४७ वर्वक्रयाकौमुदी पृ० २१६

3 हेमाद्रि, चतुवर्गचिन्तामणि कालखण्ड पृ० ४३६–४३७

4 साम्बपुराण, अध्याय ३४,३५ भविष्य पुराण १५५–५८

5 ऋग्वेद, ५ ४० ५–६ ८

6 शाखायन ब्राह्मण २४ ३

तीन दिनो पूर्व सप्तदश–स्तोम कृत्य किया और उसके द्वारा उस स्वभानु को पछाडा जिसने सूर्य को अधकार से भेद दिया था अर्थात् सूर्यग्रहण[1] शरद विषुव के तीन दिन पूर्व हुआ था। ग्रहण के सम्बन्ध मे विशाल साहित्य[2] का निर्माण हो चुका है।

पुराणो के अनुसार समुद्र मन्थन के उपरान्त अमृतपान के सन्दर्भ मे सूर्य–चन्द्र राहु द्वारा ग्रस लिए गए थे, यही सूर्य ग्रहण है। साम्बपुराण[3] मे सूर्य ग्रहण का वेज्ञानिक विश्लेषण[4] मिलता है। उसका आधार यह है कि यदि राहु द्वारा सूर्य ग्रस लिया जाता तो उसके अतुल तेज से राहु भस्म हो जाता या राहु के सैकडो दातो से वह टुकडे–टुकडे हो जाते। पर निर्मुक्त होने पर सूर्य वैसा ही अखण्ड मण्डल[5] दिखलाई पडता है। ग्रहण के कारण के रूप मे साम्बपुराण मे कथन है कि प्राचीन काल मे ब्रह्मा ने अमृत का जो भाग राहु के लिए रख छोडा था, उसी अमृत को पूर्ण तिथियो मे पास पहुँचकर राहु पीना चाहता है।[6] पृथ्वी के प्रतिबिम्ब को साथ लेकर अधकारमय और अमलाकार वह राहु अमृत पीने

---

1 ऋग्वेद ५ ४० ५

2 हेमाद्रि चर्तुवर्गचिन्तामणि, कालखण्ड, पृ० ३४६–३५८, वर्षक्रियाकौमुदी पृ० ६०–११७, तिथितत्व, पृ० १५०–१६२ कृत्यतत्व, पृ० ४३२–४३४, निर्णय सिन्धु, पृ० ६१–७६ स्मृति कौस्तुभ, पृ० ६६–८० धर्मसिन्धु, पृ० ३२–३५ गदाधर पद्धति, कालासार, पृ० ५८८–५६६ साम्बपुराण अध्याय २३

3 साम्बपुराण, अध्याय–२३

4 त्रिपाठी, माया प्रसाद,डिवलपमेन्ट आफ जियागरफिक नालेज इन एन्शियन्ट इण्डिया पृष्ठ ३८–३६

5 तत्कथ दर्शनैस्तीक्षणै शतधान विखडित.।

निर्मुक्तस्तुपुन दृष्टस्तयैवाखडमडल।। साम्बपुराण २३ ११

6 राहोर्यदामृताद्भाग पुरासृष्ट स्वयभुवा।

तस्मातराहुरभ्येत्य पातुमिच्छति पर्वसु।। साम्बपुराण २३ २६

की इच्छा से, अपने प्रतिबिम्ब से शुक्ल पक्ष मे चन्द्रमा को और कृष्णपक्ष मे सूर्य को ढक लेता है[1] राहु चन्द्रमा और सूर्य को केवल मेघ की तरह ढकता है। अत अमृतपान के बाद सूर्य एव चन्द्र पहले की भाति ही निर्मल दिखलाई पडते है। यह वैज्ञानिक कारण देने के बावजूद भी इस पुराण मे स्नान, दान, जप का विधान किया गया है।[2]

वराहमिहिर ने लिखा है[3] कि चन्द्रग्रहण मे चन्द्र पृथ्वी की छाया मे आ जाता हे, तथा सूर्य ग्रहण मे चन्द्र सूर्य मे प्रविष्ट हो जाता है अर्थात् सूर्य एव पृथ्वी के बीच मे चन्द्र आ जाता है। ग्रहणो के इस कारण को पहले के आचार्य अपनी दिव्य दृष्टि से जानते थे, राहु ग्रहणो का कारण नही है। इस सत्य सिद्धान्त के रहते हुये भी सामान्य लोग राहु को ही ग्रहण का कारण मानते आ रहे है और ग्रहण मे स्नान, दान, जप, श्राद्ध को विशिष्ट महत्व देते जा रहे है।

राहु देखने पर सभी वर्ण के लोग अपवित्र हो जाते हे। अत प्रथम कर्त्तव्य के रूप मे उन्हे स्नान करना चाहिए, फिर अन्य कोई कृत्य करने चाहिए। ग्रहण के पूर्व पकाये हुए भोजन का त्याग कर देना चाहिए।[4] ग्रहण एव सक्रान्ति काल मे स्नान न करने से व्यक्ति सात जन्मो मे कोढी हो जाता है, और दु ख का भागी होता है।[5] ग्रहण बेला के उपरान्त व्यक्ति को ठडे जल मे स्नान करना चाहिए। स्नान गगा, गोदावरी, प्रयागादि

---

1 साम्ब पुराण, अध्याय–२३–१८

2 पुण्य महापवित्र तुस्नानेदानेतथा जपे। साम्बपुराण २३–४०

3 भूच्छाया स्वग्रहणे भास्करमर्कग्रहे प्रविशतीन्दु ।

इत्युपरागकारणमुक्तमिद दिव्यदृग्भिाचाये। राहुर कारणमस्मिन्नि युक्त शास्त्रसद्भाव ।।

बृहत्सहिता, ५,८ एव १३

4 हेमाद्रि चतुर्वर्ग चिन्तामणि, कालखण्ड, पृ० ३६०, कालविवेक, पृ० ५३३ वर्षक्रियाकौमुदी पृ० ६१

5 समय मयूख पृ० १३०

नदियो/पुण्यस्थलो[1] पर पुनीततम माना गया है। बताया गया है कि ग्रहण के समय सभी जल पवित्र हो जाते है। गर्म जल का स्नान केवल बच्चो, बूढो एव रोगियो के लिए आज्ञापित है। ग्रहण आरम्भ होने पर स्नान, होम, देवो की पूजा, ग्रहण के समय श्राद्ध करना चाहिए। जब ग्रहण समाप्त होने को होता है, तब दान किया जाता है। ग्रहण समाप्त हो जाने पर पुन स्नान का विधान है। जन्म–मरण के समय अशौच पर भी ग्रहण के समय स्नान करना चाहिए, गौडीय लेखको के मत से उसे दान या श्राद्ध नही करना चाहिए। निर्णय सिन्धु[2] के मत से अशौच मे

स्नान, दान, श्राद्ध एव प्रायश्चित करना चाहिए। व्यास की उक्ति है कि चन्द्रग्रहण सामान्य दिन से एक लाख गुना फलदायक है और सूर्य ग्रहण पहले से दस गुना। यदि गगाजल (स्नानार्थ) पास मे हो तो चन्द्रग्रहण एक करोड गुना फलदायक है और सूर्यग्रहण

---

1 सर्वगगासमतोय सर्वे व्यास समाद्विजा।

सर्वमेरूसमदान ग्रहणे चन्द्रसूर्ययो ।।

भुजबल, पृ० ३४८ वर्षक्रियाकौमुदी, पृ० १११

कालनिर्णय, पृ० ३४८, समय मयूख, पृ० १३०

गोदावरी भीमरथी तुगभद्रा च वेणिका।

तापो पयोष्णी विन्ध्यस्य दक्षिणे तु प्रकीर्तिता ।।

भगीरथी नर्मदा च यमुना च सरस्वती।

विशोका च वितस्ता च हिमवत्पर्वताश्रिता ।।

एता नद्या पुण्यतमा देवती चान्युिदाहृता। ब्रह्मपुराण, ७० ३३–३५

2 निर्णय सिन्धु, पृ० ६६

उससे दस गुना अधिक।[1] कालनिर्णय[2] ने चन्द्रग्रहण पर गोदावरी मे एव सूर्यग्रहण पर नर्मदा मे स्नान की व्यवस्था दी है। कालविवेक ने देवी पुराण की उक्तियो को देते हुए कार्तिक के ग्रहण मे गगा–यमुना सगम श्रेष्ठ बताया है। मार्गशीर्ष मे देविका मे, पौष मे नर्मदा मे, माघ मे सन्निहिता (कुरूक्षेत्र) मे स्नान पवित्र बताया गया है।

शातातप का[3] कथन है कि ग्रहण के समय दान, स्नान, तप, एव श्राद्ध से अक्षय फल प्राप्त होता है। ग्रहणो को छोडकर अन्य कृत्यो मे रात्रि को[4] राक्षसी माना गया हे। अत रात्रि मे स्नान का निषेध किया गया है। महाभारत मे आया है कि अयन एव विषुव के दिनो मे ग्रहणो पर व्यक्ति को सुपात्र ब्राह्मण को दक्षिणा के साथ भूमि दान देना चाहिए।[5] साम्बपुराण मे आया है कि स्नान, दान और जप मे इस ग्रहण का माहातत्म्य जानने से सब देवताओ का सन्निध्य प्राप्त होता है तथा इसका ध्यान कर सुनकर ओर पढकर मनुष्य समस्त पापो से मुक्त हो जाता है[6] कतिपय शिलालेखो मे ग्रहण के समय

---

1 व्यास । इन्दोर्लक्षगुण प्रोक्त खेर्दशगुण स्मृतम।

गगातोये तु सम्प्राप्ते इन्दो कोटी रवेर्दश।।

हेमाद्रि चतुर्वर्गचिन्तामणि काल खण्ड पृ० ३८४

कालविवेक पृ० ५२१ निर्णय सिन्धु पृ० ६४

2 काल निर्णय पृ० ३५०

3 शातातप, हेमाद्रि चतुवर्गचिन्तामणि, कालखण्ड पृ० ३८७

कालविवेक पृ० ५२७ स्मुतिकौस्तुभ पृ० ७१

4 मनुस्मृति ३ २८०

5 कालनिर्णय पृ० ३५४ स्मृतिकौस्तुभ पृ० ७२

6 पुण्य महापवित्र तु स्नानेदाने तथा जपे।

विदित्वा चास्यमाहात्म्य सर्वदेव समागमम्।

ध्यात्वा श्रुत्वापठित्वाच सर्वपापे प्रयुच्यते।। साम्बपुराण २३४०

भूमिदानो का उल्लेख है। प्राचीन एव मध्यकाल मे राजा एव धनी लोग ऐसा करते थे।[1] आज भी ग्रहण के समय ब्राह्मणो, दीनो, दरिद्रो को दान दिया जाता है। ग्रहण काल जप, दीक्षा, मन्त्रसाधना के लिए उत्तम[2] काल है।

ग्रहण के दरम्यान कृत्यो आदि के लिए कितना समय पुण्यकाल है, इस विषय मे जाबालि के अनुसार जितने समय तक सूर्य ग्रहण हो उतना काल पुण्य काल है। ग्रहण के समय पुण्यकाल को लेकर बडा मतमतान्तर है।[3] कृत्यकल्पतरू का कथन है कि जब सूर्य बादलो मे छिपा हो तो व्यक्ति ग्रहण के प्रतिपादित कर्म को नही भी कर सकता है। हेमाद्रि मनु[4] के कथन पर विश्वास करते हैं कि उदित होते हुए, अस्त होते हुये या जब उसका ग्रहण हो, जल मे प्रतिबिम्बित हो या जब सूर्य मध्याह्न मे हो, उसे नही देखना चाहिए। इस आधार पर वास्तविक ग्रहण दर्शन असम्भव है। हेमाद्रि का मत है कि ग्रहण दर्शन भले ही न हो शिष्ट जन स्नान करते हैं कृत्यरत्नाकर[5] का कथन है जब तक ग्रहण दर्शन योग्य रहता है, तब तक स्नानादि क्रिया होती रहती है। कुछ लोग ऐसा भी तर्क देते है कि दर्शन हो या न हो, ग्रहण मात्र ही ऐसा अवसर है, जब कि स्नान, दान आदि

---

1 इडियन ऐन्टीक्वेरी, ६पृ० ७२–७५, एपिग्रेपिया इण्डिका, ३ पृ० १–७, वही० ३ पृ० १०३–११०, वही० ७ पृ० २०२–२०८, वही० ६ पृ० ६८–१०२, वही० १४ पृ० १५६–१६३ आदि।

2 हेमाद्रि चतुर्वर्ग चिन्तामणि, कालखण्ड, पृ० ३८६ निर्णय सिन्धु पृ० ६७

3 सक्रान्तो पुण्यकालस्तु षोडशोभयत कला।
चन्द्र सूर्योपरागे तु यावद्दर्शनगोचर ।। जावालि, कृत्यकल्पतरू,–
नैयत्कालिक काण्ड पृ० ३६८, हेमाद्रि चतुर्वर्गकनलखण्ड, पृ० ३८८, कृत्यकल्पतरू पृ० ६२५ स्मृतिकौस्तुभ पृ० ६६,७१, कालविवेक पृ० ५२७

4 मनुस्मृति, ४ ३७

5 कृत्यरत्नाकर पृ० ५२६

कृत्य किये जाने चाहिए। किन्तु काल विवेक[1] के अनुसार यदि ग्रहण मात्र ही स्नानादि का अवसर है, तो ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जायेगी कि यदि चन्द्र ग्रहण किसी अन्य द्वीप मे हो तो व्यक्ति को दिन मे ही सूर्यग्रहण के समान अपने देश मे स्नानादि करने होगे। स्मृति कौस्तुभ[2] एव समय प्रकाश[3] मे कहा गया है कि जब व्यक्ति ज्योतिष्शास्त्र से जानता है कि किसी देश मे ग्रहण आखो से देखा जा सकता है, तो उसे उस काल मे स्नानादि कृत्य करने चाहिए।

यदि सूर्यग्रहण रविवार को हो तो ऐसा सम्मिलन चूडामणि[4] कहलाता है। चूडामणि ग्रहण अन्य ग्रहणो की अपेक्षा एक कोटि अधिक फलदायक है। हेमाद्रि के मत से ग्रहण के दिन उपवास करना चाहिए, किन्तु पुत्रवान गृहस्थ को उपवास नही करना चाहिए[5]। ग्रहण के पूर्व ग्रहण काल तथा ग्रहण के उपरान्त भोजन के विषय मे विस्तार के साथ नियम बने है।[6] विष्णुधर्म सूत्र मे व्यवस्था है कि ग्रहण काल मे भोजन नही करना चाहिए ग्रहण समाप्त होने के उपरान्त स्नान करके खाना चाहिए। यदि ग्रहण के पूर्व ही सूर्य या चन्द्र अस्त हो जाये तो स्नान करना चाहिए और सूर्योदय के उपरान्त ही पुन खाना

---

1 कालविवेक पृ० ५२६

2 स्मृतिकौस्तुभ पृ० ७०

3 समय प्रकाश, पृ० १२६

4 विष्णुधर्मसूत्र ६८ १०–३, हेमाद्रि, कालखण्ड, पृ० ३६६, कालविवेक, पृ० ५३७, कृत्यरत्नाकर, पृ० ६२६, वर्षक्रिया कौमुदी पृ० १०२

5 विष्णु धर्मसूत्र ६८ १–३

6 सूर्यग्रहे तु नाश्नीयात् पूर्व यामचतुष्टयम्।

चन्द्रग्रहे तु यामास्त्रीन् बालवृद्धातुरेर्विना।।

हेमादि चतुर्वर्गचिन्तामणि, कालखण्ड, पृ० ३८१ स्मृतिकौस्तुभ पृ० ७६

चाहिए।[1] हेमाद्रि तथा स्मृति कौस्तुभ के अनुसार ग्रहणकाल मे नही खाना चाहिए तथा सूर्य ग्रहण के आरम्भ के चार प्रहर पूर्व भोजन नही करना चाहिए, किन्तु यह नियम बच्चो, बृद्धो एव स्त्रियो के लिए नही है।[2] ग्रहण के पूर्व से तीन या चार प्रहरो की अवधि वैद्य[3] नाम से जानी है। ग्रहणो से उत्पन्न फलो के सम्बन्ध मे विष्णु धर्मोत्तर पुराण मे कहा गया हे कि यदि एक ही मास मे पहले चन्द्र उसके उपरान्त सूर्यग्रहण हो तो इसके प्रभाव स्वरूप ब्राह्मणो एव क्षत्रियो मे झगडे उत्पन्न होते है, उसका उल्टा होने पर समृद्धि की वृद्धि होती है[५] तथा उसी नक्षत्र मे जन्मे व्यक्ति दुख पाते है, इन दुखो का मार्जन शान्ति कृत्यो से हो सकता है।[4] अत्रि के अनुसार यदि किसी व्यक्ति के जन्म दिन के नक्षत्र मे चन्द्र एव सूर्य का ग्रहण हो तो उस व्यक्ति को व्याधि, प्रवास, मृत्यु एव राजा से भय होता हे।[७] साम्बपुराण मे आया है ग्रहण के समय स्नान दान,जप के फलस्वरूप व्यक्ति देवताओ का सानिध्य प्राप्त करता है तथा सभी पापो से मुक्त हो जाता हे।[5]

---

1 काणे, पी०वी०, धर्मशास्त्र का इतिहास भाग ४ पृ० ६५

2 एक स्मिन्यदि मासे स्याद् ग्रहण चन्द्रसूर्ययो।

ब्रह्मक्षत्र विरोधाय विपरीते विवृद्वये।। विष्णुधर्मोत्तर पुराण १८५ ८६

3 विष्णुधर्मोत्तर पुराण १८५ ३३–३४

4 काल विवेक पृ० ५४३

5 साम्बपुराण २३/४०

अध्याय – पाँच

सौर मूर्ति निर्माण परम्परा

अध्याय–पॉच

'सूर्यमर्ति–निर्माण परम्परा एवं विकास'

सैन्धव सभ्यता मे सूर्य प्रतिमा निर्माण का कोई स्पष्ट प्रमाण नही प्राप्त होता है, परन्तु कुछ ठीकरो पर अवश्य ऐसे चिन्ह प्राप्त होते हैं, जो बाद के युग मे सूर्य के प्रतीक के रूप मे स्वीकृत किये गये, जैसे स्वस्तिक, चक्र, किरण–युक्त–मण्डल और मयूर आदि।[1] इन प्रतीको का प्रयोग वैदिक कर्मकाण्डियो द्वारा यज्ञो के अवसर पर किया जाता था। वेदो, महाकाव्यो और पुराणो मे पॉचवी शताब्दी ई०[2] से सूर्यमूर्तियो का उल्लेख मिलता है। जबकि सूर्य मूर्तियो[3] का वास्तविक नमूना प्रथम या द्वितीय शती ई० पू० से ही मिलने लगता है। ये सूर्यमूर्तियॉ ब्राह्मणेतर पथ[4] से सम्बन्धितहैं।

हमे किसी ज्ञात प्रतिमाशास्त्र[5] से इस काल की सूर्य मूर्तियो की विशेषताओ का कोई ज्ञान नही होता है। इन सभी साक्ष्यो से यह सिद्ध होता है कि ई०पू० की कुछ शताब्दियो मे सूर्य मूर्तियो के अकन की परम्परा प्रारभ हो चुकी थी।

---

1 श्रीवास्तव, वी०सी०, सनवर्शिप इन एन्शियेन्ट इण्डिया, पृ० २३–३६

2 मत्स्यपुराण के परवर्ती अध्यायो (५५०–६५०ई०) मे सूर्य मर्तियो का उल्लेख है। हजरा, आ०सी०, पुराणिक रिकार्डस, पृ० ४८ राय, एस०एन, पौराणिक धर्म एव समाज पृ० १६५

3 बोधगया (प्रथम शती ई०पू०), भाजा (प्रथम शती या द्वितीय शती ई०पू०) लाला भगत (द्वितीय शती ई०) और अनन्तगुम्फा (प्रथम शती ई०) से सूर्य मूर्तियो का प्राचीनतम प्रमाण प्राप्त होता है।

बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४३२–३३

4 बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४३२, भाजा ओर बोधगया बौद्ध धर्म से सम्बन्धित हैं, अनन्तगुम्फा जैनधर्म से सम्बन्धित है। लाला भगत की सूर्य मूर्ति ब्राह्मणिक पंथ स्कन्द–कार्तिकेय से सम्बन्धित है। यह कुषाणकालीन सूर्य मूर्ति के समकालीन है।

5 मत्स्य पुराण (अध्याय CCLXI, XCIVI), बृहतसहिता (अध्याय ५७)

वास्तविक सूर्य–मूर्ति परम्परा के विकास से पूर्व हमे मोर्य–शुग काल के पात्रो ओर मृण्मूर्तियो पर सूर्य के कुछ मानवीय चित्रण मिलते है। मानवरूप मे सूर्य देव का प्राचीनतम अकन पटना से प्राप्त मौर्यकालीन पात्र–खण्ड पर पाया गया है जिसमे वह चार घोडो वाले रथ[1] पर अपने सारथि अरूण के साथ खडे है। चन्द्रकेतुगढ[2] से प्राप्त शुगकालीन एक मृण्मूर्ति पर देवता के बगल मे दो स्त्रियॉ प्रदर्शित है और देवता चार घोडो द्वारा चालित एक मिट्टी मे गाडी पर सवार है। हिन्द–यवन और कुषाण सिक्को पर भी ऐसे चित्रण पाये गये है। इन सूर्य मूर्तियो मे ईरानी विशेषताओ का अभाव है।[3]

प्रारभिक सौर मूर्ति परम्परा की चार प्रतिनिधिक मूर्तियॉ[4] बोधगया, भाजा, लालाभगत और अनन्तगुम्फा से प्राप्त हुयी है। बोधगया (प्रथम शती ई० पू०)[5] की मूर्ति मे मुख्य चित्र को चार घोडो द्वारा चालित एक पहिये वाले रथ (एक चक्र)[6] पर आरूढ दिखाया गया है।

---

1 जर्नल आफ इडियन सोसाइटी आफ ओरियन्टल आर्ट, जिल्द–III न० २, १६३५, पृ० १२५, भारतीय कला को बिहार की देन, द्वारा, डा० बिन्धेश्वरी प्रसाद सिह, पृ० ८२, फोटो न० ४६

2 दासगुप्ता, पी०सी०, टेराकोटाज फ्राम चन्द्रकेतुगढ, ललितकला, न० ६, अक्टूबर १६५६ पृ० ४६ इण्डियन आर्कियोलाजी रिव्यूय, १६५५–५६ प्लेट LXXII-B यह मृण्मूर्ति श्री एस० गोश ने पायी थी और अब आशुतोष सग्रहालय कलकत्ता मे सग्रहीत है (T 6838)। शुगकालीन सूर्य की दूसरी मृण्मूर्ति बिहार मे बसाढ (वैशाली) से पायी गयी है।

3 इन सूर्य मूर्तियो मे उदीक्यवेष, अवयग, उपानहपिनद्ध आदि ईरानी विशेषताऍ नही पायी जाती है।

4 शिवराम मूर्ति, सी०, इण्डियन स्कल्पचर, पृ० २६

5 कुमार स्वामी, ए०के०, हिस्ट्री आफ इडियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृ० ३२

6 वैदिक मिथक से पता चलता है कि सूर्य देव के रथ का एक पहिया इन्द्र ने ले लिया था इसलिए उनके रथ को सदैव एक पहिया वाला प्रदर्शित किया जाता है।

उनके दोनो ओर तीर चलाती हुई महिला अनुचर है। चित्र के चतुर्दिक एक पुरूष की अर्द्धमूर्ति दिखायी देती है। स्त्री मूर्तियॉ उषा और प्रत्यूषा की हैं जो अधकार को दूर करती हुई प्रभात के विभिन्न रूपो की प्रतिनिध है। पुरूष की अर्द्धमूर्ति अन्धकार रूपी राक्षस की है। रथ मे मुख्य चित्र के पीछे किरण युक्त बिम्ब है। मुख्य चित्र के ऊपर छाता है। विद्वान् इस चित्र को सूर्य देव का चित्र[1] मानते हैं। बोधगया, भाजा, लाला भगत, अनन्तगुम्फा तथा मथुरा (कुषाण) की सूर्य मूर्तियो मे काफी समरूपता देखकर बोधगया के चित्र को सूर्य का चित्र माना जाता है। मुख्य चित्र के परवर्ती एक चित्र के हाथ मे लगाम है। केवल यह कथन कि चित्र अरूण की तरह अपने हाथ मे लगाम पकडे है, सूर्य के सारथि अरूण से तादात्म्य[2] स्थापित करने के लिए पर्याप्त नही है। अनन्तगुम्फा के चित्र मे सूर्य अपने बाये हाथ मे लगाम पकडे दिखायी देते है। यदि यह चित्र अरूण का मान ही लिया जाय तो यह अजीब है कि मुख्य देवता प्रतीक रूप मे और उनके अनुचर मानव रूप मे चित्रित है। बोधगया की मूर्ति सक्रमण काल से सम्बन्धित है, इसलिए उसी चित्र मे एक ओर देवता के मानवीय चित्रण के साथ–साथ प्रतीक चित्रण का मिलना कोई आश्चर्य नही हे। किरण युक्त बिम्ब देव के प्रभामडल का सूचक है। यह सभव है कि किरण युक्त बिम्ब से ही प्रभामण्डल की परम्परा[3] का जन्म हुआ हो।

---

1 बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४३२ कुमार स्वामी, ए०के०, हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृ० ३३ मार्शल, जे०, जर्नल आफ रायल एशियाटिक सोसायटी आफ ग्रेट ब्रिटेन एण्ड आयरलैण्ड, लन्दन, १९०८, पृ० १०६६

2 बरूआ, बी०एम०, गया और बोधगया, जिल्द [illegible] पृ० ८६

3 कुमारस्वामी, ए०के०, हिस्ट्री आफ इडियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृ० ४१

दूसरा उदाहरण भाजा की बौद्धगुफा (प्रथम या द्वितीय शती ई० पू०)[1] की मूर्ति का हैं यह मूर्ति बोध गया की सूर्य मूर्ति के समरूप है। चार घोडो वाले रथ मे एक शाही चित्र के साथ दो स्त्रियॉ एक छत्र और दूसरी चौरी लिये हुए अकित हैं। बोधगया की मूर्ति की अपेक्षा इस मूर्ति की दो अतिरिक्त विशेषताएँ हे। प्रथम यह कि घोडे की पीठ पर सवार के दो अगरक्षक और दो स्त्रियॉ अकित है। दूसरा यह कि रथ का पहिया निर्लज्जतापूर्वक नगी स्त्री के चित्रो के समीप से गुजरता है। यहॉ किसी पुरुष की अर्द्धमूर्ति नही है। नगी राक्षस स्त्री का अकन अधकार और रात्रि रूपी राक्षस का सूचक है। घोडे के पीठ पर आरूढ सवार का अगरक्षक सूर्य से सम्बन्धित रेवन्त है। जोहान्स[2] का विचार है कि यह चित्र सयुक्त निकाय मे वर्णित शक्र और असुरो के मध्य युद्ध की कहानी को प्रदर्शित करता है जिसमे प्रकाश और अन्धकार के मध्य युद्ध के सौर विषय को स्वीकार किया गया है। वासुदेव शरण अग्रवाल की धारणा[3] है कि यह मान्धाता के उत्तरकुरू अभियान के दृश्य को प्रदर्शित करता है लेकिन इसका विस्तृत स्पष्टीकरण मूर्ति से नही होता है।

लालाभगत (कानपुर, उ०प्र०, द्वितीय शती ई०)[4] की मूर्ति बोधगया और भाजा के सदृश है। सूर्यदेव चार घोडो द्वारा चालित एक पहिये वाले रथ पर सवार हैं। दो महिला अनुचर अपने बाये हाथ मे छत्र और दाये हाथ मे चौरी लिये हुए प्रदर्शित हैं। नीचे भद्दे

---

1 बर्गेस, जे०, आर्किटेक्चरल एन्टीक्वीटीज आफ वेस्टर्न इडिया, पृ० ५१८, बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४३३, सरस्वती, एस०के०, ए सर्वे आफ इडियन स्कल्पचर, पृ० ५७ कुमार स्वामी, ए०के०, हिस्ट्री आफ इडियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट पृ० २५ चित्र २४, सभी इसका तादात्म्य सूर्य से स्थापित करते है।

2 जोहान्स, ई०एच०, जर्नल आफ इण्डियन सोसाइटी आफ ओरियन्टल आर्ट, VII, 1939 पृ० १–७

3 अग्रवाल, वी०एस०, इण्डियन आर्ट, पृ० ७३

4 बनर्जी, जे०एन०, डिवपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४३३

नगे बौनो के समूह के ऊपर[1] वस्त्रो से सुसज्जित दो या तीन महिला चित्र खडी मुद्रा मे अकित हैं। जो सभवत उनकी तीन रानियो–उषा, प्रत्यूषा और छाया का है। देवता के पेरो का निचला भाग रथ से छिपा है।[2] यह मूर्ति एक स्तभ पर अकित है जो इस बात का सूचक है कि गरूडध्वज की परम्परा[3] की तरह सूर्यध्वज की परम्परा भी थी। इसकी पुष्टि अवति से प्राप्त कुछ स्थानीय सिक्को और साहित्यिक साक्ष्यो से[4] होती हैं यह सूर्य देव और स्कन्द[5] के मध्य घनिष्ठ साहचर्य को भी सूचित करता है।

प्रारभिक सौर मूर्ति परम्परा का एक उदाहरण अनन्तगुम्फा (खण्डगिरि, उडीसा, प्रथम शती ई०)[6] की सूर्य मूर्ति का है। अनन्तगुम्फा की सौर मूर्ति बोधगया[7] और लाला भगत के सौर चित्रो का सस्मारक हैं सूर्य देव चार घोडो से खीचे जा रहे एक पहिये वाले रथ पर सवार है। सूर्य देव के दोनो ओर चौरी और छत्र लिये हुए एक महिला का अकन है। देव के दाहिने हाथ मे कमल और बाये हाथ मे लगाम है। दाहिने छोर पर उडती हुई

---

1 जर्नल आफ इडियन सोसाइटी आफ ओरियन्टल आर्ट, XVI पृ० ५५

2 पाण्डेय, एल०पी०, सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, १६७१,पृ० ७०

3 कनिघम, ए०, आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इडिया एनुअल रिपोर्टस, १६२६–३० पृ० १३० ff प्लेट XXXI कनिघम इस स्तभ की तुलना बेसनगर के गरूडध्वज से करते हैं।

4 श्रीवास्तव, वी०सी०, दी रिलीजियस स्टडी आफ ए सिम्बल आन एन अवन्ति क्वाइन, मेमवार्ज, न० २, बी०एच०यू०, पृ० १३३–३६

5 जर्नल आफ इडियन सोसाइटी आफ ओरियन्टल आर्ट, XVI पृ० ५५

6 जर्नल आफ इडियन सोसाइटी आफ ओरियन्टल आर्ट, XVI पृ० ५४

7 फर्गुसन ने तत्वगुम्फा गुहा की पिछली दीवाल के मध्य मे सूर्य और चन्द्रमा की दूसरी मूर्ति के अकन का उल्लेख किया है। यह खण्डगिरि पहाडी के कुछ नीचे उत्कीर्ण है। पृ १८ अध्याय, जैन आर्किटेक्चर, हिस्ट्री आफ इडियन एण्ड ईस्टर्न आर्किटेक्चर,

मुद्रा म' एक राक्षस का अकन है। इस प्रकार अनन्तगुम्फा और लालाभगत की सूर्य मूर्ति मे अनेक सर्वनिष्ठ विशेषताएँ है।

मथुरा[2] के जमाल पुर टीले की खुदायी से प्राप्त एक बौद्ध पट्टी पर सूर्य देव का एक अन्य सयोजन मिला है जिसमे वैसी ही प्रतिमाशास्त्रीय विशेषताएँ चित्रित है। सूर्य देव चार घोडो द्वारा चालित अपने रथ मे बैठे है। उसी पट्टी पर[3] तीन अन्य बोद्ध दृश्य भी चित्रित है।

इस प्रकार अनेक सूर्य मूर्तियाँ बौद्ध और जैन मन्दिरो मे पायी गयी है। सभवत वहाँ उनकी उपस्थिति का कारण यह था कि बौद्ध और जैन धर्म के अभ्युदय के पूर्व ब्राह्मण धर्म ने धार्मिक क्षेत्र को अभिभूत कर लिया था। इसलिए इन दोनो ब्राह्मणेतर मतो ने अपने देवताओ को हिन्दू देवताओ से सम्बन्धित कर लोकप्रिय बनाने का प्रयास किया। यही कारण है कि बौद्ध धर्मानुयायी बुद्ध को सूर्य का भाई (आदित्य बन्धु) मानते है। जैन धर्मानुयायियो ने भी इसी नीति का अनुसरण किया। भाजा और बोधगया की सूर्य मूर्तियाँ बौद्ध परम्परा का परिणाम है।

यह बहस का विषय है कि प्रारभिक सौर मूर्तियाँ स्वदेशी या विदेशी परम्पराओ से प्रेरित है। कनिघम[4] का मानना था कि चार घोडे और सामान्य प्रदर्शन यूनानी सूर्य देव

---

1 जर्नल आफ इडियन सोसायटी आफ ओरियन्टल आर्ट, XVI पृ० ५६

2 यह पट्टी इस समय राजकीय सग्रहालय, लखनऊ मे सुरक्षित है। आर्कियोलाजी सर्वे आफ इडिया एनुअल रिपोर्टस, १९०९–१० पृ० ६६

3 बरूआ, बी०एम०, भरहुत, जिल्द III पृ० ५४ प्लेट, LXII चित्र ७१ बनर्जी, जे०एन०, प्रोक आफ दि टेन्थ सेसन आफ दी इडियन हिस्ट्री काग्रेस, बाम्बे पृ० ६५–६८ देखे, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ३२१ जर्नल इडियन सोसायटी आफ ओरियन्टल आर्ट, जिल्द १६,१९४८, पृ० ५७–५९

4 आर्कियोजाजिकल सर्वे आफ इडिया एनुअ रिपोर्टस III पृ० ९७

हेलिओस के चित्रण के सदृश है। बनर्जी[1] का मत इसके विपरीत है। उनका मानना है कि सूर्यदेव का चित्रण वैदिक परम्परा के अनुरूप है। उनके अनुसार बोधगया की सूर्य मूर्ति और यूनानी सूर्य देव हेलिओस मे वाह्य रूप से समानता है। ऋग्वेद मे सौर रथ मे जुते[2] घोडो की निश्चित सख्या सात दी गयी है। ऋग्वेद मे सौर रथ के सदर्भ मे चार सख्या का कोई विशेष महत्व नही है। भारत के सभी प्रतिमाशास्त्रो मे सौर रथ मे जुते घोडो की सख्या सात बतायी गयी है। दूसरी ओर ईरानी और यूनानी परम्परा मे सोर रथ को चार घोडो द्वारा चालित बताया गया है। अवेस्ता मे उल्लिखित हे कि मिथ्र[3] अपने चार घोडो वाले रथ से अनन्त आकाश की यात्रा करते है। अत सौर रथ मे जुते चार घोडो के चित्रण मे हेलेनिस्टिक परम्परा का प्रभाव माना जा सकता है।

सूर्य देव अपने शाही रथ मे बैठे या खडे हुए प्रदर्शित हैं। उनकी दो पत्नियॉ उषा और प्रत्यूषा अन्धकार रूपी राक्षस को मारने मे उनकी सहायता करती हुई प्रदर्शित हैं। थोडा बाद मे उनकी तीसरी पत्नी छाया भी सूर्य के साथ दिखायी देती हैं। कभी–कभी अरूण कवच पहने प्रदर्शित है रथ मे मात्र एक पहिया प्रदर्शित है। ऐसा माना जाता है कि दूसरा पहिया इन्द्र ने निकाल लिया था। सूर्य देव के पैरो का निचला भाग सदैव छिपा रहता है।ये विशेषताऍ सूर्य मूर्ति की भारतीय उत्पत्ति और स्वदेशी लक्षण को अभिव्यक्ति करती है। इन मूर्तियो मे मध्यएशियाई विशेषताओ–ऊँचे जूते और ईरानी कोट का अभाव यह स्पष्ट करता है कि इन मूर्तियो पर प्रत्यक्ष रूप से नही बल्कि हेलेनिस्टिक स्रोत[४] के माध्यम से विदेशी प्रभाव पडा।

---

1 जर्नल आफ इण्डियन सोसायटी आफ ओरियन्टल आर्ट, XVI पृ० ५४

2 ऋग्वेद I 115 3,X 37 3,49 7,V29 5,V45 9,IV 13 3

3 कुमण्ट प्रैंक, (द्वारा उदघृत) दी मिस्टरीज आफ मिथ्र पृ० २

4 बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० २५६–५६

सौर प्रतिमा–निर्माण परम्परा के द्वितीय काल (द्वितीय शताब्दी ई० छठी शती ई०)[1] मे हेलेनिस्टिक, भारतीय और ईरानी तीनो परम्पराओ को ग्रहण किया गया। गाधार ओर मथुरा क्षेत्रो से पाई गयी कुषाण और परवर्ती कुषाण काल की कई सूर्य मूर्तियो मे ये विशेषताएँ दृष्टगत होती है। गान्धार से प्राप्त (कुषाणकालीन)[2] काले स्लेटीपत्थर पर सूर्य का एक लघु चित्र ऊँचा बूट[3] पहने प्रदर्शित है। ऊँचे जूते के अतिरिक्त चार घोडो द्वारा चालित रथ और दोनो ओर दो महिला अनुचरो का अकन प्राचीन परम्परा है। मग जाति की[4] सूर्योपासना के सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थलो मे से मथुरा एक था। कुषाण शासको के सरक्षण मे सूर्योपासना का मग स्वरूप अपने उत्कर्ष पर पहुँच गया।[5]

मथुरा सग्रहालय मे कुषाणकालीन[6] सूर्य मूर्ति सख्या D-46 मे सूर्यदेव एक भारी चोली पहने हुए चार घोडो द्वारा चालित एक रथ पर बैठे हैं। वह अपने दाये हाथ मे एक

---

1 श्रीवास्तव, वी०सी० सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, पृ० २६७

2 बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, प्लेट XXVIII चित्र ३ इसकी तिथि विवाद का विषय है। देखे, कुमार स्वामी, ए०के० हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृ० ५१

3 कुमारस्वामी, ए०के०, हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड इण्डानेशियन आर्ट, पृ० ६६

4 मिराशी, वी०वी० थ्री एन्शियन्ट फेमस टेम्पल्स आफ दी सन–पुराण,१६६६ जिल्द, VIII न० पृ० ४२ कालपी मथुरा राज्य मे है।

5 कुमारस्वामी, ए०के०, हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृ० ६६ सरस्वती, एस०के०, ए सर्वे आफ इण्डियन स्कल्पचर, कलकत्ता, १६५७ पृ० ६२ शिवराममूर्ति, सी०, इण्डियन स्कल्पचर, पृ० ३६

6 अग्रवाल, वी०एस०, ए कैटलाग आफ दी ब्राह्मनिकल इमजेज इन मथुरा आर्ट, जर्नल आफ यू०पी० हिस्टोरिकल सोसाइटी, १६४६, जिल्द XXII पृ० १६७ वेगोल, जे० पीएच० मथुरा म्युजियम कैटलाग, बी, पृ० १०४ कुमारस्वामी, ए०के०, हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, पृ० ६७– चित्र १०३

कलिका कमल तथा बाये हाथ मे खण्डित कटारी लिये है।[1] उनके बालो की लट लम्बी है और उनकी ग्रीवा के चारो ओर एक प्रकार की टोपी है। उनका पेर रथ से छिपा होने के कारण दिखायी नही देता है।[2] उनके सिर के पीछे सौर बिम्ब या वर्षा के बादल हे। उनके कधे से एक जोडा पख[3] जुडा है। इस मूर्ति मे वैदिक[4] और ईरानी विशेषताओ का सुन्दर समन्वय हैं। चार घोडो द्वारा चालित रथ, जैसा बोधगया की मूर्ति[5] मे अकित हे, हेलेनिस्टिक परम्परा का सूचक है। हाथ मे कमल और कधे से जुडा पख स्वदेशी परम्परा[6] तथा भारी चोली, ऊँचे जूते तथा कटारी के अकन पर ईरानी परम्परा[7] का प्रभाव परिलक्षित होता है।

मथुरा सग्रहालय की मूर्ति सख्या २६६ मे कुषाणकालीन[8] सूर्य कुषाण शासक की तरह दो घोडो द्वारा चालित रथ पर बैठे है। वह चोली, पायजामा ओर जूता पहने हें। उनके सिर पर शिरस्त्राण, कानो मे बाली और गले मे हार है। मूर्ति सख्या D-46 की तरह इस चित्र के सूर्य भी अपने दाये हाथ मे कमल की कलिका और बाये हाथ मे कटारी

---

1 आर्कियोजालिकल सर्वे आफ इडिया एनुअल रिपोर्टस १९०६–१० पृ० ७५–७६ इस प्रकार की मूर्ति लखनऊ सग्रहालय मे सुरक्षित है।

2 बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकलोग्राफी, पृ० ४३४

3 बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकलोग्राफी, पृ० ४३३

4 बोगेल, मथुरा म्युजियम कैटलाग, बी, पृ० १०५

5 अग्रवाल, वी०सी०, ए कैटलाग आफ दी ब्राह्मनिकल इमजेज इन मथुरा आर्ट, जर्नल आफ यू०पी० हिस्टोरिकल सोसाइटी, पृ० १६७

6 सरस्वती, एस० के०, ए सर्वे आफ इण्डियन स्कल्पचर, पृ० ६६

7 वी०सी० भट्टाचार्य, इण्डियन इमजेज, पृ० १७

8 अग्रवाल, वी० एस०, ए कैटलाग आफ दी ब्राह्मनिकल इमजेज इन मथुरा आर्ट, पृ० १६७ वोगेल, जे० पीएच०, ल स्कल्पचर डे मथुरा, पृ० ४६ प्लेट XXXII (b)

लिये है। पीछे की ओर प्रभामण्डल हैं। पादपीठिका के अग्रभाग पर यज्ञवेदी का अकन है। इस प्रकार यह चित्र पूर्णत ईरानी है। यज्ञवेदी हमे अग्नि–सूर्योपासक मगो का स्मरण दिलाता है।

मथुरा सग्रहालय की कुषाणकालीन अन्य सूर्य मूर्तियो मे मूर्ति सख्या ८६४, ६३८,१००६ और २०२६ पूर्णत ईरानी शैली मे है। मथुरा सग्रहालय की सूर्य मूर्ति सख्या ६२० और ६३६ मे सूर्य को भद्रासन मुद्रा मे बैठा हुआ प्रदर्शित किया गया है। मूर्ति सख्या ६२२ मूर्ति सख्या D-46 के सदृश है। विद्वानो ने कुछ अन्य मूर्तियो जैसे–D-1,D-2[1] और ८८६ को सूर्य मूर्ति के रूप मे स्वीकार किया है।

प्रारभिक गुप्तकालीन सूर्य मूर्तियो मे कुषाणकालीन[2] विदेशी विशेषताओ का अकन है। मथुरा सग्रहालय मे इस काल की कई सूर्य मूर्तियॉ हैं। गुप्तकाल की[3] मथुरा मूर्ति सख्या ६३० मे सूर्य देव बाये हाथ मे कटार और दाये हाथ मे कमल लिए हुए बैठे हैं। दाहिनी ओर कुलाह धारण किये हुए पिगल का अकन है। दोनो (सूर्य और पिगल) प्रभामण्डल से युक्त हैं। इस काल की मूर्ति सख्या १२४ मे सूर्य देव रथ पर पलथी मारकर बेठे है। रथ मे सात घोडे जुते है। मूर्ति सख्या १२२ मे सूर्य देव सात घोडो द्वारा चालित रथ पर अपने सारथि अरूण के साथ पलथी मारकर बैठे है। मूर्ति सख्या १२२ से, परवर्ती

---

1 वोगेल, जे० पी०एच०, <u>ल स्कल्पचर डे मथुरा</u>, पृ० ६४ लेकिन अग्रवाल इसे पिगल की मूर्ति मानते हैं। देखे, अग्रवाल, वी०एस०, <u>ए कैटलाग आफ दी ब्राह्मनिकल इमजेज इन मथुरा आर्ट</u>, पृ० ७२–७३

2 बनर्जी, जे०एन०, <u>डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी</u>, पृ० ४३५, अग्रवाल, वी०एस०, <u>दी गुप्त आर्ट</u>, <u>जर्नल आफ यू०पी० हिस्टोरिकल सोसाइटी</u>, जिल्द XVIII,1945 गुप्तकालीन सूर्य मूर्तियो और दण्ड तथा पिगल के अकन मे ईरानी प्रभाव दृष्टगत है।

3 अग्रवाल, वी०एस०, <u>दी गुप्त आर्ट</u>, <u>जर्नल आफ यू०पी० हिस्टोरिकल सोसाइटी</u>, पृ० १६८–१७०

गुप्तकालीन मूर्ति सख्या ८६५,१३६५,१६७६ और ५१५ इस अर्थ मे भिन्न है कि इनमे अरूण काअकन नही है। मूर्ति सख्या ८८८ मे सूर्य देव बैठे है। उनके दोनो हाथो मे कमल है। दाये और बाये क्रमश उषा और प्रत्यूषा का अकन है। मूर्ति सख्या ८८८ परवर्ती गुप्तकाल की मूर्ति सख्या १२३ और ११७३ के सदृश है। लेकिन परवर्ती चित्र मे उषा और प्रत्यूषा का अकन नही है। इन मूर्तियो को गुप्तकालीन बैठी हुई सूर्य मूर्ति[1] माना जाता है। गढवा[2] से प्राप्त एक सोहावटी पर सूर्य के इस रूप का सुन्दर चित्रण मिलता है।

मथुरा सग्रहालय की मूर्ति सख्या १०१३,१५५६ और २३१४ मे सूर्य देव भद्रासन मुद्रा मे प्रदर्शित हैं। मूर्ति सख्या १०१३ मे सूर्य दो प्रभामण्डल से युक्त हैं। उनके दोनो हाथो मे कमल है। दाहिनी ओर टोपी पहने पिगल है। मूर्ति सख्या १५५६ मे दो प्रभामण्डल से युक्त एक पुरूष का अकन है। उसके बाये हाथ मे कटार और सभवत दाहिने हाथ मे एक कमल है। वह एक ऊँचे आसन पर बैठा है। वह ईरानी कोट, पायजामा तथा घुटने तक जूता पहने है। मूर्ति सख्या २३१४ भी इसी प्रकार है। परवर्ती गुप्तकालीन चित्र सख्या २५०७ मे[3] सूर्य पलथी मारकर बैठे है।

मूर्ति सख्या ५६५,१०५८,१२५६ और २३३६ मे सूर्य खडे है।[4] मूर्ति सख्या ५६५ मे सूर्य अपने दोनो हाथो मे कमल लिए हुए खडे है। पिगल के दाहिने हाथ मे कलम ओर पेपर है। दण्ड के बाये हाथ मे त्रिशूल है। सूर्य देव मुकुट पहने है। मूर्ति सख्या १०५८, चित्र सख्या ५६५ के समान है लेकिन इसमे सूर्य का बाया हाथ उठा है और प्रभामण्डल का

---

1 मत्स्यपुराण और विष्णुधर्मोत्तर पुराण मे इस प्रकार का उल्लेख है।

2 अग्रवाल वी०एस०, ए आर्ट गाइड बुक टू दी आर्कियोलाजिकल सेक्सन आफ दी प्राविन्सिअल म्युजियम, लखनऊ न० २२३ ।

3 अग्रवाल, वी०एस०, ए आर्ट गाइड बुक टू दी आर्कियोलाजिकल सेक्सन आफ दी प्राविन्सिअल म्युजियम, लखनऊ न० २२३A

4 वही० पृ० १६६ ff

अकन है। मूर्ति सख्या १२५६ भी चित्र सख्या ५६५ के सदृश है लेकिन इसमे मूछ और दाढी का अकन है। इसे ३०६ और ३८६ ई० के मध्य का माना जाता है।[1] मूर्ति सख्या २३३६ भी इसी प्रकार का है। इन मूर्ति के अकन मे भारतीय परम्परा का अनुकरण किया गया है। मूर्ति सख्या १००७ मे सूर्य का आवक्ष रूप अकित है। वह मोतियो की लड, एक कोट और गुलूबन्द पहने है। कधो तक उठे हुए हाथ मे कमल है। मूर्ति सख्या ३८८४ मे[2] सूर्य का आवक्ष रूप अकित है। वह मुकुट तथा कोट पहने है। उनके कानो मे मुकुल कमल का कुण्डल है। वह खिला हुआ सनाल दो कमल लिए हैं। मूर्ति के पीछे प्रभामण्डल है। उषा और प्रत्यूषा बाण छोडते हुए प्रदर्शित है। यह मूर्ति परवर्ती गुप्तकालीन है। यह मथुरा सग्रहालय की मूर्ति सख्या ५६५ और २३३६ के अनुरूप है।

गुप्तकालीन सौर मूर्तियॉ न केवल मथुरा (उ०प्र०) तक ही सीमित थी बल्कि पूर्वी, मध्य और पश्चिमी भारत, यहॉ तक कि अफगानिस्तान तक इनका विस्तार मिलता है। इन क्षत्रो की गुप्त और उत्तरगुप्तकाल की प्रतिनिधिक सूर्य मूर्तियो का सक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है—

उत्तरी बगाल के राजशाही जिले मे स्थित कुमारपुर[3] और नियामतपुर[4] नामक दो स्थलो से दो सुन्दर सूर्य मूर्तियॉ प्राप्त हुयी है। इनका समय प्रथम शती ई० और तृतीय शती ई० के मध्य[5] माना जाता है। कुमारपुर की सूर्य मूर्ति मे सूर्य देव एक ऊॅची

---

1 अग्रवाल, वी०एस०, ए आर्ट गाइड बुक टू दी आर्कियोलाजिकल सेक्सन आफ दी प्राविन्सिअल म्युजियम, लखनऊ न० २२३A पृ० ६६

2 वाजपेयी, के०डी०, सम न्यू मथुरा फाइन्डस, जर्नल आफ यू०पी० हिस्टोरिकल सोसाइटी, १९४८, पृ० ११७–३०

3 सरस्वती, एस० के०, जर्नल आफ डिपार्टमेन्ट आफ लेटर्स, जिल्द XXXI 1938 'अर्ली स्कल्चरस आफ बेगाल' पृ० १२

4 वही० पृ० १२ इन दोनो मूर्तियो मे जूते का अकन नहीं है।

5 सरस्वती, एस०के०, अर्ली स्कल्पचर आफ बगाल, पृ० १२

पादपीठिका पर खडे है। उनके दो अनुचरो के मध्य सौर रथ के सात घोडो का अकन है। उनके दोनो हाथो मे सनाल कमल है। सूर्य देव लम्बी चोली तथा सिरस्त्राण से युक्त है।

नियामतपुर की सूर्य मूर्ति मे देवता निचली पादपीठिका पर खडे हैं। इसमे घोडे का अकन नही हे। उनके दोनो ओर दो अनुचर–दण्ड ओर पिगल उपस्थित हैं। देवता टोपी और लम्बी चोली पहने है। उनके दोनो हाथो मे कमल है। इस मूर्ति मे उनकी दो रानियो का अभाव है। वस्त्राभूषण मे ये दोनो सूर्य मूर्तिया कुपाणकालीन मूर्तियॉ जैसी[1] हैं। इन दानो मूर्तियो मे गुलूबन्द और पेटी का अकन है। सूर्यदेव के सात घोडो का अकन है।

सूर्य की एक दूसरी मूर्ति भूमरा[2] (नागोद, म०प्र०) के शिवमन्दिर की चैत्य–गवाक्ष के भीतरी भाग से मिली है। देवता लम्बा बेलाकार सिरस्त्राण, लम्बा कोट, कमर मे गुलूबन्द पहने है। उनके पैरो मे जूता है। उनके हाथो मे दो कमल कलिका है। उनके साथ दण्ड और पिगल नामक दो अनुचर हैं। लेकिन इसमे देव के रथ और घोडो का अभाव है।[3] सभवत स्थान की कमी के कारण उनका अकन न किया जा सका। इस मूर्ति की प्रमुख विशेषता यह है कि देवता के कमर मे गुलूबन्द है। यह विशेषता पूर्व गुप्तकाल की मूर्तियो मे नही पायी जाती है।

अफगानिस्तान के खैरखानेह[4] नामक स्थल से प्राप्त एक मूर्ति मे सूर्य देव अरूण चालित[5] शाही रथ मे बैठे अकित है। यह मूर्ति सम्प्रति काबुल सग्रहालय मे है। इस मूर्ति मे देवता के दाहिनी ओर दाढी वाला एक व्यक्ति (कुण्डी या पिगल) और बायी ओर लम्बा

---

1 बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४३५

2 आर्कियोलाजिक सर्वे आफ इडिया एनुअल रिपोर्टस १६२०–२१ पृ० ११

3 बनर्जी, आर०डी०, दी टेम्पल आफ शिव एट भूमरा, मेमवार्ज आफ आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इडिया, न० १६ पृ० १३, प्लेट XIVa बनर्जी इसे परवर्तीगुप्तकाल का मानते है।

4 जर्नल आफ इडियन सोसाइटी आफ ओरियन्टल आर्ट, जिल्द XVI प्लेट XIV2

5 बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४३६

दण्ड धारण किये हुए एक व्यक्ति (दण्ड) अकित है। सूर्य देव मोती झालर वाली चोली पहने है। यह मूर्ति ३०६ ई० ३८६ ई० के मध्य[1] की मानी जाती है।

बगाल मे परवर्ती गुप्तकालीन[2] दो सूर्य मूर्तियॉ देवरा और काशीपुर से प्राप्त हुयी है। ये अधुना नरेन्द्र रिसर्च सोसाइटी राजशाही[3] के सग्रहालय मे सुरक्षित हे। देवता किरीट मुकुट, आभूषण और कमर मे पेटी से कसी हुयी धोती[4] पहने है। उनके बायी ओर एक छोटी तलवार लटक रही है। उनके पैर का जूता आशिक रूप से दिखायी देता है। सिर के पीछे गोलाकार प्रभामण्डल है। दोनो हाथो मे सनाल कमल है। देव के दो अनुचर दण्ड–पिगल उपस्थित है। देवता के दाये–बाये बाण छोडती हुयी उषा और प्रत्यूषा अकित है। देवता के समक्ष उनका सारथि अरूण बैठा हुआ प्रदर्शित है। पादपीठिका पर रथ का पहिया और सात घोडे अकित है। काशीपुर की सूर्य मूर्ति देवरा के सदृश है।[5] दोनो एक ही काल की है। अरूण, उषा और प्रत्यूषा देव के सहचर है। रथ मे एक पहिया है। रथ के नीचे अधकार के सकेतक दो राक्षस अकित है। यह मूर्ति बोधगया और भाजा की पूर्व तकनीक की पुनरावृत्ति है।[6]

---

1 अग्रवाल, वी० एस०, ए कैटलाग आफ दी ब्राह्मनिकल इमजेज इन मथुरा आर्ट, जर्नल आफ यू०पी० हिस्टोरिकल सोसाइटी, १६४६ पृ० १७०

2 बनर्जी, जे० एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४३६

3 सरस्वती, एस०के०, जर्नल आफ डिपार्टमेण्ट आफ लेटर्स, जिल्द XXX, 1938 पृ० २२ चित्र ५ देखे–बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४३५

4 बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४३६

5 बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, प्लेट XXVIII, चित्र ४

6 वही०, पृ० ४३६

असम मे दहपरबतिया के मन्दिर से प्राप्त एक गोलाकार पदक पर बैठी हुयी मुद्रा मे सूर्य का अकन है।[1] यह उत्तर गुप्तकालीन (लगभग छठी शती ई०) है। सूर्य देव के दोनो हाथ मे कमल है। उनके दोनो ओर दो अनुचर है।

शाहपुर मे टीले से उत्तरगुप्तकालीन (६६१ई०) एक उत्कीर्णित सूर्य मूर्ति मिली है।[2] इस पर आदित्यसेन देव' उत्कीर्ण है। इसमे, दो फिट दस इच का एक व्यक्ति अपने प्रत्येक हाथ मे कमल लिये हुएअकित है। उसके दोनो ओर खडी मुद्रा मे एक लघु चित्र अकित है। इस प्रकार इस मूर्ति मे गुप्तकालीन प्रचलित सभी विशेषताएँ है।

बृहत्सहिता,[3] मत्स्यपुराण[4], अग्निपुराण, विश्वकर्माशिल्प[5] तथा भविष्यपुराण[6] मे सूर्य देव और उनकी मूर्तियो का उल्लेख मिलता है।

गुप्तकालीन सूर्य मूर्तियो के अध्ययन से स्पष्ट है कि इन मूर्तियो मे ईरानी और भारतीय परम्पराओ का सुन्दर समन्वय है। ईरानी कोट, ऊँचे जूते, सिथियन सिरस्त्राण, कमर मे पेटी, अनुचर दण्ड तथा पिगल का चित्रण आदि ईरानी विशेषताओ के चरमोत्कर्ष को सूचित करता है। दूसरी ओर सूर्य मूर्तियो के दोनो हाथो मे सनाल कमल का अकन भारतीय परम्परा को प्रदर्शित करता है।

---

1 बनर्जी, आर०डी०, आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इडिया एनुअल रिपोर्टस, वर्ष १९२४–२५ पृ० ९८–९९

2 कनिघम, ए०, आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इडिया एनुअल रिपोर्टस जिल्द XV पृ० १२

3 अध्याय ५७,४६–४८

4 मत्स्यपुराण, २६१ I

5 वसु, एन० एन०, (द्वारा उद्धत), आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ मयूरभज, देखे, राव, टी०ए०जी०, एलीमेन्टस आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, जिल्द I भाग, II पृ० ३०२

6 भविष्य पुराण १२४ १३–२६

भारत के विभिन्न भागो से पूर्वमध्यकालीन अनेक सूर्यमूर्तियॉ मिली हैं। कमल पुष्प पर खडे सूर्य देव की एक मूर्ति वाराणसी (उ०प्र०) मे[1] भेलूपुर थाना के समीप से मिली है। इसमे सूर्य देव कमल पर खडे हैं। वह अपने दोनो हाथो से कमल लिये हैं, जो अशत खण्डित है। उनके सिर के पिछे प्रभामण्डल है। उनके दोनो ओर 'प्रत्यालीद'' मुद्रा मे उषा और प्रत्यूषा का अकन है। वे बाण छोडती हुयी अकित है। बाण सूर्य की किरणो का सूचक है। उनके दाहिनी ओर पिगल और बायी ओर दण्ड का अकन है। दो अन्य महिलाऍ चित्रित है। एक महिला चौरी लिए है। दूसरी का हाथ टूटा है।

बिहार से दो सूर्य मूर्तियॉ प्राप्त हुई है। ये सम्प्रति भारतीय सग्रहालय कलकत्ता मे है। इन दो सूर्य मूर्तियो मे सूर्य देव का पैर विल्कुल नही दिखायी देता है।[2] इसी प्रकार की दूसरी मूर्ति राज्य सग्रहालय लखनऊ मे है। इसमे सूर्य देव सात घोडो द्वारा चालित रथ पर खडे हैं। उनके सहवर्ती दण्ड और पिगल अकित हैं। दो महिलाओ का अकन उनकी दो रानियो—सज्ञा और छाया का सूचक है। देवता यज्ञोपवीत पहने हैं। उनके दोनो हाथो मे कमल हैं। अरूण, बैठकर घोडो को हॉक रहे हैं। मुख्य देवता के पैरो के मध्य पादपीठिका पर एक महिला का अकन है जिसे सूर्य देव की एक दूसरी रानी निक्षुभा माना जाता है। इसी प्रकार की एक मूर्ति पटना सग्रहालय मे सुरक्षित है।[3]

बगाल और बिहार से प्राप्त पाल एव सेन काल की खडी सूर्य मूर्तियॉ आभूषणो से अलकृत है। सहवर्तियो मे राज्ञी, निक्षुभा[4], छाया, सुक्वर्कसा, पृथ्वी देवी—महाश्वेता आदि रानियो का अकन है।

---

1 भट्टाचार्य, बी०सी०, जर्नल आफ यूनाइटेड प्राविन्सेज हिस्टोरिकल सोसाइटी, जिल्द २, १९१६, पृ० ७५—७६ देखे चित्र ८

2 प्रसाद, बिन्ध्येश्वरी, भारतीय कला को बिहार की देन, पृ० १८०

3 प्रसाद, बिन्ध्येश्वरी, भारतीय कला को बिहार की देन, पृ० १३२, फोटो नम्बर ०६ (पटना सग्रहालय, मूर्ति सख्या १०६५३)

4 राव,टी०ए०जी, एलीमेन्टस आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, जिल्द II पृ० ३०५

छौछग्राम से कास्य निर्मित एक सुन्दर सूर्यमूर्ति मिली है। देव एक पहिये वाली गाडी के अन्दर बैठे हैं। गाडी को खीचते सात तेजस्वी घोडे चित्रित हैं। उनके (घोडो) पेट के चतुर्दिक कटिसूत्र है। उषा और प्रत्यूषा के साथ दण्डी और पिगल का अकन है। अरूण के नीचे नाग भी दृष्टिगोचर है। यह लघुचित्र सातवी–आठवीशती ई०[1] की पूर्वी भारतीय कला का विलक्षण नमूना है। इसमे सूर्य देव बैठे हुए है।[2] यह मूर्ति अपने विविध अगो–सारथि, घोडो आदि के अकन मे पाल कला के समीप है।[3]

खजुराहो से खडी और बैठी दोनो प्रकार की सूर्य मूर्तियॉ प्राप्त हुयी हैं। खजुराहो की खडी सूर्य मूर्तियो मे सर्वाधिक प्रसिद्ध मूर्ति चित्रगुप्त मन्दिर की मुख्य मूर्ति है। इसमे सूर्य देव किरीट मुकुट, कुण्डल, पुष्पो की माला, यज्ञोपवीत और अवयग पहने हैं। वह ऊँचा जूता पहने है। उनके सिर के पीछे प्रभामण्डल है। उनकी बायी ओर दण्ड और दायी ओर पिगल हैं। सहवर्ती देवी–देवताओ मे अश्वनी, निक्षुभा, राज्ञी, अरूण तथा महाश्वेता आदि हैं। सात घोडे भी दृष्टगत हैं। इसी स्थान से[4] खडी हुई कुछ अन्य सूर्य मूर्तियॉ प्राप्त हुई है। अनेक खडी सूर्य मूर्तियॉ ऐसी हैं जिनके बारे मे विस्तृत जानकारी नही है।[5] बैठी सूर्य मूर्तियो मे सूर्य देव पद्मासन मुद्रा मे बैठे हैं। कुछ मूर्तियो मे सूर्यदेव उत्कुटकासन मुद्रा मे[6] प्रदर्शित हैं।

---

1 भट्टसलि, एन०के०, <u>आइकनोग्राफी आफ बुद्धिस्ट एण्ड ब्राह्मनिकल स्कल्पचरस इन दी दक्क म्युजयम</u>, पृ० १७२ प्लेट LIX

2 सरस्वती, एस०के०, <u>अर्ली स्कल्पचर आफ बेगाल</u>, पृ० ३१–३२ इसे सातवी शती ई० का मानते हैं।

3 मजुमदार, आर०सी०, <u>हिस्ट्री आफ बेगाल</u>, दक्क, जिल्द I, प्लेट XXX चित्र, 76, LXVIII, चित्र १६६ आदि, बनर्जी, आर०डी०, <u>ईस्टर्न स्कूल आफ मिडिवल स्कल्पचर</u>, देखे प्रेच, जे०सी० <u>आर्ट आफ दी पाल इम्पायर आफ बेगाल</u>

4 अवस्थी, आर०एस०, <u>खजुराहो की देव प्रतिमाएँ</u> पृ० १७२

5 वही० पृ० १७३

6 वही० पृ० १७४

किचिग[1] (उडीसा) की सूर्य मूर्ति मे सूर्य देव खडे हैं। इसी स्थान से एक अन्य सूर्य मूर्ति[2] प्राप्त हुयी है। इसमे सूर्य देव कमल पर पद्मासन मुद्रा मे बैठे हैं। उनके दोनो हाथो मे खिला हुआ सनाल कमल है। देव, शक्वाकार मुकुट, कुण्डल, हार और अन्य आभूषण तथा उदीक्यवेष पहने है। अरूण, सात घोडो को हॉक रहे हे।

एलोरा (महाराष्ट्र) से आठवी शती ई० की एक सूर्य मूर्ति मिली है।[3] इसमे देव के सिर के पीछे प्रभामण्डल है। उनके दोनो हाथो मे विकसित कमल पुष्पो का गुच्छा है।

हरियाणा के हिसार जिले मे स्थित हॉसी से एक सूर्य मूर्ति मिली है।[4] इसमे सूर्य देव किरीट मुकुट, हार, यज्ञोपवीत और अव्यग पहने है। देवता के प्रत्येक हाथ मे कमल है। इसमे नौ ग्रहो का अकन है। सूर्य मुख्य देव हैं। नागरी मे श्री आदित्य प्रतिमा' उत्कीर्ण है। इसका समय लगभग दसवी शती ई० है।[5]

राजस्थान के राजकोट सग्रहालय मे एक सूर्य मूर्ति है।[6] इसमे सूर्य देव मुकुट पहने है। इसमे एक गोलाकार प्रभा है नीचे पिगल, दण्ड और देवी–देवताओ को अकन है। उनके हाथो मे सनाल कमल है। वह सात घोडो वाले रथ मे उट्कुटकासन मुद्रा में बैठे है। उषा और प्रत्यूषा धनुष–बाण से अन्धकार को खदेड रही है।

---

1 बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४३६ प्लेट XXX चित्र २

2 वही० प्लेट XXX चित्र ३

3 बनर्जी, जे० एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४४०

4 आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इडिया एनुअल रिपोर्टस, १६२२–२३, पृ० ६२, प्लेट V.a.

5 वही० पृ० ६३

6 राव, टी०ए० जी०, एलीमेन्टस आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, जिल्द I भाग II प्लेट XC चित्र १ और २

गुजरात के कद्वार मन्दिर (प्राक् चालुक्य, आठवी या नवी शती ई०, ६५० ई० के पहले)[1] की चौखट की दाहिनी ओर एक सूर्य मूर्ति है। इसमे सूर्य देव एक कमल पर उट्कुटकासन मुद्रा मे बैठे है। देव के दो हाथ है। प्रत्येक हाथ मे कमल है। सभवत वह जूता भी पहने हैं।

मोढेरा (गुजरात) के सूर्य मन्दिर मे[2] कई सूर्य मूर्तियॉ हैं। मूर्ति सख्या पॉच मे सूर्य सात घोडो द्वारा चालित रथ मे सभगमुद्रा मे खडे हैं। देव, किरीटमुकुट, कुण्डल, हार, कवच, अव्यग, ऊॅचा जूता तथा उत्तरीय पहने हैं। नीचे दाहिनी ओर पिगल और बायीं ओर दण्ड का अकन है। देव के दस हाथ थे जो अब टूट गया है। हाथो मे खिला कमल है। मूर्ति सख्या छ मे कमल उनके कधो से ऊपर उठा हुआ दिखाई देता है। इसमे अश्वनी कुमारो का अकन नही है। सभी सहवर्ती खडे है। घोडो का अकन नही है। देव, एक कमल पर खडे है। उनके दोनो ओर भक्त या विद्याधर स्तुति कर रहे हैं। दक्षिणी आलो से एक सूर्य मूर्ति मिली है।[3] इसमे देव के दोनो ओर सभवत राज्ञी और निक्षुभा अकित हैं।

कुलकुण्डी की सूर्य मूर्ति मे सूर्य देव मध्य मे खडे है।[4] इसमे ग्यारह अन्य आदित्यो का लघु अकन है। यह मूर्ति सम्प्रति ढाका सग्रहालय मे सुरक्षित है।

देलमल[5] (उत्तरी गुजरात, १२वी शती) के लम्बोजी माता के मन्दिर से एक सूर्य मूर्ति मिली है। इसमे देव गरूड पर बैठे हैं। नीचे एक हस और शेर या बाध अकित है।

---

1 साकलिया, एच०डी०, आर्कियोलाजी आफ गुजरात, पृ० १५७ कजेन्स, एच०, सोमनाथ, प्लेट XXXII और XXXIV

2 वही० पृ० ८४

3 साकलिया, एच०डी०, आर्कियोलाजी आफ गुजरात, पृ० १५८ चित्र ६७

4 भट्टसलि, एन०के०, इपिग्राफिआ इण्डिका, जिल्द २७,१९४७–४८ पृ० २५

5 सकलिया, एच० डी०, आर्कियोलाजी आफ गुजरात, पृ० १६३ बर्गेस, जे०, ए०एस० आइ०डब्लू०सी०, जिल्द IX आर्किटेक्चरल एन्टीक्यूटीज आफ नार्थ गुजरात, पृ० ८८–८९ प्लेट LXIX, LXXI-7

इस मूर्ति मे तीन सिर दिखायी देते हैं। मध्य चित्र के सिर पर मुकुट है। मूर्ति मे आठ हाथ अकित हैं जिसमे से चार खण्डित हैं। प्रत्येक हाथ मे कमल है। वक्षस्थल पर कवच स्पष्ट होता है। पैरो मे जूता प्रदर्शित है। पीछे के हाथो मे त्रिशूल और बाये फनवाला नाग है। प्रतीको और बाहनो से स्पष्ट है कि इस मूर्ति मे बह्मा, विष्णु, शिव और सूर्य का सयोजन हुआ है। इसमे सूर्य को अधिक महत्ता प्रदान की गयी है।

राजस्थान के किराडु[1] और हर्षनाथ से प्राप्त एक मूर्ति मे भी ब्रह्मा, विष्णु, शिव ओर सूर्य का सयुक्त अकन मिलता है।

मथुरा सग्रहालय मे[2] इस काल की अनेक सूर्य मूर्तियॉ है। ये बैठी और खडी दोनो ही मुद्राओ मे हैं। खडी सूर्य मूर्तियॉ बैठी सूर्य मूर्तियो से अधिक हैं। मूर्ति सख्या D-45,542,1564 और D-48 बैठी सूर्य मूर्तियो का है। इनमे सूर्य देव सात घोडो द्वारा चालित रथ पर अपने सारथि अरूण के साथ बैठे है। उनक दोनो ओर दो महिला अनुचर है। कभी–कभी उषा और प्रत्यूषा का अकन मिलता है।

मूर्ति सख्या ५४२ मे सूर्य के साथ दण्ड और पिगल अकित हैं। चित्र सख्या १५६४ मे विदेशी प्रभाव परिलक्षित है। इसमे सूर्य यूरोपीय रीति से बैठे हैं। मूर्ति सख्या D-3, D-15, D-16, D-33, 155, 750, 822, 823, 890, 928, 1095, 1096, 1097, 1208, 12151220, 1290, 1698, 2031, 2339 खडी सूर्य मूर्तियो के हैं। इनमे सूर्य देव प्रभामण्डल से युक्त है। उनके हाथ मे कमल है। पैरो मे जूता है। अरूण, उषा और प्रत्यूषा तथा दो अन्य महिलाएँ सभवत निक्षुभा और राज्ञी भी प्रदर्शित हैं। मूर्ति सख्या १२२० मे ऊपर की ओर कोने मे गरूड पर सवार चार भुजाओं वाले विष्णु और विद्याधरो का एक जोडा उडते हुए दिखायी देता है। मूर्ति सख्या १२६० मे दो अश्वनीकुमारो के घोडो का अकन है।

---

1 शर्मा, दशरथ, राजस्थान थ्रू दी एजेज, पृ० ३८१ ff

2 अग्रवाल, वी०एस०, ए कैटलाग आफ दी ब्राह्मानिकल इमजेज इन मथुरा आर्ट, जर्नल आफ यू०पी० हिस्टोरिकल सोसाइटी, जिल्द XXII १९४९ पृ० १७१–७३

प्रतापगढ शहर मुख्यालय से लगभग सात किलोमीटर दूर प्रतापगढ पट्टी मार्ग पर स्थित गोन्डे–गोबरी नामक ग्राम से सूर्य प्रतिमा का एक वृत्ताकार शीर्षफलक[1] उपलब्ध हुआ है जो बलुकाश्म निर्मित है। दशदल कमल से अलकृत इस प्रभामण्डल की वाह्य पट्टिका पत्रावली अलकरण युक्त है। प्रभामण्डल पूर्णतया वृत्ताकार है। प्रभामण्डल के दाहिनी ओर मकर मुख से निकलते हुए कमल पर ऊषा का अकन किया गया है, जिसकी पीठ पर तूणीर बॅधा है और वह शरसधान कर रही है। बॉयी ओर भी मकरमुख नि सृत पद्म पर प्रत्यूषा का अकन है जो शर सधान हेतु तूणीर से शर निकाल रही है। वृत्ताकार फलक के आकार से यह अनुमान किया जा सकता है कि प्रतिमा कम से कम चार फीट ऊँची रही होगी। शिल्प की दृष्टि से यह फलक ८वी–६वी शताब्दी ई० का प्रतीत होता है। शिल्पशास्त्रो मे भी सूर्य के वृत्ताकार प्रभामण्डल बनाने का उल्लेख मिलता है।

कौशाम्बी से पॉच किमी की दूरी पर पश्चिम दिशा मे यमुना के वाम तट पर स्थित प्रभोसा से सूर्य की दो स्थानक प्रतिमाएँ प्राप्त हुई थी जिनमे से एक तो चोरी चली गयी दूसरी उसी ग्राम के शिव मन्दिर मे रखी हुई है। बालुकाश्म निर्मित इस प्रतिमा के आधारासन के रूप मे पैरो के नीचे पद्म पीठिका निर्मित है। इस कमलासन के नीचे चार अश्वो का भी अकन है। प्रतिमा उपानह पिनद्ध है। जो सभी सूर्य मूर्तियो की सामान्य विशेषता है। दोनो हाथो पर अवलम्बित उत्तरीय प्रमुखता के साथ चित्रित है। प्रतिमा मे यावियग भी द्रष्टव्य है। सामान्यतया यावियग कटिबन्ध के रूप मे मूर्तियो मे प्राप्त होता है। ग्रीवा का त्रिवलय अत्यन्त सुष्ठु रूप से निर्मित किया गया है जो अन्य प्रतिमाओ मे प्राय अनुपलब्ध है। सूर्य के दोनो हाथ टूटे हुए हैं। कर्णकुण्डल, कठ हार, रत्नमडित हार प्रमुखता के साथ चित्रित है। करण्डमुकुट युक्त शीर्ष भाग भी प्रभावोत्कारी है। अण्डवक्राकृति प्रभामण्डल की आन्तरिक पट्टिका कमलपुष्पालकरण युक्त है परन्तु वाह्य पट्टिका अनलकत है। प्रतिमा के दोनो ओर उनकी दो पत्नियॉ हाथ मे चामर धारण किये हुए

---

1 शुक्ल, विमल चन्द्र; भारतीय कला के विविध आयाम, पृ० १

उत्कीर्ण की गयी हैं दोनो ही त्रिभग मुद्रा मे प्रदर्शित हैं। मुख्य प्रतिमा के दोनो पैरो के मध्य अपेक्षाकृत अधिक लम्बी आकृति को निर्मित किया गया है जिसे अरूण के रूप मे स्वीकार किया जा सकता है। यह भी उपानहपिनद्ध है। प्रतिमा के वाम पार्श्व मे सूर्य की पत्नी के समक्ष एक पुरूष आकृति उपानह युक्त है जिसका वामहस्त कट्यावलम्बित है तथा दाहिने हाथ मे कोई वस्तु धारण किये हैं। इसी प्रकार दक्षिण पार्श्व मे भी एक लम्बी आकृति स्थानक रूप मे निर्मित थी जिसका उपानह युक्त पद ही स्पष्ट है, शेष नष्ट हो गया है। ये दोनो ही आकृतिया कमलासन पर खडी हैं। सूर्य की पत्नियो के प्रभामण्डल के ऊपर सपक्ष व्यालो का अकन किया गया है। शार्दूल व्यालो के अकन की परम्परा अलकरण के रूप मे अत्यन्त लोकप्रिय रही है। अमरावती और सारनाथ के स्तूपो से लेकन खजुराहो तथा बाद के मन्दिरो मे भी व्यालो का बहुविध अकन होता रहा है।[1]

काशी मे सूर्य का प्रतीक और मानव दोनो रूपो मे अकन हुआ है। प्राय ये सभी मध्यकालीन उदाहरण है जिनका निर्माण ११वी शती के मध्य हुआ। इनमे सूर्य को प्रतीको के अतिरिक्त आसीन और स्थानक रूप मे भी दिखाया गया है उनके साथ सारथि अरूण एव पार्श्वो मे अनुचर आकृतिया भी प्रदर्शित हैं। मध्यकालीन सूर्य मूर्तियो को मुख्यत तीन वर्गो मे विभक्त किया जा सकता है। पहले वर्ग मे साधारण रचना वाली मूर्तिया आती है जिसके परिकर मे दो या तीन आकृतिया बनाई गयी। दूसरे वर्ग मे ऐसी आकृतिया आती हैं जिसमे सहायक आकृतियो की सख्या मे वृद्धि हुई और तीसरे वर्ग मे पूर्ण विकसित कोटि के उदाहरण आते हैं जिनमे सूर्य के साथ सप्ताश्वरथ, अरूण सारथि, दण्डी–पिगल, ऊषा–प्रत्यूषा के अतिरिक्त परिकर मे नवग्रह, द्वादशादित्य, ६ ऋतुऍ, गणेश एव कार्तिकेय आदि की आकृतिया दिखायी गई। तीसरे कोटि की विकसित मूर्ति का एक उदाहरण सोनारग (बगलादेश) से मिला है।

---

1 प्रभाव, शक आ० भारतीय शिल्प सहिता, पृ० ५५ तथा अग्रवाल, वासुदेव शरण, भारतीय कला, पृ० ७६

काशी से उपर्युक्त तीनो ही वर्गो की मूर्तियॉ मिली है। इसके अतिरिक्त नगर से एक चक्र और सात अश्वो वाले रथ पर रश्मियुक्त चक्र के साथ सूर्य की आसीन प्रतिमाएँ भी मिली है। ऐसे उदाहरणो मे रथ को चलाते हुए सारथि अरूण का अकन भी किया गया है। उल्लेखनीय है कि काशी मे प्रतीको के माध्यम से सूर्य पूजा की एक लम्बी परम्परा मिलती है जिसका उल्लेख विभिन्न पुराणो मे भी प्राप्त होता है। काशी मे द्वादशादित्यो का महत्वपूर्ण स्थान रहा है जो नगर के विभिन्न स्थानो पर स्थापित है।[1] काशी के द्वादश आदित्यो के नाम निम्नलिखित हैं–अरूणादित्य, द्रौपदादित्य, गगादित्य, केशवादित्या, खखोलकादित्य, लोलार्क, मयूखादित्य, सावादित्य, उत्तरार्क, विमलादित्य, वृद्धादित्य, यमादित्य। इन द्वादश आदित्यो को काशी का रक्षक बताया गया है। काशीखण्ड मे आदित्यो की उत्पत्ति की विभिन्न कथाए मिलती है। भारत के ज्ञात सूर्य मन्दिरो मे कही भी सूर्य पूजा के सन्दर्भ प्रतीक रूप मे नही प्राप्त होते किन्तु काशी मे आज भी सावादित्य नाम से सूर्य मन्दिर (१२वी शती) का उदाहरण नई सडक के समीपस्थ सूर्य कुण्ड मुहल्ले मे देखा जा सकता है।[2] इसी प्रकार कुछ अन्य आदित्यो के उदाहरण विभिन्न मन्दिरो से जुडे हुए है।[3]

काशीखण्ड तथा अन्य ग्रन्थो मे उल्लिखित द्वादश आदित्यो के नामो तथा स्थानो के अतिरिक्त नगर के विभिन्न स्थलो से आदित्य मूर्तियो के उदाहरण (११वीं–१५वीं शती) प्राप्त होते हैं। आदित्यों के अकन पद्म, चक्र, रश्मियुक्त चक्र, चक्र एव पद्म के सयुक्त स्वरूप, रश्मियुक्त चक्र में मध्य में सूर्य की मुखाकृति (१८वीं–१९वीं) भी उत्कीर्ण की गई है। आदिकेशव घाट के चिताहरण गणेश मन्दिर से प्राप्त रश्मियुक्त चक्र के मध्य एक

---

1 कमलागिरि, 'काशी मे द्वादशादित्य,' उत्तर प्रदेश (काशी अक), खण्ड १०–११, १९८३, पृ० ६६–६३

2 कमलगिरि एव मारूतिनन्दन तिवारी, 'सिम्बालिक रिप्रजेन्टेशन्स आफ सन इन वाराणसी', भगवन्त सहाय अभिनन्दन ग्रन्थ के लिये स्वीकृत लेख (पटना)

3 कमलगिरि, पूर्वनिर्दिष्ट

उदाहरण मे चतुर्भुज सूर्य की आसीन मूर्ति (१८ वी शती) भी बनाई गई है। प्रस्तुत उदाहरण मे पूर्ण विकसित पद्म पर पैर मोडकर ध्यानमुद्रा मे आसीन सूर्य के नीचे के दो हाथो मे से एक वरदमुद्रा मे है और दूसरा घुटने पर रखा है। सूर्य के ऊपर के दो हाथो मे पद्म (कलिका रूप मे) प्रदर्शित है। किरीट मुकुटधारी सूर्य विभिन्न आभूषणो से सज्जित हैं।

सूर्य के प्रतीकात्मक स्वरूपो के उदाहरण कामेश्वर मन्दिर (गायघाट), मगलागौरी मन्दिर (सिन्धिया घाट), आदिकेशव मन्दिर एव चिन्ताहरण गणेश मन्दिर (आदिकेशव घाट), हनुमान मन्दिर (हनुमान घाट), शीतला मन्दिर (प्रहलाद घाट), सोरैया महादेव मन्दिर (कालभैरव), हनुमान मन्दिर (विश्वनाथ गली), शिव मन्दिर (राजमन्दिर), आदि से प्राप्त हुए है। मन्दिरो के अतिरिक्त ऐसे उदाहरण नगर के विभिन्न स्थलो पर यत्र–तत्र भी देखे जा सकते है। इसी स्वरूप से मिलते–जुलते दो उदाहरण सूर्य–यत्र के भी प्राप्त हुए है। वर्तमान मे सूर्य–यत्र पच गगा के घाट तैलगस्वामी मठ मे सुरक्षित हैं। प्रस्तुत उदाहरण मे एक शिलापट्ट पर यत्र के मध्य भाग मे नगर के अन्य स्थानो से प्राप्त आदित्य के उदाहरणो के समान सूर्य की तिलकधारी मुखाकृति उत्कीर्ण है। यन्त्र मे कुल पॉच खाने बने हैं। प्रत्येक खाने मे 'ॐ' लिखा हुआ है। प्रस्तुत सूर्य–यत्र रश्मियुक्त वृत्त से युक्त है। दूसरे उदाहरण मे कमल आकृति के मध्य यत्र बना है।

एक चक्र तथा सात अश्वो वाले रथ पर सूर्य को अकित किये जाने का सदर्भ विभिन्न ग्रन्थो मे मिलता है। काशी मे एक चक्र तथा सात अश्वो वाले रथ पर सारथि अरूण के साथ आरूढ़ सूर्य की कई मूर्तियॉ मिली हैं जो काशी मे इस रूप मे सूर्य पूजा की विशेष लोकप्रियता का प्रमाण देती है। इन उदाहरणो मे ध्यान मुद्रा मे रथ पर आसीन सूर्य के मस्तक या सम्पूर्ण शरीर को आवृत्ति करता रश्मियुक्त सूर्य चक्र बना है। सूर्य मूर्तियो के ऐसे उदाहरण नन्दीश्वर महादेव मन्दिर (मत्स्योदरी), शिवमन्दिर (पीताम्बरपुरा–बी० ६१३१), रामेश्वर मन्दिर (विश्वनाथ गली) त्रयम्बकेश्वर महादेव मन्दिर, शिवमन्दिर (टेढीनीम), राजातालाब (असी) एव मणिकर्णिकाघाट, गगा मन्दिर, (सिद्धेश्वरी), शूलकण्टेश्वर महादेव मन्दिर (दाश्वमेघ), मान्धातेश्वर मन्दिर (चौक), पंचमेश्वर माहदेव मन्दिर (सूर्यकुण्ड),

पचायतन मन्दिर (हनुमान घाट), शिव मन्दिर (दुर्गा घाट), तथा दुर्गादेवी (रामनगर) से मिले है। ये सभी मन्दिर प्राय पचायतन मन्दिरो के उदाहरण हैं जिनमे सूर्य को सौर सम्प्रदाय के प्रमुख देवता के रूप मे शक्ति, विष्णु और गणेश की आकृतियो के समान मन्दिर की भित्ति पर अकित किया गया है। रामनगर के दुर्गामन्दिर के उदाहरण को छोडकर प्राय सभी उदाहरणो मे सम्मुख दर्शन वाले सूर्य चतुर्भुज है।[1] चतुर्भुज सूर्य के दो करो मे शास्त्र निर्देश के अनुरूप पद्म का प्रदर्शन हुआ है। कुछ उदाहरणो मे सूर्य के करो मे विष्णु के आयुध–पद्म, गदा, चक्र, शख भी दिखाये गये है। जो वैदिक परम्परा मे विष्णु की सूर्य से अभिन्नता के भाव को मूर्तिमान करते है। इनके अतिरिक्त उनके करो मे वरदाक्ष अथवा वरद मुद्रा जलपात्र अथवा फल भी प्रदर्शित है। एक उदाहरण मे सूर्य के हाथ मे पुस्तक का प्रदर्शन भी हुआ है। सभी उदाहरणो मे सूर्य को रथ पर पूर्ण विकसित पद्म पर अथवा सामान्य आसन पर पद्मासन मे आसीन दिखाया गया है। उनके मस्तक पर सामान्य मुकुट और शरीर पर अन्य आभूषणो का अकन हुआ है। अलग–अलग उदाहरणो मे अश्वो एव सारथि अरूण का भिन्न–भिन्न मुद्राओ मे अकन हुआ है। किसी मे अश्व गतिमान और किसी मे अत्यन्त तीब्र गति से दौडने की मुद्रा मे उत्कीर्ण है, जो सूर्य की गति को व्यक्त करते हैं। इसी प्रकार अरूण को कही सामान्य मुद्रा मे रथ के अश्वो का सचालन करते दिखाया गया है तो कहीं वह अश्वों की गति के साथ एक ओर झुके और उनकी लगाम को कसकर पकडे दिखाया गया है। सूर्य की अश्वचालित रथ पर आरूढ उदाहरणो मे ब्रह्मचारिणी मन्दिर से प्राप्त मूर्ति उल्लेखनीय है जिसमे रथ पर सूर्य की मानवाकृति के स्थान पर आदित्य के रूप मे शिलापट्ट पर उनकी मुखाकृति का अकन हुआ है।

काशी मे ११वी–१२वी शती ई० से १५वी–१६वी शतीं ई० के मध्य की सूर्य की स्वतत्र, स्थानक एव आसीन मानव प्रतिमाओ के उदाहरण भी मिले हैं जिनमे से कुछ

---

1 राम नगर के दुर्गा मन्दिर के उदाहरण मे द्विभुज सूर्य के एक हाथ मे पद्म और दूसरे मे अक्षमाला है।

उदाहरण कला एव प्रमिमाशास्त्र दोनो ही दृष्टियो से उल्लेखनीय है। ये मूर्तिया मध्यकालीन खुजुराहो, ओसिया, भुवनेश्वर, कोणार्क, मोढेरा जैसे सूर्य मन्दिरो पर बनी मूर्तियो की शैली मे बनी है। ११वी–१२वी शती ई० के उदाहरण सुकुलपुरा स्थित शुष्केश्वर मन्दिर, प्रहलादघाट के शीतला मन्दिर, पीताम्बरपुरा के चिन्तामणि गणेश मन्दिर, देहली, विनायक के देहली विनायक मन्दिर, काल भैरव के सोरैया महादेव मन्दिर से मिले है। इन मन्दिरो के अतिरिक्त गगा के किनारे घाट की सीढियो पर स्थित देवकुलिकाओ मे भी ११वी–१२वी शती ई० की सूर्य प्रतिमाओ के उदाहरण देखे जा सकते हैं। इनमे प्रहलादघाट तथा पचगगाघाट की सीढियो पर स्थित देवकुलिकाए उल्लेखनीय है। ११वी–१२वी शती ई० के उदाहरण गौरीशकर मन्दिर, त्रिलोचन और पचपाण्डव मन्दिर शिवपुर के अतिरिक्त नगर मे यत्र–तत्र भी देखे जा सकते है। अधिकाश उदाहरणो मे सूर्य की स्थानक आकृतियॉ ही बनाई गई हैं जिनमे किरीटधारी द्विभुज सूर्य को समभग मे खडे और दोनो हाथो मे पद्म लिये दिखलाया गया है। हाथो के पद्म की स्थिति कुछ मे कन्धो के बराबर किन्तु अधिकाश मे कन्धे के कुछ ऊपर तक दिखाई गई है। ये पद्मपूर्ण विकसित सनालपद्म के रूप मे बने हैं। कुछ प्रतिमाओ का स्वतत्र विस्तृत विवरण भी यहा अपेक्षित है।

सुकुलपुरा के शुष्केश्वर मन्दिर की सूर्य प्रतिमा के शीर्ष भाग एव दोनो हाथ पर्याप्त खण्डित हैं किन्तु उत्तरीय, पैरो मे लम्बा बूट (उपानह), कवच एव अन्य आभूषण तथा पार्श्व आकृतिया स्पष्ट हैं। पार्श्व आकृतियो मे भी शरीर पर कवच स्पष्टत द्रष्टव्य है। पार्श्व आकृतियो के आयुद्य यद्यपि स्पष्ट नही है किन्तु ये दण्डी एव पिगल की आकृतियॉ है। इन आकृतियो के समीप ही कुछ बडी दो स्त्री एव दो पुरूष आकृतियॉ भी खडी हैं जिनके करो मे पद्म और कलश प्रदर्शित है। स्त्री आकृतियॉ सभवत ऊषा एव प्रत्यूषा की आकृतियॉ हैं मूर्ति के दोनो किनारो पर ललित मुद्रा मे आसीन द्विभुज कुबेर की दो आकृतियॉ बनी हैं जिनके एक हाथ मे धन का थैला है। सूर्य के पैरो के मध्य का खण्डित अश किसी आकृति (अरूण) के होने का आभास देता है। मूर्ति का ऊपरी भाग खण्डित होने के कारण अन्य विवरण स्पष्ट नही है। इसी मन्दिर से मिले किसी स्तम्भ के खण्डित भाग पर भी

सूर्य का अकन हुआ है। इस स्तम्भ पर चारो ओर ब्राह्मण धर्म के चार प्रमुख देवो (सूर्य, विष्णु शक्ति, गणेश) की मूर्तियॉ बनी हैं। इनके मध्य मे दिक्पालो की मूर्तियॉ भी उत्कीर्ण है। इन्ही मे एक सनाल पद्मधारी सूर्य की द्विभुज आकृति है। किरीट मुकुट से सुशोभित सूर्य को समभग मे खडा दिखाया गया है। उनके समक्ष छाया की आकृति बनी है। पार्श्वो मे दो अन्य स्त्री आकृतियॉ भी हैं। जो सभवत ऊषा एव प्रत्यूषा का अकन है। सूर्य के हाथो मे कन्धो से कुछ ऊपर तक उठे सनाल पद्म है।

१२वी शती ई० की सूर्य की एक सुन्दर मूर्ति कन्दवा के कर्दमेश्वर मन्दिर के समीपस्थ विरूपाक्ष मन्दिर मे देखी जा सकती है। प्रस्तुत प्रतिमा सूर्य मूर्ति का महत्वपूर्ण उदाहरण है जो बनावट और विवरण की दृष्टि से बहुत कुछ शुष्केश्वर मन्दिर की सूर्य प्रतिमा के समान दिखायी देती है। द्विभुज सूर्य के हाथ खण्डित हैं किन्तु हाथो के सनालपद्म सुरक्षित है। किरीट मुकुटधारी सूर्य के पैरो मे लम्बा बूट शक कालीन विशेषता है। उनकी बाहो से उत्तरीय लटक रहा है। मूर्ति का निचला भाग खण्डित है। किन्तु सारथि अरूण की आकृति सुरक्षित है। मूर्ति स्त्री सेविकाओ से युक्त है। दोनो ओर सूर्य पुत्र अश्विनी कुमारो की आकृतियॉ बनी है। सूर्य प्रतिमा के ऊपरी भाग मे धनुष की प्रत्यचा चढाये ऊषा एव प्रत्यूषा की आकृतियॉ बनी है। प्रभामण्डल अत्यत अलकृत है।

१२वी शती ई० का तीसरा उदाहरण (33x69 सेमी) देहली विनायक मन्दिर मे है। इस मूर्ति मे किरीट मुकुटधारी सूर्य को समभग मे खडा एव दो करो मे पूर्ण विकसित पद्म लिये दिखाया गया है। उल्लेखनीय है कि सूर्य यहॉ चतुर्भुज हैं और उनके दो हाथ खण्डित है। पूर्ण विकसित कमलाकार प्रभामण्डल सुन्दर बन पडा है जिसके ऊपर दो मालाधर गन्धर्व एव दो अन्य आकृतियॉ भी उत्कीर्ण हैं। सूर्य के पार्श्व मे नीचे भी चार आकृतियो का अकन हुआ है। जिनके पर्याप्त खण्डित होने के कारण उनकी पहचान सभव नही है।

प्रहलाद घाट स्थित शीतला मन्दिर की सूर्य मूर्ति द्विभुज है जिसमे सूर्य के दोनों हाथो मे सलान पद्म, मस्तक पर किरीट मुकुट, हाथ से लटकता लम्बा उत्तरीय, कमर में धोती तथा घुटने तक लम्बे बूट स्पष्ट हैं। पैरो के मध्य अरूण की आकृति खडी है और

पार्श्व मे दण्ड धारी दण्ड की आकृति है। बनावट की दृष्टि से प्रतिमा १२वी शती ई० के कुछ बाद की जान पडती है।

सूर्य की आसीन मूतियॉ के कुछ परवर्ती उदाहरण भी मिले हैं। इनमे एक गौरीशकर मन्दिर (त्रिलोचन), तथा दूसरा पचमेश्वर महादेव मन्दिर (मिसिर पोखरा, डी० ४८१३) से प्राप्त हुआ है। गौरीशकर मन्दिर के उदाहरण मे चतुर्भुज सूर्य पद्मासन मे बैठे है। उनका एक हाथ वरद मुद्रा मे है, जबकि दूसरे और तीसरे हाथ मे पद्म तथा चौथे मे जलपात्र है। यह मूर्ति पर्याप्त घिसी है। पचमेश्वर महादेव मन्दिर की पद्मासीन मूर्ति मे चतुर्भुज सूर्य पूर्ण विकसित पद्म पर विराजमान हैं। उनके हाथो मे अक्षमाला, पद्म, पद्म एव फल प्रदर्शित है। यहॉ सूर्य के मस्तक के पीछे रश्मियुक्त प्रभामण्डल का अकन हुआ है। उनके पार्श्वो मे हाथ जोडे उपासको की दो आकृतियॉ खडी है। उपरोक्त सूर्य मूर्तियो के अध्ययन से स्पष्ट है कि काशी मे सूर्य पूजा मुख्य रूप से तीन रूपो मे प्रचलित थी प्रतीक रूप मे, रथारूढ सूर्य आकृति के रूप मे और स्वतत्र (स्थानक एव आसीन) मूर्तियो के रूप मे। ११वी–१२वी शती ई० की मूर्तियो मे अन्यत्र की मूर्तियो की भॉति द्विभुज सूर्य को द्विभुज और करो मे सनाल पद्म से युक्त और सामान्यत समभग मे दिखाया गया है जो वैदिक परम्परा मे सूर्य से विष्णु के सम्बन्धित रहे होने के स्मरण कराता है। चतुर्भुज रूप मे निर्माण विष्णुधर्मोत्तरपुराण से समर्थित है। किन्तु आसन मूर्तियो मे पारपरिक उत्कूटिकासन मुद्रा के स्थान पर ध्यान मुद्रा मे अकन स्थानीय विशेषता है। इस प्रकार काशी की सूर्य मूर्तियो मे वैदिक एव परवर्ती परम्पराओ का पालन हुआ है। आदित्य एव प्रतीक रूप मे सूर्य अकन की लोकप्रियता भी इस दृष्टि से उल्लेखनीय है। आदित्य नगर (चितईपुर) के शिवमन्दिर (१६वी शती) की सूर्य मूर्ति मे सूर्य के समक्ष पताका धारी हनुमान की आकृति का उत्कीर्ण हनुमान द्वारा सूर्य से ज्ञान प्राप्त करने की कथा से सम्बन्धित प्रतीत होता है।

नवग्रह— नव ग्रहो के पूजन की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है।[1] धार्मिक कर्मकाण्डो के निर्विघ्न सम्पादन हेतु नवग्रहो का आवाह्न अनिवार्य था। वाराहमिहिर कहते है कि जब ग्रह मनुष्यो पर प्रसन्न रहते हैं तो उसे कोई कष्ट नही होता है चाहे वह काफी ऊचाई से गिर पडे या क्रीडा करते हुए सर्पो के मध्य मे चला जाय।"[2] याज्ञवल्क्य[3] का कहना है कि जो व्यक्ति शान्ति और समृद्धि, दीघार्यु और उसके प्रतिरक्षण का इच्छुक हो वह 'ग्रह यज्ञ' करे। वह व्यक्ति भी ग्रह यज्ञ करे जो अपने शत्रुओ का क्षति चाहता हो। सैन्य अभियान मे प्रस्थान से पूर्व ग्रहशान्ति अथवा ग्रह यज्ञ सम्पन्न किया जाता था।[4] कुछ अन्य अवसरो पर भी ग्रहो की उपासना की जाती थी। नक्षत्रो के साथ इनका भी जमीन पर आरेखन किया जाता था और पुष्य–स्नान[5] नामक समारोह के अवसर पर इन्हे अनुकूल बनाया जाता था। वर्षा और फसल के सन्दर्भ मे भविष्यवाणी करने के लिए खगोलशास्त्री शहर या गॉव के उत्तर या पूर्व मे किसी स्थान पर जाता और जमीन पर ग्रहो–नक्षत्रो को आरेखित कर उनकी उपासना करता था।[6] अन्य जगह भी वृहस्पति, शुक्र और शनि के चित्र सकेतित है [7] लेकिन इनके प्रतिमाशास्त्र के विषय मे कोई सूचना नही दी गई है।

---

1 बनर्जी, जे० एन, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, ४४३–४५, अवस्थी, रामाश्रय, खजुराहो की देवप्रतिमाएँ, आगरा, १६६७, पृ० १६०–६६

2 प्रीतै पीडा न स्यादुच्चाद्यदि पतति विशति यदि वा भुजगविजृम्भितम्।

3 याज्ञवल्क्य स्मृति (बाम्बे सस्करण) १८६२, पृ० ८६

4 वृहत्सहिता अध्याय XVIII,CIII 47

5 वही० XLVII.26,29

6 वही० XXIV 6

7 वही० XLVII

याज्ञवल्क्य ग्रहो की मूर्तियो के सन्दर्भ मे कुछ विस्तृत सूचना देते हैं। उनका कहना है कि सूर्य, सोम (चन्द्रमा), मगल, बुद्ध,बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु के चित्र क्रमश ताम्र स्फटिक, लाल काष्ठ, स्वर्ण (बुद्ध और वृहस्पति के सन्दर्भ मे), रजत, लौह, सीसा और पीतल के निर्मित होने चाहिए। याज्ञवल्क्य स्मृति के अतिरिक्त विष्णु धर्मोत्तर पुराण,[1] मत्स्यपुराण,[2] अग्निपुराण[3], अशुमद भेदागम, शिल्परत्न, अपराजितपृच्छा[4] और रूपमण्डन[5] आदि अन्य रचनाएँ भी उनके रूपो के सन्दर्भ मे विभिन्न विवरण देते है।ब्राह्मण धर्म के साथ–साथ जैन धर्म मे भी नवग्रहो के पूजन की परम्परा लोकप्रिय रही है, जिसके उदाहरण जैन–कला मे देखे जा सकते हैं। तीर्थंकर मूर्तियो की पीठिका और जैन मन्दिरो के प्रवेश द्वारो पर नवग्रहो का अकन हुआ है। आचार दिन कर, निर्वाण कलिका, प्रतिष्ठासार सग्रह जैसे जैन ग्रन्थो मे नवग्रहो के प्रतिमा लक्षण वर्णित हैं जो पूरी तरह ब्राह्मण परम्परा से प्रभावित है।[6]

नवग्रहो मे सूर्य प्रधान हैं, जिन्हे ग्रहपति भी कहा गया। सूर्य की स्वतत्र मूर्तियो के उदाहरण ई०पू० से मिलने लगते हैं। किन्तु अन्य आठ ग्रहो के साथ सूर्य का नवग्रह समूह मे अकन मुख्यत आठवी शती ई० के बाद मन्दिरो के प्रवेश द्वारो के उत्तरग पर मिलता है। मन्दिर निर्माण की परम्परा के साथ नवग्रहो का सामूहिक अकन भी प्रारम्भ हुआ जिसके उदाहरण सभी क्षेत्रो के मध्यकालीन मन्दिरो के प्रवेश द्वारो पर देखे जा सकते है। इनके अतिरिक्त कुछ मूर्तस्वरूपो मे भी मध्यकाल मे परिकर मे नवग्रहो का अकन हुआ

---

1 विष्णु धर्मोत्तरपुराण ६८११–५

2 मत्स्यपुराण ६४/२

3 अग्निपुराण ५१/११

4 अपराजित पृच्छा २१४/१०–१६

5 रूपमण्डन २/१८–२५

6 निर्वाणकलिका २०/२–७, प्रतिष्ठासारसग्रह ६/६

जिनमे सूर्य और कल्याण–सुन्दर मूर्तियॉ मुख्य है। १३वी–१४वी शती ई० के नवग्रहो के स्वतन्त्र शिल्पाकन के उदाहरण कोणार्क के सूर्य मन्दिर एव अचलगढ (राजस्थान) के शिव मन्दिर मे देखे जा सकते हैं। नवग्रह पट्टो के उदाहरणो मे सामान्यत नवग्रहो को द्विभुज और एक जैसे लक्षणो वाला दर्शाया गया है। नवग्रह पट्टो पर सबसे पहले सूर्य की आकृति बनी होती है जिन्हे उत्कुटिकासन मे आसीन या समभग मे खडा दिखाया जाता है। सूर्य उपानह और वर्म से युक्त तथा दोनो हाथो मे पद्म लिये होते है। सोम से लेकर शनि तक के अन्य छ ग्रहो को पट्टो पर एक जैसे लक्षणो वाला बनाया गया हे। सामान्यत ये ललितासीन या त्रिभग मे खडे और द्विभुज दिखाये गये है।

उनके करो मे अभय या वरदमुद्रा तथा फल (या जलपात्र) प्रदर्शित हैं। राहु को ऊर्ध्वकाय और तर्पण–मुद्रा मे तथा केतु को अर्धसर्पाकार रूप मे दिखाया जाता है। मध्यकालीन कुछ उदाहरणो मे नवग्रहो को स्वतत्र लक्षण वाला भी बनाया गया है। शास्त्रीय ग्रन्थो मे प्रत्येक ग्रह के अलग–अलग लक्षण बताये गये हैं।

सूर्य –

सूर्य प्रतिमा निर्माण के शास्त्रीय सदर्भ वृहत्सहिता, विष्णुधर्मोत्तर पुराण[1] विश्वकर्मा शिल्प, अपराजित पृच्छा[2] तथा रूपमण्डन[3] आदि शिल्पशास्त्रो विष्णुधर्मोत्तर पुराण के विस्तृत उल्लेख मे कवचधारी सूर्य को चतुर्भुज और उदीच्य वेशधारी (विदेशी प्रभाव) बताया गया है। ज्ञातव्य है कि अन्य सभी ग्रन्थो मे सूर्य को द्विभुज बताया गया है, इसी कारण मूर्तियो मे सर्वत्र सूर्य द्विभुज है। केवल काशी के १८वी–१९वीं शती ई० की मूर्तियो मे सर्वत्र सूर्य द्विभुज हैं। सप्ताश्व रथ पर अरूण सारथि और पार्श्वो मे दण्डी पिगल और ऊषा–प्रत्यूषा से वेष्टित सूर्य के करो मे सनाल पद्म दिखाने का विधान मिलता है।

---

1 विष्णु धर्मोत्तर पुराण ६७/१७०

2. अपराजित पृच्छा २१४/११–१२

3 रूपमण्डन २/१८–१९

चन्द्र–

विष्णुपुराण मे एक हाथ मे पद्म लिये चन्द्र को दस अश्व वाले सुन्दर रथ पर आरूढ बताया गया है। विष्णुधर्मोत्तर पुराण[1] मे चार भुजा वाले चन्द्र को तेज से युक्त बताया गया है। उनके रथ के अश्वो की सख्या दस ही बतायी गयी है। अग्निपुराण मे चन्द्र के हाथो मे अक्षमाला और कमण्डलु का उल्लेख है।[2] अशुमद्भेदागम और शिल्परत्न मे द्विभुज चन्द्र के हाथो मे गदा और वरद्–मुद्रा होने का उल्लेख है।[3] रूपमण्डन मे सोम के हाथो मे पद्म का उल्लेख है।[4]

मगल (या भौम) –

विष्णुधर्मोत्तर पुराण[5] मे मगल को आठ अश्वो वाले रथ पर आरूढ बताया गया है। जबकि अपराजितपृच्छा, शिल्परत्न तथा रूपमण्डन मे मगल का वाहन भैंस बताया गया है। दक्षिण भारतीय परम्परा में चतुर्भुज देवता का एक हाथ अभय या वरदमुद्रा में और दूसरा शक्ति लिये तथा अन्य दो हाथो मे गदा और शूल बताया गया है।[6]

बुध–

बुध को ग्रहपति और चन्द्रमा का पुत्र भी कहा गया है। शिल्परत्न[7] मे बुध को सिह पर आरूढ बताया गया है। अपराजितपृच्छा तथा रूपमण्डन मे उनका वाहन सर्प बताया

---

1 विष्णुधर्मोत्तर पुराण ६८/१–४

2 अग्निपुराण ५११

3 शिल्परत्न अध्याय २५

4 रूपमण्डन २/२१

5 विष्णुधर्मोत्तर पुराण ६६/२

6 शिल्परत्न, अध्याय २५; रूपमण्डन २/२२

7 शिल्परत्न अध्याय २५

गया है।[1] उनके हाथो मे वरदमुद्रा, खड्ग, खेटक और गदा के प्रदर्शन का उल्लेख है।

बृहस्पति–

शिल्परत्न मे बृहस्पति को चार भुजा वाला बताया गया है।[2] विष्णुपुराण मे आठ घोडो के रथ पर आरूढ बृहस्पति के हाथो मे पुस्तक और अक्षमाला का उल्लेख है।[3] अपराजितपृच्छा तथा रूपमण्डन मे बृहस्पति का वाहन हस बताया गया है।[4]

शुक्र–

शिल्परत्न मे चार भुजा वाले शुक्र के हाथो मे अक्षमाला, दण्ड कमण्डलु होने का उल्लेख है।[5] ग्रन्थो मे शुक्र के दस श्वेत अश्वो के रथ पर आरूढ होने का उल्लेख है।[6] रूपमण्डन मे शुक्र का वाहन दर्दुर बताया गया है।[7]

शनि–

प्राय सभी ग्रन्थो मे शनि को कृष्ण वर्ण बताया गया है। अपराजितपृच्छा[8] तथा रूपमण्डन[9] मे शनि को महिष पर आरूढ बताया गया है। अशुमदभेदागम मे द्विभुज शनि के एक हाथ मे दण्ड है जबकि दूसरा हाथ वरद–मुद्रा मे है।

राहु–

---

1 रूपमण्डन २/२२

2 शिल्परत्न अध्याय २५

3 विष्णुधर्मोत्तर पुराण २/१२–१६

4 रूपमण्डन २/२३

5 शिल्परत्न अध्याय २५

6 विष्णु धर्मोत्तर पुराण ६६/५–६

7. रूपमण्डन २/२३

8 अपराजितपृच्छा २१४/१८

9 रूपमण्डन २/२३

ऊर्ध्वकाय राहु को विकराल मुख और अर्धचन्द्र लिये हुए तथा सिहानस्थ या आठ अश्वो वाले रथ पर आरूढ बताया गया है। <u>शिल्परत्न</u> मे सिहासन पर आरूढ राहु के हाथो मे खड्ग और खेटक का उल्लेख हुआ है।[1] अपराजितपृच्छा[2] और <u>रूपमण्डन</u> मे[3] राहु को हवनकुण्ड के मध्य स्थित बताया गया है।

<u>केतु</u>–

ग्रन्थो मे केतु के कटि के ऊपर का भाग मानवाकार तथा नीचे का भाग सर्पाकार बताया गया है। दस अश्वो वाले रथ पर आरूढ केतु के हाथो मे गदा का उल्लेख मिलता है। <u>अपराजितपृच्छा</u> और <u>रूपमण्डन</u> के अनुसार अर्धसर्पपुच्छाकृति धूम्रवर्ण केतु के दोनो हाथ अजलि–मुद्रा मे होगे।[4] <u>शिल्परत्न</u> मे केतु को द्विभुज और एक हाथ से वरद–मुद्रा तथा दूसरे मे गदा लिये और गृद्ध पर आरूढ बताया गया है।[5]

जैन ग्रन्थो मे चन्द्र से शनि तक छ ग्रहो को अक्षमाला और जल पात्र के साथ निरूपित किया गया है। परन्तु कुछ ग्रन्थो मे इनके लिए अलग–अलग लक्षणो का विधान भी मिलता है।[6]

दिकपालो की तरह नवग्रह भी मध्यकालीन मन्दिरों[7] मे वास्तुकलात्मक खण्डो के रूप मे व्यवहृत हैं। नव ग्रहो का अकन मन्दिरो के चौखट, प्रवेश द्वारा और कभी–कभी सूर्य मन्दिर के तोरण पर मिलता है। भारत मे कुछ नवग्रह मन्दिर भी खोजे गये है। गढवा[1]

---

1 <u>शिल्परत्न</u> २५

2 <u>अपराजितपृच्छा</u> २१४/१८

3 <u>रूपमण्डन</u> २/२३

4 <u>अपराजितपृच्छा</u> २१४

5 <u>शिल्परत्न</u> अध्याय २५

6 <u>आचारदिनकर</u>, भाग २, पृ० १७६–१८० <u>निर्वाणकलिका</u> २०/२–६

7 <u>डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी</u>, प्लेट XXXI चित्र, १–२, देखे, खरे, पूर्वोद्धत, पृ० १४०–४३

(इलाहाबाद जिला) मे नवग्रह मन्दिर के अवशेष मिले हैं। जगेश्वर (अल्मोडा जिला) मे सौर पथ से सम्बन्धित दो मन्दिर है–एक सूर्य देव का और दूसरा नवग्रहो का है। यहाँ से प्राप्त अभिलेख इन मन्दिरो को आठवी शती ई०[2] का प्रमाणित करते हैं। गौहाटी[3] का नवग्रह मन्दिर भी उल्लेखनीय है।

सोमनाथ के सूर्य मन्दिर के द्वार के ऊपर[4] समूह मे नवग्रहो का अकन हे। सभी चित्र खडी मुद्रा मे है। लेकिन थान[5] के सूर्य मन्दिर की बहारी चौखट पर नवग्रहो का अकन बैठी मुद्रा मे है। भुवनेश्वर के मन्दिरो मे नवग्रहो का अकन मिलता है। राजा–रानी मन्दिर मे द्वार–मार्ग के ऊपर नवग्रहो का अकन दृष्टिगत है। लेकिन लिगराज मन्दिर[6] मे काफी सख्या मे उनका अकन मिलता है। परशुरामेश्वर मन्दिर के प्रवेश द्वार के ऊपर एक पट्टिका पर सभी नवग्रहो का अकन मिलता है। यहाँ तक कि लिपि मे उनके नाम भी उत्कीर्ण हैं, जिसकी तिथि आठवी शताब्दी ई० मानी जाती है।[7] डॉ० जे०एन० बनर्जी का मत है कि प्रारम्भ मे मात्र आठ ग्रह ही उत्कीर्ण थे। केतु को बाद मे जोडा गया।[8] "यह अभिमत भुवनेश्वर के शिव मन्दिर के साक्ष्यो से निर्गत है। भौमकार कालीन सभी पूर्ववर्ती मन्दिरो की सोहावटी–पट्टो मे मात्र आठ ग्रहो का अकन है। तोरण सज्जो पर केतु का

---

1 जर्नल आफ यूनाइटेड प्रोविन्सेज हिस्टोरिकल सोसायटी, जिल्द I पृ० २६१ वर्ष १६१८

2 आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया एनुअल रिपोर्टस (वर्ष १६२८–२६) पृ० १६

3 जर्नल आफ रायल एशियाटिक सोसायटी (ग्रेट ब्रिटेन), १६२६, पृ० २४७–४८ देखे, इण्डियन हिस्टोरिकल क्वार्टली, १६३० जिल्द VI पृ० ३६७

4 कौसेन्स, प्लेट XIV देखे, साकलिया,एच०डी०, आर्कोलाजी आफ गुजरात, पृ० १६१

5 कौसेन्स, प्लेट XLIX, देखे, साकलिया एच०डी०, आर्कोलाजी आफ गुजरात, पृ० १६१

6 फर्गुसन, हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड इस्टर्न आर्चिटेक्चर, (प्रथम सस्करण) पृ० १०४

7 आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया एनुअल रिपोर्टस, १६२३–२४, पृ० १२०

8 बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४४४

अकन गग काल के बाद का है।[1] नवग्रहो की अन्य स्पष्ट विशेषता उडीसा के मन्दिरो मे चित्रित है। यहॉ के पूर्ववर्ती मन्दिरो मे वृहस्पति और शुक्र दाढी रहित प्रदर्शित है लेकिन कालान्तर मे इन्हे दाढी युक्त प्रदर्शित किया गया। सारनाथ से प्राप्त अपूर्ण नवग्रहो के उभारदार अकन मे वृहस्पति, शुक्र, शनि और राहु अवशिष्ट है। सभी के दो भुजाएँ है, वृहस्पति, शनि और शुक्र आकर्षक मुद्रा मे खडे है। प्रत्येक के सिर के पीछे प्रभामण्डल है और प्रत्येक अपने दाये हाथ मे माला और बाये हाथ मे एक जलपात्र लिये हैं। शनि का बाया हाथ टूट गया है। राहु मात्र वक्षस्थल तक प्रदर्शित हैं।

सभवत नवग्रहो से चित्रित पट्ट नियमित नवग्रह–उपासना मे भी प्रयुक्त होते थे।[2] वे सदैव वास्तुगत अगो के रूप मे प्रयुक्त नही होत थे। नवग्रहो से युक्त एक पट्ट राष्ट्रीय सग्रहालय नई दिल्ली मे सुरक्षित है। (न० ५६,३६८), (प्लेट २०, चित्र २) कन्कन्दीघी[3] (बगाल) से प्राप्त एक कमलासन पर सभी नवग्रह आकर्षक ढग से खडे है। इसी प्रकार का एक अन्य नवग्रह पट्ट पटना सग्रहालय (न० आर्कोलाजी १२२) मे सुरक्षित है।[4] किछिग[5] के ध्वसावशेषो से एक नवग्रह चक्र प्राप्त हुआ है।

काशी से नवग्रह आकृतियो के स्वतत्र और मन्दिर के प्रवेश द्वार के उत्तरगो पर समूह मे दोनो ही प्रकार के अकन मिलते हैं। ११वी–१२वी शती ई० से २०वी शती ई० के

---

1 बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी पृ० ४४४

2 बनर्जी, जे०एन०,डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी पृ० ४४४

3 वही० पृ० ४४५, यह कलकत्ता वि०वि० के आशुतोष सग्रहालय मे सुरक्षित है। देखे, प्लेट XXXI चित्र २

4 आठ ग्रहो वाली एकाधिक नवग्रह पट्टिका पटना सग्रहालय मे सुरक्षित है। देखे न० १२३

5 बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४४५, प्लेट XXX चित्र १

मध्य के ये उदाहरण तारकेश्वर महादेव मन्दिर (भैरवनाथ), कपिलेश्वर मन्दिर (कपिलधारा) हनुमान मन्दिर (राजमन्दिर), हनुमान मन्दिर (हनुमान घाट), कालभैरव मन्दिर (भेरवनाथ), से प्राप्त हुए हैं। इन उदाहरणो मे सामान्यत नवग्रहो का समूह मे अकन हुआ है। इनमे मात्र एक उदाहरण को छोडकर अन्य सभी मे कुछ ग्रहो की आकृतियॉ ही शेष वची हैं। सभी ग्रहो से युक्त ११वीं–१२वीं शती ई० के पट्ट का एक उदाहरण अवडेगॉव (पचकोशीमार्ग) के भीमेश्वर मन्दिर के गर्भगृह के पीछे की भित्ति पर देखा जा सकता है। प्रस्तुत उदाहरण (47x66 से०मी) मे क्रम से सूर्य से केतु तक ग्रहो का अकन हुआ हैं|सूर्य से शनि तक के ग्रह आसीन मुद्रा मे दिखाये गये हैं। सूर्य के हाथो मे पद्म है जबकि अन्य ग्रहो के करो मे अभय मुद्रा और फल प्रदर्शित है। राहु का केवल मुख ही स्पष्ट है जो अन्य आकृतियो की अपेक्षा बडा है। केतु का अकन स्त्री के रूप मे हुआ है।

११वी–१२वी शती ई० का एक अन्य खण्डित उदाहरण सोरईया महादेव मन्दिर से प्राप्त हुआ है जिसमे मात्र दो ग्रह आकृतियॉ ही शेष है। दोनो ही आकृतियॉ आसीन आकृतियॉ है जिनके हाथो मे अभय मुद्रा और फल द्रप्टव्य है। १२वी शती ई० का एक अन्य उदाहरण रामघाट की सीढियो पर वृक्ष के नीचे भी देखा जा सकता हैं|यह भी एक खण्डित नवग्रह पट्ट (23x47 से०मी०) है जिस पर केवल बृहस्पति, शुक्र, शनि ओर केतु की आकृतियॉ ही शेष है। इसी प्रकार तारकेश्वर महादेव मन्दिर के उदाहरण मे भी केवल तीन ही ग्रहो की आकृतियॉ देखी जा सकती हैं। कपिलेश्वर महादेव मन्दिर के परकोटे की एक देवकुलिका मे भी नवग्रह पट्ट का एक खण्डित उदाहरण है जिसमे सूर्य,सोम, मगल और बुध की आकृतियॉ शेष हैं। सूर्य के हाथो मे पद्म और अन्य तीन ग्रहो के हाथो मे अभय मुद्रा और कलश प्रदर्शित है। हनुमान मन्दिर के उदाहरण में (२०वीं शती ई०) मे नवग्रहो का अकन तीन पक्तियो मे हुआ है। प्रस्तुत उदाहरण मे नवग्रहो को उनके पारम्परिक वाहनो के साथ बनाया गया है। सभी आकृतियॉ चतुर्भुज हैं। कुछ के हाथो मे पताका और खड्ग स्पष्ट है। सूर्य (सूर्य–सप्ताश्वरथ) तथा राहु को वाहन के साथ मस्तक विहिन दिखाया गया है। अन्य ग्रहो के साथ मेष, मृग और गज वाहन स्पष्ट है। ये आकृतियॉ पर्याप्त छोटी और घिसी हुई है।

नवग्रहो के स्वतत्र अकनो का एक उदाहरण त्रिलोचन महादेव मन्दिर के प्रदक्षिणापथ मे वृक्ष के नीचे सुरक्षित है। प्रस्तुत उदहरण मे सभी आकृतियॉ चतुर्भुज हैं। प्रत्येक ग्रह की पहचान अस्पष्ट हैं, किन्तु सभी को वाहनो पर बैठा दिखाया गया है। केवल कुछ के आयुध स्पष्ट है, उदारहणार्थ–अश्व पर बैठी आकृतियो के हाथो मे त्रिशूल ओर गदा, सिह पर बैठी आकृतियो के हाथो मे त्रिशूल और पद्म, मेष और सिह पर बैठी आकृतियो के हाथो मे पद्म स्पष्टत देखे जा सकते है। केतु के कटि के नीचे का भाग सर्पाकार बनाया गया हैं इसी प्रकार कालभैरव मन्दिर के उदाहरण मे सूर्य को सप्ताश्व रथ पर बैठे दिखाया गया है। सूर्य आकृति चतुर्भुज है किन्तु केवल दो हाथो के पद्म ही स्पष्ट है। चतुर्भुज चन्द्र वृषभ या मेष जैसे पशु चालित रथ पर आसीन हैं। उनके हाथो मे मात्र गदा और शख देखा जा सकता है। मगल को मेष पर पद्म और गदा के साथ दिखाया गया है। उनके अन्य हाथो मे आयुध अस्पष्ट हैं। बुध को श्वान जैसी आकृति पर अकुश और त्रिशूल लिये दिखाया गया है। इनके भी दो हाथो मे आयुध स्पष्ट हैं। गज पर आसीन बृहस्पति के हाथो मे खड्ग, गदा, शख और धनुष है। शनि, मेष पर आरूढ है जिनके दो हाथो मे त्रिशूल और गदा (?) देखा जा सकता है। राहु को सिह के रथ पर दिखाया गया है। रथ चक्र मे असुर मुख और मुख के नीचे अर्धचन्द्र बना है। मस्तक विहीन केतु केटि के नीचे का भाग सर्पाकार है उनके हाथो मे अक्षमाला, खड्ग, फलक और धनुष हैं।

नवग्रह आकृतियो के स्वतत्र अकन का एक उदाहरण (१६वी शती ई०) वाराणसी मे हनुमान घाट स्थित हनुमान मन्दिर से प्राप्त हुआ हैं ये आकृतियॉ एक वृक्ष के नीचे चबूतरे पर स्थित हैं। प्रत्येक आकृति के नीचे उनके नाम लिखे हैं। सभी आकृतियॉ चतुर्भुज और पैर मोडकर ध्यान मुद्रा मे बैठी है। ग्रहो के मस्तक पर छोटे मुकुट दिखाये गये हैं। ग्रहो के साथ वाहन का न दिखाया जाना आश्चर्यजनक है। सूर्य के हाथो मे अक्षमाला, पद्म, ध्वज और वरद–मुद्रा देखी जा सकती है। चन्द्र के हाथो मे भी सूर्य के समान ही आयुध प्रदर्शित है। मगल के हाथो मे अभय मुद्रा, पद्म, चामर (?) और वरद–मुद्रा तथा चेहरे पर मूछ स्पष्ट है। बुध के हाथो मे वरद–मुद्रा, दण्ड (?), चामर तथा पुस्तक देखे जा

सकते है। इनके भी चेहरे पर मूछे तथा शरीर पर आभूषण प्रदर्शित है। बृहस्पति के हाथो मे ध्वज, पद्म (दो मे) और अभय–मुद्रा स्पष्ट है। शुक्र के तीन करो मे घुरिका, पद्म ओर ध्वज स्पष्ट है, जबकि एक हाथ खण्डित है। शनि के हाथो मे अभय मुद्रा, चक्र (या पद्म), पताका (?) और वरद–मुद्रा द्रष्टव्य है। शनि के मुख पर मूछे भी बनी हैं ओर रग काला है। राहु का एक वृत्त के मध्य मात्र मुख भाग बना हे। वृत्त के ऊपर सर्पफल के समान सादा छत्र है। राहु के मस्तक पर मुकुट, कानो मे झुमके जैसा कर्णाभूषण ओर चेहरे पर मूछे बनी है। मस्तक विहीन पद्मासीन केतु अक्षमाला, खड्ग, खेटक और ध्वज (?) लिये है। उनके कमर पर धोती और गले मे माला स्पष्ट है। काशी से नवग्रहो की स्वतत्र आसीन मूर्तियो का एक मात्र यही उदाहरण प्राप्त हुआ है।

रेवन्त–

पौराणिक मिथकशास्त्र मे रेवन्त को सूर्य और सज्ञा का पुत्र बताया गया है।[1] बृहत्सहिता एव विष्णु धर्मोत्तर जैसे प्रारम्भिक ग्रन्थो मे भी सूर्य–पुत्र रेवन्त का उललेख हुआ है। किन्तु रेवन्त की मूर्तियॉ सख्या की दृष्टि से अत्यल्प है। दक्षिण भारत मे रेवन्त मूर्ति की अनुपलब्धता के कारण गोपीनाथ राव ने अपने ग्रन्थ मे रेवन्त के प्रतिमालक्षणो की कोई चर्चा नही की है। बृहत्सहिता मे अश्वारूढ रेवन्त को साथियो के साथ मृगयाक्रीडा मे व्यस्त बताया गया है।[2] विष्णु धर्मोत्तर (७० ५) मे मात्र इतना ही उल्लेख है कि अश्वारूढ रेवन्त सूर्य के समान होगे। मार्कण्डेयपुराण[3] मे अश्वारूढ रेवन्त जिरहबख्तर, बाण एव तूणीर सहित निरूपित है। उनके हाथो मे खड्ग और धनुष के स्थान पर कशा (चाबुक) का उल्लेख हुआ है। प्रारभिक वैदिक ग्रन्थो एव महाभारत मे सूर्य–पुत्रो मे रेवन्त का अनुल्लेख इस बात का सकेत देता है कि सूर्य पुत्रो मे रेवन्त को बाद मे सम्मिलित किया

---

1 शास्त्री, अजय मित्र, इडिया एज़ सीन इन दी वृहत्सहिता आफ वाराहमिहिर, पृ० १५३

2 बृहत्संहिता, ५७,५६ रेबुन्तोश्वारूढो मृगयाक्रीडादिपरिवार.।।

3 मार्कण्डेयपुराण, ७८,२२

गया। रेवन्त की मूर्तियो का निर्माण गुप्तकाल मे प्रारम्भ हुआ। मध्यकाल मे बिहार[1] बगाल[2] उ०प्र०[3] राजस्थान[4] मे रेवन्त की पर्याप्त मूर्तियाँ उकेरी गयी। खजुराहो, मोढेरा ओर ओसियाँ से भी रेवन्त की कुछ मूर्तियाँ मिली है। रेवन्त मूर्तियो के कुछ उदाहरण नालन्दा, सुल्तानगज,बडकामता, छछरीपास (बगलादेश), उन्नाव, भीटा, गढवा (उ०प्र०) ओसियाँ, आबनेरी, भरतपुरा एव झालावाड (राजस्थान) से मिले हैं जो विभिन्न सग्रहालयो मे सुरक्षित है।[5] कालिकापुराण[6] मे रेवन्त की उपासना का विस्तृत विवरण प्राप्त होता हे।

राजस्थान मे ओसिया के सूर्य मन्दिर[7] मे रेवन्त अपने भाई शनि के साथ उत्कीर्ण हैं। ओसिया के हरिहर मन्दिर की मूर्ति मे द्विभुज रेवन्त को अलकृत अश्व पर आरूढ तथा हाथो मे चषक और फल (?) तथा अश्व की लगाम पकडे निरूपति किया गया है। समीप ही लम्बा छत्र तथा मदिरा–पात्र लिए दो अन्य सेवक आकृतियाँ भी उकेरी हैं। सूर्य के समान रेवन्त उपानह किरीटमुकुट आदि से अलकृत हैं। अश्व के पीठ पर खड्ग और खेटक बधा है। सूर्य मन्दिर की मूर्ति मे अलकृत अश्व के पीछे श्वान की आकृति उत्कीर्ण

---

1 ब्लाख, सप्लीमेण्ट्री कैटलाग आव दी आर्क्योलाजिकल कलेक्शन इन दी इडियन म्यूजियम एट कलकत्ता–पृ० ८५, सख्या ३६२१, ३७७५१ ३७७७ द्वारा उद्धृत भगन्त सहाय, आइकनोग्राफी आव सम इम्पार्टेन्ट माइनर हिन्दू एण्ड बुद्धिस्ट डीटीज पृ० ८६

2 बनर्जी, जे० एन०, डिवलपमेन्ट आव हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४४२–४४३

3 शर्मा, बी०एन०, रेवन्त इन लिटरेचर एन्ड आर्ट– पुराण अक १३ भाग–२, पृ० १३६–१४३ तथा प्रमोदचन्द्र स्टोन स्कल्पचर्स इन दी इलाहाबाद म्यूजियम पृ० १०८ तथा ११३ फलक ६५,२६० तथा फलक ६८,२७८

4 शर्मा, बी०एन०, वही० पृ० १४३

5 सहाय, भगवन्त, आइकनोग्राफी आफ माइनर हिन्दू एण्ड बुद्धिस्ट डीटीज, पृ० ८६–६७

6 वही० पृ० ८६ तथा बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आव हिन्दू आइकोनोग्राफी, पृ० ४४२

7 शर्मा, डॉ० दशरथ, अर्लीचौहान डायनेस्टीज, पृ० २३५

है। रेवन्त के सुरक्षित बाये हाथ मे अश्व की लगाम स्पष्ट है। राजस्थान के जैसलमेरी पत्थर की १६२५ ई० की एक महत्वपूर्ण मूर्ति राष्ट्रीय सग्रहालय दिल्ली मे है। इस उदाहरण मे रेवन्त के दाहिने हाथ मे शूल है। जिससे वे भागते हुए शूकर पर प्रहार कर रहे है। उनके कटि से एक कटार भी बधी है। अन्य विशेषताये रेवन्त की सामान्य मूर्तियो जैसी है किन्तु मूर्ति के ऊपरी भाग मे एक बछडा गाय का दूध पी रहा हे तथा नीचे रस–मग्न प्रेमी युग्म और गणेश की आकृतियॉ बनी हैं। ये आकृतियॉ सभवत इस बात का शिल्पाकन है कि जहॉ रेवन्त का पूजन होता है वहॉ सुख, शाति एव समृद्धि रहती है। यह मूर्ति जैन ग्रन्थ कुवलयमाला के इस उल्लेख से समर्थित है जिसमे कहा गया हे कि समुद्री व्यापार करने वाले व्यापारी घोर सकट के समय अन्य देवी–देवताओ के साथ रेवन्त की भी आराधना करते थे।

बन्थलि[1] से प्राप्त सारगदेव अभिलेख गुजरात ओर काठियावाड राज्य मे रेवन्त की उपासना को प्रमाणित करता है।

मध्य प्रदेश मे विलासपुर जिले के कोटागढ[2] के विकर्णपुर नामक स्थान से रेवन्त का एक मन्दिर प्राप्त हुआ है। यह मन्दिर रत्नदेव द्वितीय (११४१–४२ ई०) के प्रधान सामन्त बल्लभराज ने बनवाया था। इसके अवशेष आज भी कोटागढ मे विद्यमान हे। मैहर मे[3] भदनपुर स्टेशन के समीप मनोर से रेवन्त की एक मूर्ति मिली है। खजुराहो के लक्ष्मण मन्दिर मे भी अश्वारूढ रेवन्त की एक मूर्ति है। रेवन्त की एक मूर्ति खजुराहो के लक्ष्मण मन्दिर (ल० ६५ ई०) की दक्षिणी जगती की रूप पट्टिका (नरथर) मे बनी है। अश्वारोही खड्गधारी आकृति के मस्तक पर अनुचर द्वारा छत्र लगाया गया है और समीप

---

1 इपिग्राफिआ इण्डिका जिल्द X लूडर्स लिस्ट न० ६२४

2 कार्पस इन्सिक्रिप्सनम इण्डिकारम् जिल्द IV भाग I पृ० १६३

3 बनर्जी, आर०डी०, मेमोर्स आफ दी आर्कियोलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया, न० २३ पृ० १२६

ही शूकर भी उत्कीर्ण हैं।

पूर्वी भारत[1] से भी रेवन्त की अनेक मूर्तियॉ प्राप्त हुई है। बद्‌कम्त[2] नामक स्थान के एक तालाब से रेवन्त की एक मूर्ति प्राप्त हुई है जो दक्क सग्रहालय मे सग्रहीत है। रेवन्त की कई मूर्तियॉ भारतीय सग्रहालय कलकत्ता मे सग्रहीत है।[3]

गोन्डे–गोबरी (प्रतापगढ, उ०प्र०) से रेवन्त का एक प्रस्तर फलक प्राप्त हुआ हे जिसका परिमाप १३३ से०मी०X६४ से०मी० है।[4] बलुकाश्म निर्मित इस प्रस्तर फलक पर रेवन्त के मृगया का दृश्य है। दृश्य मे रेवन्त मध्य मे अश्व पर आसीन प्रदर्शित किये गये है,जिनका शीर्ष भाग खडित हो चुका है। रेवन्त के शीर्ष के ऊपर छत्र भी निर्मित किया गया था। रेवन्त के अश्व के समीप एक पुरूष आकृति निर्मित है जो सभवत छत्र धारण किये थी। उसके पीछे पताका लिए हुए एक पुरूष का अकन है और फलक के दाहिने उपान्त के मध्य मे कन्धे पर मृतक पशु लिए हुए पुरूष की आकृति अकित है। रेवन्त के आगे एक व्यक्ति रेवन्त को सुरापूरित चषक प्रदान करते हुए प्रदर्शित है तथा अन्य व्यक्ति कन्धे पर लकुट के सहारे खाद्य सामग्री को पोटली मे लिए हुए प्रदर्शित किया गया है। उसके आगे अश्व पर सवार अन्य योद्धा है जो पीछे दृष्टि घुमा कर रेवन्त को देख रहा है। सबसे आगे कोई वाद्य यन्त्र मुख से बजाते हुए व्यक्ति का अकन है। अश्वो के पेरो के बीच मे कुत्तो का अकन है जो मृगया मे सहायक होते थे। फलक के दाहिनी ओर ऊर्ध्व उपान्त मे आसीन मुद्रा मे चतुर्भुजी आकृति का अकन है जिसके एक हाथ मे खड्‌ग जैसी कोई वस्तु तथा दूसरे हाथ मे चषक जैसी कोई वस्तु है। ऊर्ध्व वामहस्त मे भी किसी वस्तु को अकित किया गया था जो स्पष्ट नहीं है, परन्तु वाम अद्य हस्त बाये जानुपर प्रदर्शित है। यह प्रतिमा सुखासन मुद्रा मे हैं इसके बायी ओर नवग्रहो का अकन है। सूर्य

---

1 पटना सग्रहालय मे रेवन्त की एक मूर्ति है। न० १०६४८

2 बनर्जी, जे०एन०, प्रोसिडिग आफ हिस्ट्री काग्रेस, पृ० ४४३

3 जर्नल आफ ओरियन्टल इन्स्टीच्यूट बडोदा १६०६, पृ० ३६१–६२ प्लेट XXX

4 शुक्ल, डा० विमल चन्द्र, भारतीय कला के विविध आयाम, पृ० २

के दोनो हाथ ऊपर की ओर उठे हैं जिनमे कमल प्रदर्शित है। सोम, मगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, एव शनि त्रिभग मुद्रा मे खडे हुए है एव दाहिना हाथ अभय मुद्रा मे है। राहु आसीन मुद्रा मे हैं तथा सर्पाकृति अधोभाग युक्त केतु बाये हाथ से पात्र पकडे तथा स्थानक रूप मे प्रदर्शित है। फलक के शीर्ष वाम उपान्त मे सप्त मातृकाओ का अकन हे जिनके एक ओर एक गण तथा दूसरी ओर चतुर्भुज गणेश अकित है। फलक की पाद पीठिका पर भी कतिपय दृश्यो का अकन था जो पूर्णतया नष्ट हो चुका है।

साहित्य एव शिल्प के आधार पर रेवन्त की मूर्तियो को दो वर्गो मे बाटा जा सकता है। पहले वर्ग मे ऐसी मूर्तियॉ हैं जिनमे बृहत्सहिता के विवरण के अनुरूप रेवन्त को कुछ सहयोगियो सहित अश्वारूढ आखेटक के रूप मे आमूर्तित किया गया। इस वर्ग की मूर्तियो (भरतपुर, झालावाडद्व नालन्दा, बडकामता) मे या तो आखेट के क्षणो को शिल्पाकित किया गया है या फिर आखेट के पश्चात् वापिस लौटने की स्थिति (खजुराहो एव सुल्तानगज की मूर्तियॉ) अभिव्यक्त हुई है। दूसरे वर्ग की मूर्तियो मे मार्कण्डेय पुराण के विवरण के अनुरूप रेवन्त को अकेले तथा मानसिक और भौतिक सुखो को देने वाले एव विभिन्न विघ्न–बाधाओ को दूर करने वाले देवता के रूप मे आमूर्तित किया गया है। ऐसी मूर्तियॉ आसियॉ तथा कुछ अन्य स्थलो से मिली हैं। कभी–कभी विष्णु के कल्कि अवतार और रेवन्त की मूर्तियो की पहचान मे उनके लक्षण–साम्य के कारण कठिनाई भी उपस्थित होती है। किन्तु वास्तव मे दोनो के अश्वारूढ होने के अतिरिक्त उनके मध्य अन्य कोई समानता नही है। रेवन्त सूर्य के समान उपानह, वर्म और किरीटमुकुट धारी दिखाये गये है।

सभी मूर्त उदाहरणो मे रेवन्त द्विभुज और अश्वारूढ है। नालन्दा से मिली मूर्ति मे सर्वालकृत और अश्व पर आरूढ रेवन्त के एक हाथ मे पात्र (चषक) तथा दूसरे मे अश्व की लगाम प्रदर्शित है। समीप ही एक सेवक लम्बा छत्र लिये दिखाया गया है जिसका छत्र भाग रेवन्त के सिर के ऊपर द्रष्टव्य है। मध्ययुग की अन्य मूर्तियो मे भी यही विशेषताये मिलती हैं। ढाका सग्रहालय की मूर्ति काफी हद तक नालन्दा मूर्ति के सदृश है। इस मूर्ति

मे रेवन्त के पैरो मे उपानह दिखाया गया है तथा अश्व के समीप ही एक खड्गधारी आकृति भी बनी है। रेवन्त के चरणो पर एक शिशु को रखती हुई स्त्री आकृति तथा आखेटक की आकृति भी उकेरी हैं। आखेटक भागते हुए शूकर को लक्ष्य कर शरसधान की मुद्रा मे रूपायित है। इस मूर्ति के निचले भाग मे सात अन्य स्त्री आकृतियॉ फल, पुष्प और कलश के साथ निरूपित है जो रेवँत की पूजा से सम्बन्धित हैं। मध्यभारत से मिली एक मनोज्ञ मूर्ति सम्प्रति बर्लिन सग्रहालय मे है। इस उदाहरण मे भी सहायको से परिवृत्त द्विभुज रेवन्त को अश्व पर आरूढ और दाहिने हाथ मे पुष्प तथा बाये मे पात्र और घोडे की लगाम पकडे दिखाया गया है। नीचे की ओर श्वान तथा सात अन्य आकृतियॉ बनी है जिनमे से दो के कन्धो पर आखेट मे मारे गये शूकर की आकृति देखी जा सकती है। लगभग ऐसी ही एक मूर्ति झालावाड के रगपाटन से मिली है। चित्तौड के समीप नगरी से रेवन्त की एक खण्डित मूर्ति मिली है जिसमे अश्वारूढ रेवन्त के दाहिने हाथ मे मदिरा–पात्र और बाये मे अश्व की लगाम है। पीछे मलाह, हर्षगिरि (सीकर), आबनेरी, नगर स्थित श्याम जी मन्दिर, बागोर ग्राम (भलवाडा) एव अजमेर, भरतपुर ओर झालावाड सग्रहालयो मे है। इनमे से अधिकाश उदाहरणो मे रेवन्त आखेटक के रूप मे अश्वारूढ दिखाये गये है। उनके आगे–पीछे दो अश्वारोही शिकारियो तथा शूकरो का पीछा करती श्वान आकृतियॉ उकेरी है। कुछ उदाहरणो मे एक सैनिक रेवन्त का खड्ग व खेटक लेकर खडा है तथा अश्वारूढ रेवन्त के समीप ही मदिरा–पात्र लिए सेविका खडी है जिसे कुछ उदाहरणो मे रेवन्त के हाथ मे स्थित चषक मे मदिरा डालते हुए दर्शाया गया हे।

❀❀❀

अध्याय – छः

द्वादशादित्य

अध्याय छः
"द्वादशादित्य परम्परा"

आदित्य शब्द का सर्वप्रथम उल्लेख एक देव समूह मे ऋग्वेद[1] मे मिलता है। ऋग्वेद मे विश्वदेवा, मरूत, रूद्र और वासुस जैसे कुछ प्रसिद्ध देव समूह है।[2] देव समूह की उपासना वैदिक धर्म की प्रमुख विशेषता है।[3] आदित्य अन्य देव समूह से निम्नलिखित अर्थ मे भिन्न है।

(अ) आदित्य या तो माता अदिति या मुख्य देव वरूण से जुडे है।

(ब) आदित्य समूह मरूत या विश्वदेवास या रूद्र देव समूह से अधिक निश्चित है क्योकि इसके सदस्यो की अलग पहचान है।[4]

(स) आदित्य वर्ग मे वरूण, इन्द्र[5] जैसे प्रभावशाली एव महत्वपूर्ण देवतागण सम्मिलित हैं।

(द) आदित्य वर्ग का एक नैतिक क्रम है। वरूण ऋत् के रक्षक हैं। वह सर्वशक्तिमान भी है।[6]

---

1 ऋग्वेद, १८६ १०

2 कीथ, ए०बी०, दी रिलीजन एण्ड फिलोसफी आफ दी वेद एण्ड उपनिषदस, पृ० २२१–२२३

3 मैकडोनल, ए०ए०, वैदिक मिथोलाजी, पृ० १३८–१३६

4 वही०, पृ० १३०

5 वही० पृ० २२–२३ देखे ऋग्वेद X, 132,4,II,27 10 V 8 9.3, VII 87-67

6 बैरगैगन, एबेल, वैदिक रिलीजन एकार्डिंग टू हिम्स आफ ऋग्वेद, जिल्द–III

आदित्य अदिति के पुत्र है[1] इसलिए आदित्य कहे जाते हैं। ऋग्वेद मे उनको कई उपाधियो से सम्बोधित किया गया है जो प्रकाश से उनके सम्बन्ध का सूचक है। ये उपाधियॉ शुकय, हिरणया, अनिमिषा, दीर्घधिया और भूर्यक्ष हैं।[2]

इसी प्रकार, आदित्य को ऋग्वेद मे सूर्य देव नही माना गया है। वहा आदित्य (Adıtyas) और आदित्य (Adıtya) (सूर्य) मे अन्तर उल्लिखित है।[3] ऋग्वेद मे एक बार आदित्य (Adıtya) नाम उगते हुए सूर्य के लिए प्रयुक्त है।

ऋग्वेद मे मूलरूप से मात्र तीन आदित्यो–वरूण, मित्र तथा अर्यमन का उल्लेख मिलता है। दूसरी अवस्था मे इन्द्र के जुडने से उनकी सख्या चार हो गयी। सवितृ (भग) के जुडने से पॉच और अगली अवस्था मे दक्ष और अश के जुडने से सात हो गयी। अन्त मे मार्तण्ड के योग से उनकी सख्या ८ हो गयी।[4]

ऋग्वेद के एक छन्द मे[5] आदित्य की सख्या सात बतायी गयी है जबकि अन्य छन्द मे[6] कहा गया है कि पहले अदिति के सात पुत्र थे लेकिन बाद मे वह आठवे पुत्र

---

1 राव,टी०ए०जी०, एलीमेन्टस आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, जिल्द I पार्ट II पृ० २६६ ऋग्वेद, I 89 16

2 ऋग्वेद II 27

3 ऋग्वेद 1 50 13

4 सकलानी ने पैनुली, गीता, द्वादशादित्य इन लिटरेचर, रिलीजन एण्ड आर्ट, १६६१ पृ० ४६–४७

5 ऋग्वेद, IX-114 3 सप्तदिशो नाना सूर्या· सप्त होतार ऋत्विज·। देवा आदित्या, ये सप्त तेभि सोमाभि रक्ष न इन्द्रायेन्द्रो परि स्रव

6 ऋब्वेद X 72 8

अष्टौ पुत्रासो अदिते यें जातास्तन्वा स्परि

देवा उप् प्रैत सप्तभि परा मार्ताण्डमास्यत्।।

मार्तण्ड को जन्म दी। इस प्रकार स्पष्ट है कि उपर्युक्त सात देवताओ के अतिरिक्त सूर्य एक अलग देवता है। जो ऋग्वेद के परवर्ती ग्रन्थो के अनेक स्तोत्रो मे आदित्य कहे गये है।[1] इस प्रकार ऋग्वेद मे कुल आठ आदित्यो का उल्लेख हुआ है जिनका क्रम इस प्रकार है– वरूण, मित्र, अर्यमन, इन्द्र, सवितृ, दक्ष, अश और सूर्य (मार्तण्ड)।

शतपथ ब्राह्मण और तैत्तिरीय ब्राह्मण मे आठ आदित्यो का नामोल्लेख हे।[2] अथर्ववेद[3] मे भी आठ आदित्यो–पुषन, विष्णु, त्वष्ट अश, भग, मित्र, अर्यमन और वरूण, का उल्लेख है अथर्ववेद के अन्य पद[4] मे यज्ञ से सम्बन्धित मात्र सात आदित्यो–सवितृ त्वष्ट, इन्द्र, भग, मित्र, सूर्य और वरूण का उल्लेख है। जनता की रक्षा हेतु उनकी पूजा की जाती थी।[5] उन्हे महान धनुर्धारी और युद्ध मे सरक्षक कहा गया है।[6] वे यज्ञ को नष्ट होने से बचाते हैं और लोगो को बल प्रदान करते हैं।[7] आदित्य शासक की भॉति हैं इसलिए शक्ति प्रदान करने के लिए उनका आवाहन किया जाता है।[8] युद्ध मे विजय के लिए भी उनकी स्तुति की जाती है।[9] उत्तर वैदिक काल मे सभी आठ आदित्यो का

---

1 ऋग्वेद I 50 13

उदगादुयादित्यो विश्वेन सहसा सह।

2 सकलानी ने पैनुली, गीता, (द्वारा उदधृत) द्वादशादित्य इन लिटरेचर, रिलीजन एण्ड आर्ट, १६६१, पृ० ४६

3 अथर्ववेद, VII 9 21

4 अथर्ववेद, VI 3 4

5 सकलानी ने पैनुली, गीता, द्वादशादित्य इनलिटरेचर रिलीजन एण्ड आर्ट, १६६१,पृ० ५०

6 अथर्ववेद, IV,29,1-7

7 अथर्ववेद, I 3 01

8 अथर्ववेद, III 27 1-5

9 अथर्ववेद VII 3-1-3

उल्लेख है लेकिन मार्तण्ड का विस्तृत उल्लेख नही मिलता। लगभग सभी सहिताओ मे[1] अदिति के इन आठ पुत्रो का उल्लेख है। तैत्तिरीय सहिता मे[2] मित्र वरूण, धाता, अर्यमा, भग, इन्द्र, विवस्वान और मार्तण्ड का उल्लेख है। इस सूची और ऋग्वैदिक आदित्यो की सूची के तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट है कि प्रथम पॉच नाम–मित्र,वरूण,अर्यमन्, अश, भग दोनो सूचियो मे सर्वनिष्ठ हैं। तैत्तिरीय ब्राह्मण की इस सूची मे मार्तण्ड का भी उल्लेख है।

शतपथ ब्राह्मण मे[3] आदित्यो की सख्या आठ से बढकर बारह हो गयी। यहॉ अदिति के पुत्र के रूप मे आदित्यो का कोई उल्लेख नही है। इसी ग्रन्थ के दूसरे पद मे[4] कहा गया है। कि वर्ष के बारह महीने ही बारह आदित्य हैं।[5] यह इस बात का राकेतक है कि आदित्य का तादात्म्य समय से स्थापित किया गया। उपनिषद[6] भी बारह आदित्यो

---

1 त्रिपाठी, जी०सी०, ऋग्वैदिक देवताओ का उद्भव एव विकास, पार्ट II पृ० २–७

2 तैत्तिरीय सहिता ११६१

3 शतपथ ब्राह्मण VI 1 2 8,11 6 3 8

4 शतपथ ब्राह्मण XI 6 6 6

कतम् आदित्या इति

द्वादशमासा सवक्षररयैत आदित्या

5 श्रीवास्तव, विनोद चन्द्र, सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, पृ० १२० cff

6 बृहदारण्यक उपनिषद (कैलाश आश्रम, ऋषिकेश) १६८०, III ६ ५ पृ० ८८५

कतम् आदित्या इति वै द्वादश माया सवत्सरस्य कालस्यावयवा

प्ररिपछा एत आदित्या· कथम्। एते हि यामात्पुन परिवर्तमाना

प्राणिनामायूषि कर्मफल चा ददाना ग्रहन्त उपाददतो यन्ति गच्छन्ति

त यद्यस्मादेवमिद सर्वमाददाना यन्ति तस्मादित्या इति।

का उल्लेख करते है। सर्वत्र उनका तादात्म्य वर्ष के बारह महीनो से स्थापित किया गया है। अनेक ग्रन्थो मे बारह आदित्यो की सूची भिन्न–भिन्न है। एक सूची मे घातृ, मित्र, अर्यमन्, रूद्र, वरूण, सूर्य, भग, विवस्वान, पूषन, सवितृ, त्वष्ट और विष्णु का उल्लेख है। अज्ञात लेखक द्वारा लिखित[1] साम्ब पचशिखा के भाष्य मे बारह आदित्यो का उल्लेख कुछ भिन्न है जिसमे सूर्य और सवितृ को छोड़कर इन्द्र और पर्जन्य को स्थान दिया गया है। इस भाष्य मे वर्णित है कि बारह आदित्य बारह महीनो का नेतृत्व करते हैं। लेकिन यह उपनिषद बहुत बाद का है और वस्तुत पौराणिक परम्परा का अनुसरण करता है।[2] इसमे बारह आदित्यो का तादात्म्य बारह सूर्य से स्थापित किया गया है।

महाभारत मे[3] अदिति के पुत्र आदित्य की उत्पत्ति और सख्या का उल्लेख है। महाभारत मे आदित्य की अनेक सूची है जिसमे उनकी सख्या सात, ग्यारह, बारह या तेरह उल्लिखित है। लेकिन वस्तुत बारह आदित्य हैं।[4] महाभारत के वनपर्व मे[5] हमे दैवी प्राणियो की उत्पत्ति का विस्तृत उल्लेख मिलता है। यह ज्ञात है कि ब्रह्म के छह आध्यात्मिक पुत्र–मारिच्, अत्रि, अगिरस, पुलस्त्य, पुलुह तथा क्रतु थे। कश्यप, मारिच् के पुत्र है और कश्यप से ये सब प्राणी उत्पन्न हुए। अदिति, दिति, दनु, कष्ट, दनयु, मुनि, सिहिका कद्रु, क्रोध, प्रौध विनता, कपिला, सुरभि, दक्ष की पुत्रियॉ हैं। अदिति से बारह

---

1 दास, ए०सी०, ऋग्वैदिक इडिया, पृ० ४१०–४१२

2 विष्णु–पुराण ११५ १२६ १३३

3 महाभारत १११ १३४ १६ महाभारत (cr) 111 134 18 महाभारत (गीता प्रेस सस्करण) I 164 19,

4. सकलानी पैनुली, गीता, द्वादशादित्य इन लिटरेचर रिलीजन एण्ड आर्ट, १९९१ पृ० ६४

5 महाभारत, १५६ १६

आदित्य उत्पन्न हुए जो सृष्टि के स्वामी हैं। उनके नामो की सूची[1] इस प्रकार–धाता, मित्र, अर्यमान्, सक्र, वरूण, अश, भग, विवश्वान्, पूषन्, सवितृ, त्वष्ट और विष्णु हैं।

महाभारत,
1 १–५४–१६

ब्राह्मणा मनसा पुत्रा विदिता षष्ठ महर्षय

मरीचिरत्रयङ्गि–रसो पुलस्त्य पुल ऋतु

मरीचे कश्यप पुत्र कश्यपातु इमा प्रजा

प्रज्ञज्ञिरे महाभागा दक्षकन्यास्त्रयोदश।

अदिर्तिदितिर्दनु काष्ठाअनयु सिहिका मुनि

क्रोधा प्रावा अरिष्ट च विनता कपिला तथा

कद्रश्च मनुजव्याघ्र दक्षकन्यैव भारत।

एतासा वीर्य सम्पन्न पुत्रपौत्रगमन्तम्।

आदित्य द्वादशादित्या सभूता भुवनेश्वरा

ये राजान्मामतस्तास्ते कीर्तियष्यामि भारत

धाता मित्रो अर्यमा शक्रो वरूणश्राश्च एव च

भगो विवस्वान् पूषा च सविता दशमस्तथा

एकादशस्तथा त्वष्टा विष्णु द्वार्दश उच्यते

गधन्यज स सर्वेषामादित्याना गुणाधिकम्।

महाभारत में[1] बारह आदित्यो का तादात्म्य वर्ष के बारह महीनो से स्थापित किया गया है। इसमे कहा गया है कि यज्ञो की सख्या बारह है और विद्वान् आदित्यो की सख्या बारह मानते है। सूर्य के एक सौ आठ नामो मे उन्हे द्वादसनाम और अदिति सुत कहा गया है। जगत के विघटन के समय बारह आदित्य बारह सूर्य के रूप मे प्रकट होते हैं, जिसमे विष्णु अनादि–अनन्त है।[2] महाभारत मे उल्लिखित बारह आदित्यो मे विष्णु को प्रमुख स्थान प्राप्त है। रामायण के आदित्य हृदय स्तोत्र मे[3] आदित्य के एक सौ आठ नामो मे ही बारह आदित्यो का नाम सम्मिलित है। यहॉ बारह आदित्यो का अलग से कोई उल्लेख नही मिलता है। रामायण मे उल्लिखित है कि अगस्त्य की सलाह पर रावण को मारने के पूर्व राम ने आदित्यहृदय मत्र के जप द्वारा सूर्योपासना की थी। इससे स्पष्ट है कि आदित्य का सूर्य के साथ तादात्म्य स्थापित किया गया।[4]

---

1 cr ed III 134 18

सवत्सर द्वादश मासमाहु

र्जगत्या पादो द्वादशेव सिराणि

द्वादशाह प्राकृतो यत उक्तो

द्वादशायित्यान्कथयन्तीह विप्रा

2 श्रीवास्तव, वी०सी०, सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, पृ० १६०–१६१

3 पञ्चाधिकशतम सर्ग १०५, गीता प्रेस, गोरखपुर

आदित्यहृदय पुण्य सर्वशत्रु विनाशकम्

जयावह जयन्नित्यमक्षय परम शिवम्

सर्वमग्ल्य माग्ल्य सर्व पापप्रणाशनम्

चिन्ता शोक प्रशमनमा पुर्वर्वनयुक्तम्

आदित्य सविता सूर्य खग पूषा गमस्तिमान्

सुर्वेणा सदृशो द्वर्यश्रवाय नमो नम।

नमो नम सहस्त्राशो आदित्याय नमो नम

4 सिन्हा, बी०सी०, हिन्दुइज्म एण्ड सिम्बल वर्शिप, पृ० ८१

प्रारभिक पुराणो मे बारह आदित्यो को वर्ष के बारह महीनो से सम्बन्धित किया गया है।[1] प्रारभिक पुराणो मे विष्णु पुराण[2] (तृतीय–चतुर्थशती ई०), वायुपुराण (तृतीय शती ई०)[3], मार्कण्डेय पुराण (तृतीय–चतुर्थ शती ई०)[4], ब्राह्मण्ड पुराण (द्वितीय–पॉचवी शती ई०)[5] और मत्स्य पुराण (तृतीय–पॉचवी शती ई०)[6] सम्मिलित हैं।

आदित्यो की बारह सख्या अवैदिक है क्योकि ऋग्वेद मे इनकी अधिकतम सख्या आठ उल्लिखित है। ब्राह्मण ग्रन्थो मे बारह आदित्यो का उल्लेख है। इसी परम्परा का अनुसर`ण कर प्रारभिक पुराणो मे आदित्यो की सख्या बारह स्वीकार की गयी।

प्रारभिक पुराणो मे बारह आदित्यो की प्रकृति मे परिवर्तन परिलक्षित होता हे। अब आदित्य सूर्य देव के दल का प्रतिनिधित्व करते हैं। सूर्य से उनका प्रत्यक्ष तादात्म्य स्थापित किया गया लेकिन कुछ अवसर पर वे सूर्य से भिन्न भी हैं।[7] विविध प्रारभिक पुराणो मे बारह आदित्यो का अनेक नाम मिलता है। विविध पुराणो मे इनके नामो की एक तुलनात्मक सूची निम्नलिखित है

---

1 श्रीवास्तव, वी०सी०, सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, पृ० २०३

2 श्रीवास्तव, वी०सी०, सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, पृ० २०४–२०६

3 हजरा, आर०सी०, स्टडीज इन दी पुराणिक रिकार्डस आन हिन्दू राइटस एण्ड कस्टमस, वाराणसी, १९८७ पृ० १३–१६

4 वही०, पृ० ८–१३

5 वही०, पृ० १७–१६

6 वही०, पृ० २६–५२

7 श्रीवास्तव, वी०सी०, सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, पृ० २१४–२१७

विष्णु	वायु	ब्रह्माण्ड	मत्स्य
विष्णु	धाता	धाता	इन्द्र
इन्द्र	अर्यमन्	अर्यमान्	धाता
अर्यमन्	मित्र	मित्र	भग
धाता	वरूण	वरूण	त्वष्ट
त्वष्ट	अश	अश	मित्र
पूषन्	भग	भग	वरूण
विवस्वान्	इन्द्र	इन्द्र	यम्
सवितृ	विवस्वान्	विवस्वान्	विवस्वान
मित्र	पूष	पूष	सवितृ
वरूण	पर्जन्या	पर्जन्या	पूग
अश	त्वष्ट	त्वष्ट	अशुमन
भग	विष्णु	विष्णु	विष्णु

इन सूचियो के तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट है कि विष्णु इन्द्र,धाता, त्वष्ट, पूष, विवस्वान, मित्र, वरूण और भग सभी सूची मे सर्वनिष्ठ हैं। विष्णु और मत्स्य पुराण मे सवितृ का उल्लेख हैं। वायु और ब्रह्माण्ड पुराण मे पर्जन्य का उल्लेख है। यम का उल्लेख केवल मत्स्य पुराण मे मिलता है। केवल विष्णु पुराण मे विष्णु को प्रमुख देवता का स्थान प्राप्त है जबकि वायु और ब्रह्माण्ड पुराण मे धाता प्रमुख हैं। मत्स्य पुराण मे प्राचीन परम्परा का अनुसरण कर इन्द्र को प्रमुख स्थान प्रदान किया गया है। वायु, ब्रह्माण्ड और विष्णु

पुराण मे विष्णु सबसे छोटे है। ज्ञात है कि इन समस्त सूचियो मे मार्तण्ड का नामोल्लेख नही है जबकि प्रारभिक पुराणो मे अलग से उनका उल्लेख हुआ है।[1]

विष्णु पुराण मे प्रत्येक माह मे आदित्यो की स्थिति निम्नलिखित प्रकार से दी गयी है–

धातृ	चैत्र
अर्यमा	वैशाख
मित्र	ज्येष्ठ
वरूण	असाढ
इन्द्र	श्रावण
विवस्वान्	भाद्रपद
पूषन्	आश्विन्
पर्जन्य	कार्तिक
अश	मार्गशीर्स
भग	पौष
त्वष्ट	माघ
विष्णु	फाल्गुन

मत्स्यपुराण, कूर्मपुराण और अन्य परवर्ती पुराणो मे भी इसी परम्परा का अनुसरण किया गया है।

विष्णु पुराण मे[1] प्रत्येक माह मे बारह आदित्यो से सम्बन्धित देवताओ और

---

1 वायु पुराण, ८४–२६–२६

ब्राह्मण पुराण, ३–५६–२७–३०

मत्स्य पुराण, II ३६

अल्पदैवीय प्राणियो का उल्लेख है।

चैत्रमास मे सूर्य धाता नाम से विख्यात है तथा कृतस्थली अप्सरा, पुलस्त्य ऋषि, वासुकी सर्प, रथकृत यक्ष, हेति राक्षस तथा तुम्बुरू गधर्व के साथ अपने रथ पर रहते है।

वैशाख मास मे सूर्य अर्यमा नाम से विख्यात है तथा पुलह ऋषि, उर्ज यक्ष, पुञ्जिकस्थली अप्सरा, प्रहेति राक्षस, कच्छनीर सर्प और नारद नामक गन्धर्व के साथ अपने रथ पर निवास करते है।

ज्येष्ठ मास मे सूर्य मित्र नाम से जाने जाते हैं तथा जिनके साथ अत्रि, ऋषि तक्षक सर्प, पौरुषेय राक्षस, मेनका अप्सरा, हाहा गन्धर्व और रथस्वन नामक यक्ष सूर्य की गाडी मे यात्रा करते हैं।

अषाढ मास मे सूर्य अरूण (वरूण) नाम से विख्यात हैं। उनके साथ वरिष्ठ ऋषि, सहजन्य नाग, रम्भा अप्सरा, हूहू गन्धर्व, शुक राक्षस तथा चित्रस्वन नामक यक्ष सूर्य की गाडी मे यात्रा करते है।

श्रावण माह मे सूर्य इन्द्र नाम से जाने जाते है। वे अपने रथ पर अगिरा ऋषि, विश्वावसु गन्धर्व, प्रम्लोचा अप्सरा, एलापुत्र नाग, श्रोता यक्ष तथा शर्य राक्षस के साथ चलते है।

भाद्र मास के अधिपति सूर्य का नाम विवस्वान् है। भृगु ऋषि, अनुम्लोचा अप्सरा, उग्रसेन गन्धर्व, शखपाल नाग, आसारण यक्ष तथा व्याघ्र राक्षस सदैव सूर्य की गाडी मे उपस्थित रहते हैं।

आश्विन मास मे सूर्य के रथ पर पूषा नामक आदित्य, गौतम ऋषि, घृताची अप्सरा, सुरुचि गन्धर्व, धनजय नाग, सुषेण यक्ष तथा धाता राक्षस सदैव परिभ्रमण करते हैं।

---

1 विष्णु पुराण, I . 15 126-133

भगवान् सूर्य, पृ० १–१२, गीता प्रेस, गोरखपुर

कार्तिक मास मे सूर्य के रथ पर पर्जन्य आदित्य, भारद्वाज ऋषि, वर्चा गन्धर्व, ऐरावत नाग, सेनजित् यक्ष तथा विश्र्व राक्षस यात्रा करते है।

मार्गशीर्ष मास मे अशुमान् सूर्य (आदित्य) कश्यप ऋषि, उर्वशी अप्सरा, ऋतसेन गन्धर्व, महाशख नाग, ताक्ष्र्य यक्ष तथा विद्युच्छत्रु राक्षस के साथ अपने रथ पर सचरण करते है।

पौष मास मे भग नामक आदित्य (सूर्य) अरिष्टनेमि ऋषि, पूर्वचिन्ति अप्सरा, ऊर्ण गन्धर्व, कर्कोटक सर्प, आयु यक्ष तथा स्फूर्ज राक्षस के साथ अपने रथ पर सचरण करते है।

माघ मास मे त्वष्टा नामक सूर्य (आदित्य) ब्रह्मरात ऋषि, तिलोत्तमा अप्सरा, घृतराप्ट्र गन्धर्व, कम्बल नाग, शतजित् यक्ष तथा ऋचीक राक्षस के साथ अपने रथ पर चलते है।

फाल्गुन मास मे विष्णु (आदित्य) सूर्य के साथ उनके रथ पर विश्वामित्र ऋषि, रम्भा अप्सरा, सूर्यवर्चा गन्धर्व, सत्यजित यक्ष, अश्वतर नाग तथा महाप्रेत राक्षस रहते हे।

परवर्ती पुराणो मे स्कन्द पुराण[1], कूर्मपुराण[2], भविष्य पुराण[3], ब्रह्मपुराण[4] साम्बपुराण[5] और गरूड पुराण[6] बारह आदित्यो का उल्लेख करते हैं। स्कन्दपुराण मे कुछ भिन्न सूची मिलती है।[7] यह द्वादशादित्य से भिन्न बारह आदित्यो का नामोल्लेख करता है।[8] जो इस

---

1 स्कन्द पुराण VI 145 40

2 कूर्मपुराण, ४२–१८ २२

3 भविष्य पुराण, जर्नल आफ एन्शियन्ट इडियन हिस्ट्री जिल्द IV 1970-71 पृ० २३२–२३५

4 ब्रह्मपुराण, ३० २६–४४

5 श्रीवास्तव, वी०सी०, (अनुवाद) साम्बपुराण पृ० १२–१३

6 गरूड पुराण XVII, 7-8

7 स्कन्द पुराण, VI 145 40

8 अवस्थी, ए०बी०एल०, दी स्टडीज इन स्कन्द पुराण, पृ० २०३

प्रकार आदित्य, सविता, मिहिर, अर्क, प्रतपन, मार्तण्ड, भास्कर, भानु, चित्रभानु, दिवाकर, रवि सूर्य है। आदित्य के इन सामान्य नामो के अतिरिक्त बारह नामो[1] की एक अलग सूची है जो इस प्रकार विष्णु, धाता, भग, पूषन, मित्र, अश, वरूण, अर्यमन, इन्द्र, विवस्वान, त्वष्ट, पर्जन्य है। ये परवर्ती आदित्य ही क्रमश वर्ष के बारह महीनो से सम्बन्धित[2] कहे गये है, जो इस प्रकार है–

विष्णु चैत्र मे निकलते है।

विवस्वान् ज्येष्ठ मे निकलते हैं।

अर्यमन् वैशाख मे निकलते हैं।

अशुमन् असाढ मे निकलते हैं।

पर्जन्य श्रावन मे निकलते हैं।

वरूण भाद्रपद मे निकलते हैं।

इन्द्र आश्विन मे निकलते है।

धाता कार्तिक मे निकलते हैं।

मित्र मार्गशीर्ष मे निकलते हैं।

पूषन पौष मे निकलते हैं।

भग माघ मे निकलते हैं।

त्वष्ट फाल्गुन मे निकलते हैं।[3]

ये क्रमश बारह महीनो मे चमकते हैं।[4] विष्णु बारह सौ किरणो से युक्त हैं। अर्यमान १३०० किरणो वाले हैं, विवस्वत १४०० किरणो से युक्त हैं और अशुमत १५००

---

1 स्कन्द पुराण, VII 1 101 60-61

2 वही०, VII 1 101 62-63

3 वही०, VII 1 101 64-65

4 दास, डी० आर०, जर्नल आफ एन्शियन्ट इडियन हिस्ट्री, जिल्द IV पार्ट I-II, १९७०, पृ० २३०

किरणो से युक्त हैं। पर्जन्य और वरूण क्रमश विवस्वत और अर्यमन की तरह चमकते हैं। इन्द्र १२०० किरणो से युक्त हैं और धातृ, मित्र, भग तथा त्वष्ट ११०० किरणो से युक्त हे।[1] ब्रह्मपुराण[2] भी प्रत्येक आदित्य को इतने ही किरणो वाला बताता है लेकिन कहता है कि मित्र की तरह भग और त्वष्ट ११०० किरणो से युक्त हैं। यह पूषन को ६०० किरणो से युक्त बताता है। कूर्म पुराण मे[3] बारह आदित्यो का विस्तृत उल्लेख है। उसमे बारह आदित्यो का नामोल्लेख इस प्रकार है–

१ धाता, २ अर्यमा, ३ मित्र, ४ वरूण, ५ पूषन, ६ पर्जन्य, ७ शक्र, ८ विवस्वान, ९ अश, १० भग, ११ त्वष्ट १२ विष्णु। कूर्मपुराण मे[4] वरूण को ५००० किरणो, पूषन को ६००० किरणो, अश–७००० किरणो, धाता को–८००० किरणो, शक्र को–६०००, किरणो, विवस्वत को १०००० किरणो, भग को ११०० किरणो, मित्र–७००० किरणो, त्वष्ट–८००० किरणो अर्यमन्–१००० किरणो, पर्जन्य–६००० किरणो और विष्णु ६००० किरणो से युक्त कहा गया है। धाता सूर्य आठ हजार किरणो के साथ तपते हैं तथा उनका रक्तवर्ण है। अर्यमा सूर्य दस हजार किरणो के साथ तपते है तथा उनका पीतवर्ण है। मित्र आदित्य सात हजार किरणो से तपते है तथा उनका अरूण वर्ण है। अरूण (वरूण) आदित्य पॉच हजार किरणो से तपते हैं तथा उनका वर्ण श्याम है। इन्द्र आदित्य सात हजार रश्मियो से तपते हैं तथा उनका वर्ण श्वेत है। विवस्वान सूर्य दस हजार रश्मियो से तपते है, उनका वर्ण वभ्रु है। पूषा आदित्य छ हजार रश्मियो से तपते हैं तथा उनका अलक्तक वर्ण है। पर्जन्य आदित्य नौ हजार रश्मियो से तपते हैं तथा उनका वर्ण अरूण है। अशुमान आदित्य

---

1 दास, डी०आर०, जर्नल आफ एन्शियन्ट इडियन हिस्ट्री, जिल्द IV पार्ट I-II १९७० पृ० २३०

2 ब्रह्मपुराण, ३१,२२–२४

3 ४२ १८ २२

4 ४२ २३–२५

नौ हजार किरणो से तपते है और उनका वर्ण हरा हैं। भग आदित्य ग्यारह हजार रश्मियो से तपते हैं और उनका वर्ण रक्त है। त्वष्ट आठ हजार रश्मियो से तपते है, उनका चित्रवर्ण है। विष्णु आदित्य छ हजार किरणो से तपते है, उनका वर्ण अरूण हे।[1]

कूर्मपुराण मे[2] कहा गया है कि धाता वैशाख मे, इन्द्र ज्येष्ठ मे, रवि आषाढ मे, विवस्वत श्रावण मे, भग भाद्र, पर्जन्य अश्विन त्वष्ट कार्तिक, मित्र मार्गशीर्स, विष्णु पौष, वरूण माघ, पूषन फाल्गुन, अश चैत्र मे निकलते हैं।

भविष्य पुराण मे[3] बारह आदित्यो का नामोल्लेख इस प्रकार इन्द्र, पर्जन्य, धाता, पूष, त्वष्ट, अर्यमन्, भग, विवस्वान, अश, विष्णु, वरूण, मित्र है।

साम्ब पुराण मे[4] बारह आदित्यो का उल्लेख इस प्रकार इन्द्र धाता, पर्जन्य पूषा, त्वष्ट, अर्यमान, विवस्वान, विष्णु, अशुमान, मित्र, वरूण है। साम्ब पुराण के अनुसार सूर्य स्वत बारह रूपो मे विभक्त हो गये, जो अदिति के गर्भ से पुन पैदा हुए थे।[5] सपूर्ण सृष्टि बारह आदित्यो से घिरा है।[6]

साम्ब पुराण के अनुसार आदित्य का पहला रूप इन्द्र का है जो देवराज कहे गये हैं। दूसरा रूप धाता का है जो प्रजापति कहे जाते हैं और विभिन्न प्राणियो की उत्पत्ति के लिए उत्तरदायी हैं तीसरा रूप पर्जन्य का है जिनकी किरणे वर्षा के लिए उत्तरदायी है।[7]

---

1 भगवान सूर्य, पृ० १–१२, गीता प्रेस गोरखपुर

2 ४२ १८–२२

3 अध्याय, ७४,७८

4 श्रीवास्तव, वी०सी०, (अनुवाद) साम्बपुराण, अध्याय, ४, इलाहाबाद, १६७५, पृ० ११–१३

5 साम्ब पुराण, अध्याय, ४–५

6 वही०, अध्याय ४–७

7 साम्ब पुराण, अध्याय, ४–१०

चौथा रूप पूषा का है। यह अन्नो से परिपूर्ण है और प्राणियो की बृद्धि के लिए उत्तरदायी है।[1] पॉचवा रूप त्वष्ट का है जो वनस्पति मे निहित है और जडी–बूटी के गुणो से परिपूर्ण है।[2] छठवॉ रूप अर्यमान का है जो प्राणियो के शरीर मे विद्यमान है। सातवॉ रूप भग का है जो पृथ्वी और प्राणियो के शरीर मे निहित है।[3] आठवॉ रूप विवस्वान का है जो अग्नि मे निहित है और भोजन के पाचन मे सहायक है।[4] नौवा रूप विष्णु का है जो राक्षसो का विनाश करते है।[5] दसवॉ रूप अशुमान का है जो हवा मे निहित है और लोगो को जीवित रखते हैं।[6] ग्यारहवॉ रूप वरूण का है जो जल मे निहित है और प्राणियो की रक्षा करते है।[7] बारहवॉ रूप मित्र का है जो आम जनता के कल्याण के लिए चन्द्र भागा नदी के तट पर अवस्थित है।[8]

ब्रह्मपुराण मे[9] आदित्य के बारह रूपो का उल्लेख है। कहा गया है कि देवताओ के शत्रुओ का वध करने के पश्चात् सूर्य सर्वत्र इन्द्र के रूप मे प्रतिष्ठित हैं ओर अपने राज्य मे शासन करते हैं। धता, प्रजापति के रूप मे उत्पत्ति करते हैं। पर्जन्य बादल, वृष्टि और वर्षा का रूप धारण करते है। त्वष्ट, ग्रहो मे विद्यमान है। पूषन, वायु रूप मे दैवीय

---

1 साम्ब पुराण, अध्याय ४–११

2 वही०, अध्याय ४–१२

3 वही०, अध्याय ४–१४

4 वही०, अध्याय ४–१५

5 वही०, अध्याय ४–१६

6 वही०, अध्याय, ४–१७ विस्तृत अध्ययन हेतु देखे, चन्द्र देव पाण्डेय, साम्बपुराण एक सास्कृतिक अध्ययन इलाहाबाद १६८६

7 अध्याय ४–१६

8 वही०, अध्याय, ४–२०

9 ब्रह्म पुराण, ३०,२६–४४

प्राणियो मे विद्यमान है भग, अग्नि को छोडकर, पृथ्वी के सासारिक प्राणियो मे निहित है और जीवित प्रााणियो द्वारा ग्रहण किये गये भोजन को पचाते हैं। विष्णु, देवताओ के शत्रुओ के सहारक हैं। अश, हवा मे निहित है। वरूण, जल मे निवास करते है ओर उसी रूप मे प्राणियो की सुरक्षा करते है। मित्र, मानव कल्याण हेतु चन्द्रसरित के तट पर स्थित हें। वह तप करते हैं और अपने भक्तो को तुष्ट करते है, वह सभी के मित्र हैं। सवितृ देव इन बारह रूपो से सपूर्ण विश्व की रक्षा करते है इसी कारण भक्त गण उनकी पूजा करते हें। वह व्यक्ति जो सच्ची भक्ति से बारह आदित्यो के नामो को सुनता और पढता हे वह अन्त मे सूर्य लोक की प्राप्त करता हैं। यह परम्परा साम्बपुराण से ग्रहीत हैं।

गरूड पुराण मे[1] आदित्यो की सूची इस प्रकार–भग, सूर्य, अर्यमा, मित्र, वरूण, सवितृ, धाता, विवस्वान, त्वष्ट, पूषन, चन्द्र, विष्णु मिलती है।

पूर्ववर्तीकाल मे, आदित्य हृदय स्तोत्र मे आदित्यो का तादात्म्य दिक्पाल (६६–६०२) से स्थापित किया गया है। परवर्ती पौराणिक परम्परा मे बारह आदित्यो का तादात्म्य सूर्य के अतिरिक्त वर्ष के बारह महीनो से स्थापित किया गया है। परवर्ती पुराणो मे उनकी कई सूचियॉ हैं जिनका तुलनात्मक अध्ययन निम्नलिखित है —

---

1 पूर्व खण्डा, १७,७–८

बारह आदित्यो की परवर्ती पौराणिक सूची

भविष्य   साम्ब   स्कन्द पुराण   कूर्म   ब्रह्म   गरूड

दो सूची

(अ)   (ब)

इन्द्र	इन्द्र	विष्णु	आदित्य	वरूण	सूर्य	भग
धाता	धाता	धाता	सूर्य	पूसन	इन्द्र	सूर्य
पर्जन्य	पर्जन्य	भग	मिहिर	अश	धाता	अर्यमान
पूषा	पूषा	पूषा	अर्क	घातृ	पर्जन्य	मित्र
त्वष्ट	त्वष्ट	मित्र	प्रतपन	शक्र	त्वष्ट	वरूण
अर्यमन	अर्यमन	अशु	मार्तण्ड	विवश्वान	पूषन	सवितृ
भग	भग	वरूण	भास्कर	भग	भग	घातृ
विवश्वान	विवश्वान	अर्यमा	भानु	मित्र	विवश्वान	विवश्वान
अश	विष्णु	पर्जन्य	चित्र भानु	त्वष्ट	विष्णु	त्वष्ट
विष्णु	अश	इन्द्र	दिवाकर	अर्यमा	वरूण	पूषन
वरूण	वरूण	विवश्वान	रवि	पर्जन्य	मित्र	चन्द्र
मित्र	मित्र	त्वष्ट	सविता	विष्णु	सवित	विष्णु

परवर्ती पौराणिक सूची की बारह आदित्यो के तुलनात्मक अध्ययन से इस प्रकार निष्कर्ष निकाला जा सकता है–(१) धाता, मित्र, विष्णु, त्वप्ट, अर्यमन्, पूषा, भग, विवश्वान तथा वरूण का उल्लेख भविष्य, साम्ब, स्कन्द(अ) कूर्म, ब्रह्म तथा गरूड पुराण मे मिलता है। (२) चन्द्र का नामोल्लेख मात्र गरूडपुराण मे हुआ। (३) सूर्य का उल्लेख स्कन्द (ब) तथा गरूड पुराण मे हुआ है। (४) सविता का उल्लेख स्कन्द (ब), ब्रह्म तथा गरूड पुराण मे हुआ है। (५) इन्द्र का नामोल्लेख भविष्य, साम्ब, स्कन्दपुराण (अ) तथा ब्रह्म पुराण मे मिलता है। (६) अश [illegible] उल्लेख भविष्य, साम्ब, स्कन्दपुराण (अ) तथा ब्रह्म पुराण में मिलता है। (७) सविता और सूर्य के अतिरिक्त, स्कन्द पुराण की (ब) सूची में विशिष्ट

आदित्यो का नामोल्लेख है। जिनका उल्लेख अन्य पुराणो मे नही मिलता।

भारत के प्राचीनतम प्रतिमाशास्त्रीय ग्रन्थ बृहत्सहिता[1] (पॉचवी–छठवी शती ई०) मे बारह आदित्यो का उल्लेख नही मिलता। गोपीनाथ राव[2] विश्वकर्माशास्त्र के आधार पर आदित्यो की एक सूची देते हैं जिसमे उन्हे चार भुजाओ वाला[3] कहा गया है जबकि

---

1 सकलानी ने पैनुली, गीता द्वादशादित्य इन लिटरेचर रिलीजन एण्ड आर्ट, १६६१ पृ० १०१

2 एलीमेन्टस आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, जिल्द I पृ० ३१०

3

आदित्यो के नाम	पीछे का दाया हाथ	पीछे का बाया हाथ	सामने का बाया हाथ	दाया हाथ
घातृ	कमल का माला	कमडल	कमल	कमल
मित्र	सोम	शूल	कमल	कमल
अर्यमन्	चक्र	कोमोदकी	कमल	कमल
रूद्र	अक्षमाला	चक्र	कमल	कमल
वरूण	चक्र	पाश	कमल	कमल
सूर्य	कमडल	अक्षमाला	कमल	कमल
भग	शूल	माला	कमल	कमल
विवश्वान	शूल	माला	कमल	कमल
पूषन	कमल	कमल	कमल	कमल
सवितृ	गदा	चक्र	कमल	कमल
त्वष्ट	स्त्रूक	होमज	कमल	कमल
विष्णु	चक्र	कलिका	कमल	कमल

उनके द्वारा उद्‌धृत ग्रन्थ मे विष्णु और पूषन जैसे आदित्यो को दो भुजाओ वाला कहा गया है। अशूमद भेदागम[1] और सुप्रभेदागम मे प्रत्येक आदित्य के दो हाथो का उल्लेख है और उनके हाथ मे कमल हैं इन दोनो ग्रन्थो मे, विश्वकर्मा शास्त्र मे उल्लिखित आदित्यो के नाम से भिन्न नाम उल्लिखित हैं। विष्णु धर्मोत्तर पुराण मे[2] बारह आदित्यो का सूर्य के रूप मे उल्लेख है।

कुलकुण्डी सूर्य मूर्ति[3] और जूनागढ सूर्य तोरण मे[4] द्वादशादित्य का अकन है। आदित्यो से चित्रित दूसरा तोरण धनक[5] से प्राप्त हुआ है। हुगुली जिले मे[6] त्रिबेनी नामक स्थान से द्वादशादित्य का अकन मिला है।

भारतकला भवन, वाराणसी, कन्नौज, मथुरा, मोरियम और देवगढ के सग्रहालयो मे बारह आदित्यो का अकन विष्णु विश्वारूप मे मिलता है।[7]

---

1 द्विभुजा पदमहस्ताश्च रक्तपदमासने स्थिता।

रक्तमडल सयुक्ता करण्डमुकुटान्विता।। (द्वारा उद्‌धृत) राव,टी०ए०जी०, एलीमेन्टस आफ हिन्दू आइकोनाग्राफी, पृ० ३१०

2 विष्णु धर्मोत्तर पुराण III,67 16 असहयतेजो धारित्वाद गूढगात्रस्थैव च। एव सर्वमय धाम सूर्य एव प्रकीर्तित।।

देखे–बनर्जी, जे०एन०, डिव्लपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी पृ० ४४१

3 कुलकुण्डी सन गाड इमेज, इपिग्राफिआ इण्डिका, जिल्द २७ १९४७–४८ पृ० २५

4 बनर्जी, जे०एन०, डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, पृ० ४४१

साकलिया, एच०डी०, आर्कियोलाजी आफ गुजरात,पृ० १५८

5 साकलिया,एच०डी०, आर्कियोलाजी आफ गुजरात, पृ० १५६ चित्र ७०

6 आर्कियोलाजी सर्वे आफ इडिया एनुअल रिपोर्टस, १९३०–३४, पृ० ३७

7 सकलानी ने पैनुली, गीता, द्वादशादित्य इन लिटरेचर रिलीजन एण्ड आर्ट, १९९१ पृ० १०७

धार्मिक अनुष्ठानो मे बारह आदित्यो का सदर्भ मिलता है। कई हिन्दू सस्कारो मे विशेष रूप से[1] आदित्यो की उपासना का विधान है। अथर्ववेद मे सुरक्षित प्रसव के लिए[2] विशेष रूप से पूषन और अर्यमान दो आदित्यो की पूजा की गयी है। विष्णु गर्भाधान सस्कार के[3] मुख्य देवता है। विवाहोत्सव मे[४] विभिन्न अवसरो पर सूर्य की पूजा का विधान है।[4] अर्यमन अविवाहित लडकियो के सरक्षक माने गये हैं इसलिए उनसे दुल्हन को अपने सरक्षकत्व से छोडने और दुल्हे को देने की प्रार्थना की गई है।[5] दुल्हन को कुशलपूर्वक ले जाने के लिए पूषन की स्तुति की गयी है।[6] दम्पत्ति की सुरक्षा[7] के लिए मित्र–विष्णु और सूर्य के साथ अन्य देवताओ की स्तुति की गयी है। विवाहोपरान्त दुल्हा तीन दिन तक सुबह प्रजापति को आहुति देता है। कुछ लोग मानते है कि वह वस्तुत सूर्य को आहुति देता है।[8] चौथी रात मे उषा काल मे पति अपने पापशोधन हेतु[9] सूर्य की

---

1 पाण्डेय, आर०बी०, "हिन्दू सस्कार," पृ० ११६

2 अथर्ववेद I 11

3 पाण्डेय, राजबली, "हिन्दू सस्कार", पृ० ८१

4 श्रीवास्वत, वी०सी०, सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, पृ० १६०

5 वही०, आश्वलायन गृहयसूत्र, 1 4 8,1 7 13, गोभिल गृहयसूत्र, ११२७, वही०, पारस्कर गृहयसूत्र, १६३, हिरण्यकेशिन गृहय सूत्र, १६२०

6 वही०, आश्वलायनन गृहयसूत्र, १७१६, साख्यायन गृहयसूत्र, १११४, गोभिल गृहयसूत्र, II,27, पारस्कर गृहयसूत्र, १४१६, मानव गृहय सूत्र, १६२०२

7 पारस्कर गृहयसूत्र, १४१६, गोभिल गृहयसूत्र १११४, हिरण्यकेशिन गृहय सूत्र १६२१ देखे– पारस्कर गृहयसूत्र १८२, हिरण्यकेशिन गृहयसूत्र १६२०६

8 हिरण्यकेशिन गृहयसूत्र, १७, २३,६

9 हिरण्यकेशिन गृहयसूत्र, १७२४, साख्यायन गृहयसूत्र ११८२ पारस्कर गृहयसूत्र ११११२ गोभिल गृहयसूत्र ११२७

स्तुति करता और आहुति देता है। दीक्षा समारोह मे सूर्योपासना का बहुत महत्व है। इस समारोह मे सवितृ की उपासना अनिवार्य सघटक हैं। जब अध्यापक विद्यार्थी का उत्तदायित्व ग्रहण करता है तो सवितृ, पूषन जैसे सौर देवताओ की स्तुति की जाती है।[1] कुछ अध्यापको ने यह निर्धारित किया है कि विद्यार्थी सूर्य का दर्शन करे ओर उनके पवित्र मत्र का उच्चारण करे।[2] जब विद्यार्थी का उत्तरदायित्व सूर्य को सौप दिया जाता हे तो सूर्योपासना की जाती है।[3] वैदिक अध्ययन के पुनर्राम्भ और अध्ययन की समाप्ति पर सूर्योपासना का विधान है।[4]

सभी सस्कारो मे सूर्योपासना का विधान है।[5] केशान्त और चूडाकर्म सस्कार मे सवितृ की स्तुति की जाती है।[6] बच्चे के जन्म के एक माह पश्चात् माता–पिता भग, अर्यमान, सवितृ, मित्र जैसे कई सौर देवताओ को चढावा चढाते है।[7]

कई सौर व्रतो मे आदित्य का उल्लेख मिलता है।[8] बगाल मे इतू पूजा या मित्र पूजा इस देवत्व से सम्बन्धित है। महाकाव्यो और पुराणो मे विमारियो विशेषत क्षयरोग और कोढ से मुक्ति हेतु आदित्यो की पूजा का उल्लेख है।

---

1 साख्यायन गृहयसूत्र, ११२१२, आश्वलायन गृहयसूत्र, १२०४,

गोभिल गृहयसूत्र, १११०२६ भग, अर्यमान, मित्र आदि की भी उपासना की गयी है।

गोभिल गृहयसूत्र ११३११

2 पारस्कर गृहयसूत्र, ११२१५

3 हिरण्यकेशिन गृहयसूत्र, ११६१३

4 साख्यायन गृहयसूत्र, ११७८६

5 पाण्डेय, राजबली पाण्डेय, हिन्दू सस्कार

6 हिरण्यकेशिन गृहय सूत्र, १११६ पारस्कर गृहय सूत्र, ११.१.६

7 मत्स्यपुराण गृहयसूत्र, अध्याय ४८

8 चट्टोपाध्याय, के० "स्टडीज इन दी इण्डोरिलीजन एण्ड लिटरेचर", पृ० १८५

द्वादशादित्य की परम्परा मथुरा, काशी और प्रभास क्षेत्र आदि तीर्थो मे प्रचलित थी। काशी मे द्वादशादित्य परम्परा का विस्तृत और सुदृढ प्रमाण मिलता हे।

बृन्दावन मे द्वादशादित्यघाट द्वादशादित्यो से सम्बन्धित है। यहॉ के टीले से प्राप्त पुरातात्विक प्रमाण सकेत करते हैं कि गुप्तकाल मे सूर्य को समर्पित एक मन्दिर यहॉ था। वराह पुराण[1] मे कहा गया है कि वहा यमुना के कालीदह के पास सूर्य तीर्थ था, जब कृष्ण ने कालिय दमन करने के बाद वहा पर आदित्य मूर्तियो की स्थाना की।

वराहपुराण (१४१ २४) मे बदरी (बदरीकाश्रम) मे एक द्वादशादित्य कुण्ड का उल्लेख है। नारद पुराण (II 67 60) भी द्वादशादित्य का उल्लेख बदरी तीर्थ मे करता है।

काशी में द्वादशादित्य परम्परा–

स्कन्दपुराण का काशीखण्ड[2] वाराणसी और उसके आस–पास सूर्योपासना की एक झलक प्रस्तुत करता है। काशीखण्ड मे प्रमाणित द्वादशादित्यो[3] की पृष्ठ भूमि मे एक विशेष कथानक जुड़ा है। शिव ने काशी के राजा दिवोदास को धर्म विरूद्ध करने के लिए सूर्य को काशी भेजा[4] परन्तु अत्यधिक प्रयत्न के पश्चात् भी सूर्य इस कार्य मे सफल न हो सके यह सोचकर कि असफल होकर शिव के सम्मुख जाने पर मैं उनका कोप भाजन बनूँगा सूर्य यही काशी मे आश्रम बनाकर रह गये जहॉ प्रवेश करते ही समस्त पाप नष्ट हो जाते है।[5] यह सोचकर सूर्य देव अपनी बारह मूर्तियॉ बनाकर काशी मे ही टिक गये।[6] उनके बारह रूप इस प्रकार लोलार्क, उत्तरादित्य, साम्बादित्य द्रुपददित्य मयूखादित्य, खखोलादित्य,

---

1 वराह पुराण १६६ १३

2 स्कन्दपुराण, काशीखण्ड, अध्याय, ४४ पृ० ५८१

3 नारायण, जगदीश, काशी रहस्यम वाराणसी, १६८४ पृ० ३६–५८

4 काशी खण्ड ४६,२–४

5 काशीखण्ड ४६ १०,२५,२६–३१

6 काशीखण्ड ४६ ४४

अरूणादित्य, बिमलादित्य, बृद्धादित्य, केशवादित्य, गगादित्य और यमादित्य थे।[1] काशीखण्ड मे चौदह आदित्यपीठो का[2] विस्तृत वर्णन है जिनके अलग–अलग माहात्म्य हे। इन बारह आदित्य पीठो के अतिरिक्त ज्येष्ठ स्थान मे सुमन्तु मुनि द्वारा स्थापित सुमन्त्वादित्य और राज मन्दिर मे कर्णादित्य की मूर्तियॉ है।[3]

काशी मे बारह आदित्यो की उपासना की मुख्य विशेषता यह है कि उन्हे पुराणो मे उल्लिखित आदित्यो से भिन्न नाम दिया गया है। ये देवता आज भी वाराणसी मे विद्यमान हैं। उनकी उपासना रोगो विशेषत कोढ से मुक्ति हेतु की जाती है।

लोलार्क –

वाराणसी के सभी आदित्यपीठो मे मूर्द्धन्य स्थान लोलार्क[4] को दिया गया है। इतना ही नही, यहॉ के सभी तीर्थो मे इनका प्रमुख स्थान माना गया है, क्योकि असिसगम होने से लोलार्ककुण्ड का जल गगाजी मे मिल जाने के बाद ही अन्य तीर्थो मे पहुॅचता है। पुराने

---

1 स्कन्दपुराण, काशीखण्ड, अध्याय ४६ पृ० ५८१–६२८ (नवल किशोर प्रकाशन, लखनऊ सस्करण)

2 इति काशी प्रभावज्ञो जगच्च्क्षुस्तमोनुद ।

कृत्वा द्वादशधात्मान काशिपुर्यॉ व्यवस्थित ।।

लोलार्क उत्तरार्कश्च साम्बादित्यस्तथैव च।

चतुर्थो द्रुपदादित्यो मयूखादित्य एव च।।

खखोल्कश्चारूणादित्यो वृद्धकेशवसज्ञ कौ।

दशमो विमलादित्यौ गग्डदित्यस्तथैव च।।

द्वादशश्च यमादित्य· काशिपुर्यॉ घटोद्भव।

तमोऽधिकेभ्यो दुष्टेभ्य क्षेत्र रक्षन्त्यमी सदा।। (काशीखण्ड, ६४/४४–४७)

3 सुमन्तुमुनिना श्रेष्ठस्तत्रादित्य प्रतिष्ठित। (काशीखण्ड ६५/६)

4 काशीखण्ड, ४६/५६

समय मे लोलार्क कुण्ड तथा गगा का सगम[1] होता था। शतपथ ब्राह्मण[2] मे इसका उल्लेख मिलता है। ११५१ ई० के गहडवाल अभिलेख से ज्ञात होता है कि रानी गोशल देवी ने यहॉ अनुष्ठान किया और धनदान दिया था। लोलार्क, सूर्य की उर्वरा शक्ति को व्यक्त करता है, जिसका नाटकीय प्रमाण लोलार्क षष्ठी है।[3]

मार्गशीर्ष शुक्ल–षष्ठी अथवा सप्तमी को यदि रविवार हो, तो उस दिन लोलार्क के दर्शन का विशेष माहात्म्य है। भाद्रपद शुक्ला षष्ठी को यहॉ की वार्षिक यात्रा शिष्टाचार के आधार पर होती है। सभी सासारिक कष्टो से मुक्ति पाने के लिए लोलार्क की उपासना करते हैं और उनसे सभी प्रकार की समृद्धि मॉगते हैं। चर्मरोगो से निवृत्ति के लिए लोलार्ककुण्ड के जल से स्नान तथा लोलार्क की आराधना का विधान है। वेसे तो सभी प्रकार के रोगो के लिए आदित्य की अर्चना फलवती होती है 'अरोग्य भास्करादिच्छेत्। रविवार को सूर्यषष्ठि का दर्शन महाफल देने वाला कहा गया है।[4]

उत्तरार्क–

वाराणसी नगर की उत्तरी सीमा के निकट एक तीर्थ है, जिसका नाम बकरियाकुण्ड है। इसके पुराने नाम उत्तरार्ककुण्ड तथा बर्करीकुण्ड है,[5] यही पर उत्तरार्क का मन्दिर था, जो मुसलमानो के आधिपत्य के प्रारभ मे नष्ट हो गया और पुन उसका निर्माण नहीं हो पाया। फिर भी वर्तमान मे मुख्य प्रतिमा सुरक्षित है, आधार से प्रतिमा की लम्बाई १६२ मीटर है जो यूप या लिग की भॉति तीन भागो मे विभक्त है। अब यह योनि के रूप मे परिष्कृत है। ऊपर चतुर्दिक १६ जोडी कमल कलिका की श्रखला है और इसकी चोटी पर

1 वाराणसी वैभव, पृ० १११

2 ६१२८

3 नेशनल ज्योग्राफिकल जर्नल ऑफ इण्डिया, ४१(१), १९६५ , पृ० ८१

4 काशीखण्ड, ४६/५६, प्रत्यर्कवार लोलार्क य पश्यति शुचिव्रत ।

न तस्य दु ख लोकेस्मिन्कदाचित्सम्भविष्यति।।

5 काशीखण्ड, ४७/१–२

२४ पखुडियो की लडी है।[1] शेरिंग्स (Sherring's) (1968 281) का मानना हे कि यह एक बौद्ध स्तभ का भाग है, किन्तु यह मत मान्य नही प्रतीत होता है।

काशीखण्ड मे, पौष मास के रविवारो को[2] यहॉ की यात्रा का विधान हे, परन्तु यह क्रम अब समाप्त हो गया है। अब ज्येष्ठ के रविवारो को यहॉ पर गाजी मियॉ का मेला लगता है।

साम्बादित्य–

काशीखण्ड मे कहा गया है कि इनकी स्थापना श्रीकृष्ण के पुत्र साम्ब ने की थी। इन्ही की आराधना से साम्ब की कुष्ठरोग से मुक्ति हुई थी। इनके ही समीप साम्बादित्य कुण्ड है, जो आजकल सूर्यकुण्ड के नाम से प्रसिद्ध है। लिगपुराण और कृत्यकल्पतरू[3] मे इस स्थान और इसका माहात्म्य वर्णित है। शेरिंग्स का मानना है कि इस स्थान पर सूर्य को समार्पित बारह कुएँ थे लेकिन अब वे सब लुप्त हो गये है। साम्बादित्य मन्दिर मे एक बडे समतल पाषाण पर बारह कमल पखुडियो की चार परत या तह मूर्ति के मुॅख के चतुर्दिक उकेरी गयी है। बारह कमल पखुडियॉ वर्ष के बारह महीनो का सूचक हैं। इसका निर्माण १५८० ई० के लगभग राजस्थान के राजा सूर्जन हाडा ने करवाया था। चर्मरोग–नाश के लिए इनकी आराधना का विशेष महत्व है।[4] चैत्रमास के रविवारो को इनकी वार्षिक यात्रा होती है ओर यदि माघ शुक्ला सप्तमी रविवार को पडे, तो वह उनके दर्शन के लिए बडी पुनीत मानी गयी है।[5]

---

1 नेशनल ज्योग्राफिकल जर्नल ऑफ इण्डिया, ४१(१) १९९५,पृ० ८५

2 काशीखण्ड, ४७/५७ उत्तरार्कस्य देवस्य पुष्ये मासि रवेर्दिने।

कार्या सवत्सरी यात्रा न तै काशीफलेप्सुभि ।।

3 कृत्यकल्पतरू, पृ० ४४,४८

4 काशीखण्ड, ४८/४८–५१

5 काशीखण्ड, ४८/५३ मघौ मासि रवेर्वारे यात्रा सावत्सरी भवेत्।

द्रुपदादित्य–

इनकी स्थापना द्रौपदी ने की थी और इनकी आराधना से उनको अक्षयस्थाली मिली थी, जिसके द्वारा बनवास मे पाण्डवो की क्षुधाकष्ट से रक्षा हुई थी। इनकी आराधना करने वाले को क्षुधा का कष्ट नही होता और इनके समीप स्थित द्रौपदी की मूर्ति का दर्शन करने से प्रियजनो का वियोग नही होता।[1] यह मूर्ति एक पाषाण फलक पर उत्कीर्ण है। इसके ऊपरी भाग पर बारह फैले हुए पाषाण चिन्ह अकित हैं जिसकी अनेक दक्षिण भारतीय तीर्थयात्री देवी के रूप मे स्तुति करते है।

आजकल विश्वनाथ–मन्दिर के पश्चिम मकान न० सी०के० ३५/२० मे अक्षयवट के घेरे मे द्रुपदादित्य की मूर्ति है। उसी केसमीप नटराज की एक प्राचीन मूर्ति है, जो द्रौपदी के नाम से पूजी जाती है।

मयूखादित्य –

सूर्यनारायण ने पचनद के समीप गभस्तरीश्वर शिव तथा मग्डलागौरी की स्थापना करके उनके समक्ष तप किया और वरदान पाया। उसी स्थान पर मयूखादित्य की आराधना होती है।[2] मगला गौरी मन्दिर मे मयूख की मूर्ति अवस्थित है, एक स्तम्भ मे एक छोटा बिम्ब है जिसमे बद किरणो से आवृत्त सूर्य की मुखाकृति है।[3] इनकी अर्चना से रोग और दरिद्रता से रक्षा होती है।[4]

---

1 वही०, ४८/१५, २०–२१

2 वाराणसी–वैभव, पृ० ११३

3 नेशनल ज्योग्राफिकल जर्नल आफ इडिया, जिल्द ४१(१) मार्च १९९५, पृ० ८५

4 त्वदर्चनान्नृणा कश्चिन्न व्याधि प्रभविष्यति।

भविष्यति न दारिद्रय रविवारे त्वदीक्षणात्।। काशीखण्ड, ५०/६४

द्रुपदादित्य–

इनकी स्थापना द्रौपदी ने की थी और इनकी आराधना से उनको अक्षयस्थाली मिली थी, जिसके द्वारा बनवास मे पाण्डवो की क्षुधाकष्ट से रक्षा हुई थी। इनकी आराधना करने वाले को क्षुधा का कष्ट नही होता और इनके समीप स्थित द्रौपदी की मूर्ति का दर्शन करने से प्रियजनो का वियोग नही होता।[1] यह मूर्ति एक पाषाण फलक पर उत्कीर्ण है। इसके ऊपरी भाग पर बारह फैले हुए पाषाण चिन्ह अकित हैं जिसकी अनेक दक्षिण भारतीय तीर्थयात्री देवी के रूप मे स्तुति करते है।

आजकल विश्वनाथ–मन्दिर के पश्चिम मकान न० सी०के० ३५/२० मे अक्षयवट के घेरे मे द्रुपदादित्य की मूर्ति है। उसी केसमीप नटराज की एक प्राचीन मूर्ति है, जो द्रौपदी के नाम से पूजी जाती है।

मयूखादित्य –

सूर्यनारायण ने पचनद के समीप गभस्तरीश्वर शिव तथा मग्डलागौरी की स्थापना करके उनके समक्ष तप किया और वरदान पाया। उसी स्थान पर मयूखादित्य की आराधना होती है।[2] मगला गौरी मन्दिर मे मयूख की मूर्ति अवस्थित है, एक स्तम्भ मे एक छोटा बिम्ब है जिसमे बद किरणो से आवृत्त सूर्य की मुखाकृति है।[3] इनकी अर्चना से रोग और दरिद्रता से रक्षा होती है।[4]

---

1 वही०, ४८/१५, २०–२१

2 वाराणसी–वैभव, पृ० ११३

3 नेशनल ज्योग्राफिकल जर्नल आफ इडिया, जिल्द ४१(१) मार्च १९९५, पृ० ८५

4 त्वदर्चनान्नृणा कश्चिन्न व्याधि प्रभविष्यति।

भविष्यति न दारिद्रय रविवारे त्वदीक्षणात्।। काशीखण्ड, ५०/६४

खखोल्कादित्य –

इनका दूसरा नाम विनतादित्य है, क्योकि गरूड की माता[1] विनता द्वारा इनकी स्थापना हुई है। जबकि पौराणिक कथाओ मे अरूण की माता को विनिता[2] कहा गया हे। त्रिलोचन के समीप कामेश्वर महादेव के पूर्व के द्वार पर इनकी वर्तमान मूर्ति हे। यह परित्यक्त अवस्था मे है। इसमे, आकाश और एक छोटे आकार के तालाब मे सूर्य धब्बा और उनकी प्रतिमूर्ति का अकन है। इनके अकन से सभी पापो तथा रोगो का नाश[3] होता है।

अरूणादित्य –

सूर्य के सारथि अरूण द्वारा इनकी स्थापना तथा आराधना हुई थी, जिसके प्रभाव से अरूण को सूर्य नारायण के सारथि होने का गौरव मिला। आदि महादेव के उत्तर मे इनका स्थान है और आजकल त्रिलोचन महादेव के मन्दिर मे पीछे की ओर इनकी मूर्ति है। इसमे किरणो से आवृत्त २० सेमी व्यास का एक बिम्ब है और वह सात पखुडियो वाले कमल पर आसीन हैं। इनकी अर्चना से दु ख, दारिद्रय, व्याधि, शोक, क्लेश आदि सभी से छुटकारा मिलता है।

---

1 वाराणसी वैभव, पृ० ११३

2 नेशनल ज्योग्राफिकल जर्नल ऑफ इण्डिया, ४१(१), १९६५, पृ० ८५

3 काशीखण्ड, ५०/१४६–१५०

इत्थखखोल्क आदित्य काशीविध्नतमो हर।

तस्य दर्शनमात्रेण सर्वपापै प्रमुच्यते।।

काश्या पैशग्डिले तीर्थे खखोल्कस्य विलोकनात्।

निश्चिन्तित्यमाप्नोति नीरोगो जायते क्षणात्।।

वृद्धादित्य–

यह मूर्ति, बृद्ध ब्राह्मण हारीत से सम्बद्ध है जो बृद्धावस्था और मृत्यु से मुक्ति हेतु कठोर तपस्या कर रहा था। वृद्ध हारीत नामक ऋषि द्वारा इनकी स्थापना तथा आराधना प्राचीन काल मे हुई थी।

विशालाक्षी गौरी के दक्षिण इनका स्थान है। मीरघाट पर मकान न० डी० ३/१५ मे हनुमान जी के मन्दिर के समीप इनकी मूर्ति आजकल हे। इस मूर्ति मे चार भुजाधारी सूर्य चिन्तनशील मुद्रा मे बैठे है। वर्तमान मे यह परित्यक्त अवस्था मे है। बिम्ब मे, सूर्य मूर्ति के चतुर्दिक कमल पखुडियो की दो तह है और दोनो तहो मे कमल पखुडियो की सख्या बारह है।

इनकी अर्चना से वार्धक्य का कष्ट नही होता, अर्थात् वृद्धावस्था मे होन वाले रोगो तथा कष्टो से रक्षा होती है तथा यथासमय मुक्ति मिलती है। इन्ही की कृपा से वृद्ध हारीत को पुन यौवन मिला था।[1]

केशवादित्य –

भगवान केशव को शिवाराधन करते देखकर सूर्य नारायण ने उनसे पूछा कि आप जगदात्मा विश्वम्भर होकर भी किसकी अर्चना करते हैं। इस पर भगवान ने उनको सदाशिव की महत्ता का उपदेश दिया और तभी से सूर्य नारायण शिव भक्त हुए। जिस स्थान पर सूर्यनारायण को यह ज्ञानोपदेश केशव से मिला, वही पर केशवादित्य की स्थापना हुई।[2] आदिकेशव मन्दिर मे और इधर–उधर पॉच सौर बिम्ब हैं। प्रत्येक का मुँख गगा नदी के पार पूरब की ओर है। सबसे पुरातन बिम्ब दीवाल मे स्थित है जिसमे पखुडी रूप मे ४८ किरणो से आवृत्त सूर्य की मुखाकृति प्रदर्शित है, जबकि अन्य बिम्ब मे मात्र चौबीस किरणे प्रदर्शित है।

---

1 काशीखण्ड, ५१/४१–४२

2 वही०, ५१/७३–७४

इनकी आराधना से ज्ञान की प्राप्ति होती है। माघ शुक्ला सप्तमी (रथसप्तमी) को यदि रविवार पडे, तो इनके दर्शन–पूजन का विशेष माहात्म्य है।[1]

विमलादित्य–

पौराणिक मिथको से ज्ञात होता हे कि कुष्ठरोग और मानसिक तनाव से मुक्ति हेतु विमल नामक एक ब्राह्मण ने, सगमरमर के ऊँचे चबूतरे पर सौर बिम्ब स्थापित करवाया था। हरिकेशवन मे[2] विमलादित्य का स्थान है। इसे आज भी उसी शक्ति से युक्त माना जाता है। वर्तमान मे यह सौरबिम्ब एक ग्वाला के स्वामित्व मे एक सकुलित कमरे मे, हे। सूर्य की मुखाकृति के चतुर्दिक, किरणो का सूचक, चालीस कमल पखुडियॉ हें। इनकी अर्चना से कुष्ठरोग[3] का नाश होता है।

गगादित्य–

विश्वेश्वर के दक्षिण इनका स्थान कहा गया है। काशी मे गगाजी के आने के समय ये प्रकट हुए थे और गगातट पर आज भी विराजमान है। प्राचीन काल मे इनका स्थान गगाकेशव तथा गगाजी की मूर्ति–सहित अगस्त्यकुण्ड के दक्षिण मे था, परन्तु अब ललिताघाट[4] पर स्थापित है।

यह मूर्ति, सूर्य और जल की विलुप्तशक्ति को अभिव्यक्त करती है और गगोपासना तथा शोधन की विशेषता बताती है। १९६० ई० के दौरान मूल प्रतिमा नष्ट हो गयी, इसलिए सगमरमर निर्मित अन्य प्रतिकृति स्थापित की गयी है। इसी से सयुक्त भगीरथ की एक छोटी मूर्ति है।

---

1 वही० ५१/७६–७७

2. काशीखण्ड, ५१/८३

3 वही०, ५१/९९

4 वही०, ५१/१०१,१०४

यमादित्य—

सामान्यत यह विश्वास किया जाता है कि यम ने स्वय इस मूर्ति की स्थापना की थी। सकठाघाट के पास यमेश्वर घाट पर वशिष्ठेश्वर के समीप घाट की सीढी पर मकान न० सी०के० ७/१६४ मे इनकी मूर्ति है। इनके दर्शन—पूजन से मनुष्य को यमलोक नही जाना पडता।[1]

सुमन्त्वादित्य—

इनकी स्थिति ज्येष्ठ स्थान मे कही गई है। हनुमान फाटक के समीप हनुमान जी के मन्दिर मे सुमन्त्वीश्वर की मूर्ति है। इनकी स्थापना सुमन्तु मुनि ने किया था। इसमे सूर्य देव अपने दाये हाथ मे खड्ग और बाये हाथ मे कमल लिये हुए चिन्तनशील मुद्रा मे अपने रथ पर बैठे है। रथ, सात घोडो द्वारा चालित है, सारथि अरूण रथ को हॉक रहा है। रथ के पहिये मे १२ धुरियॉ हैं जो वर्ष के १२ महीनो की सूचक हैं। देव की चार भुजाएँ, चारो दिशाओ पर उनके नियत्रण की सूचक है। यह प्रतिमा दीवार मे स्थित एक विशाल पाषाण पट्टी पर अकित है। इनके दर्शन—पूजन से कुष्ठ रोग का नाश[2] होता है।

कर्णादित्य—

कर्णादित्य तीर्थ शीतलाघाट तथा राजमन्दिर के नीचे है और राजमन्दिर मुहल्ले मे मकान न० के० २०/१४७ मे कर्णादित्य[3] की मूर्ति है। वर्तमान प्रतिमा मे सूर्य, सात घोडो द्वारा चालित रथ पर आसीन प्रदर्शित हैं जो सभवत प्राचीन प्रतिमा की प्रतिकृति है। किसी ढग से मूर्ति अब विनष्ट हो गयी है और राम मन्दिर के प्रागण मे एक कोने मे बुरी अवस्था मे स्थित है।

---

1 वही०, ५१/१०६

2 <u>काशीखण्ड</u> ६५/६ सुमन्तुमुनिना श्रेष्ठस्तत्रादित्य प्रतिष्ठित।

तस्य सन्दर्शनादेव कुष्ठव्याधि प्रशाम्यति।।

3 वही० ८४/४५
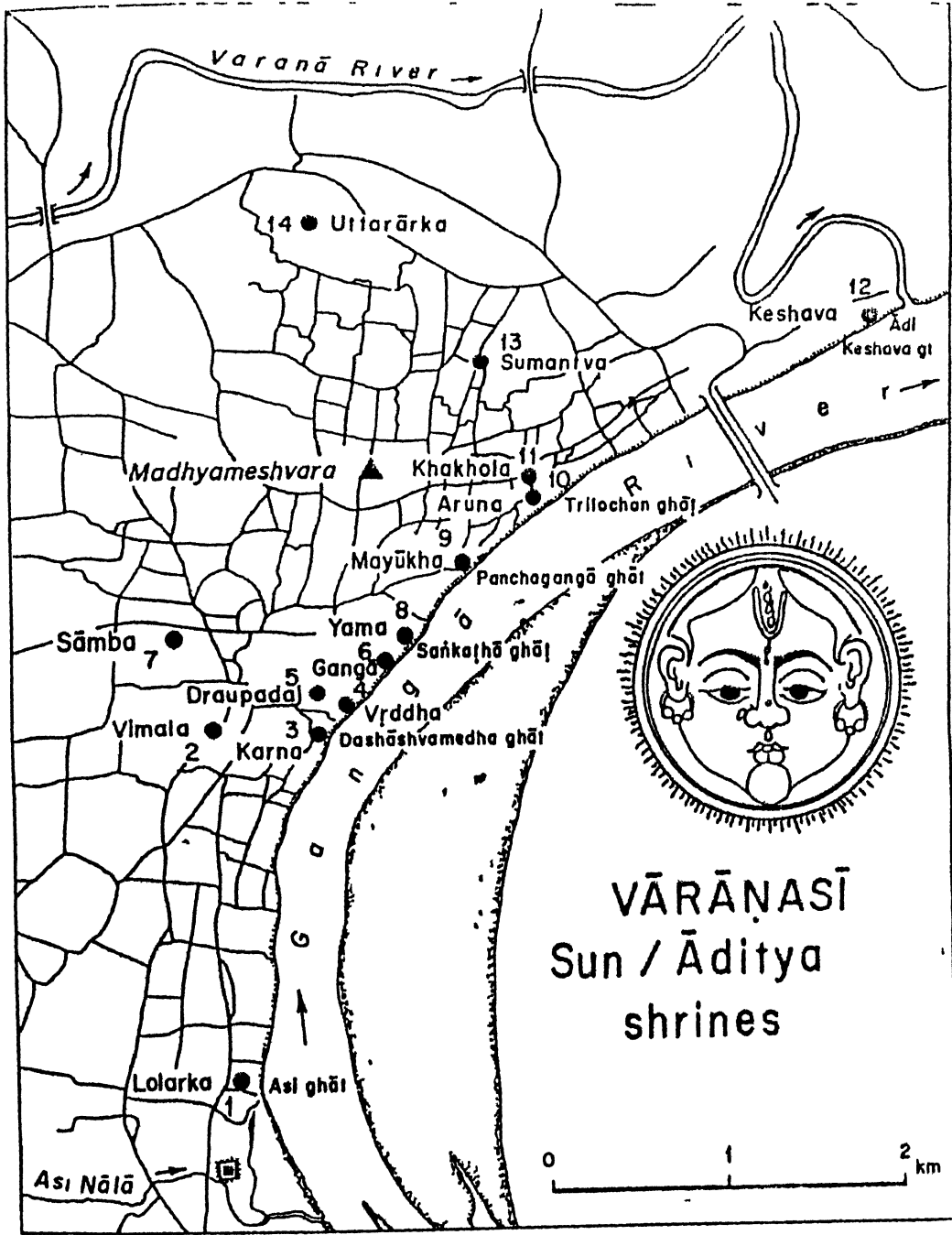
Varanā River
Uttarārka
14
13
Sumantva
Keshava
12
Ādi
Keshava gt
River
Madhyameshvara
Khakhola
11
10
Aruna
Trilochan ghāt
9
Mayūkha
Panchagangā ghāt
8
Yama
Sāmba
7
6
Sankathā ghāt
5
Ganga
Draupadai
4
Vrddha
Vimala
3
Dashāshvamedha ghāt
2
Karna
Gangā
VĀRĀṆASĪ
Sun / Āditya
shrines
Lolarka
Asi ghāt
1
Asi Nālā
0
1
2
km

वाराणसीः सूर्य मन्दिरो की स्थिति

	आदित्य / सूर्य	शहर मे स्थिति (क्षेत्र मकान न०)
१	लोलार्क	लोलार्क कुण्ड, असि
२	विमल	जगमबाडी मुहल्ले मे खारीकुऑ D-35/273
३	कर्ण	रामामन्दिर, दशाश्वमेघ घाट D 17/111
४	वृद्ध	मीरघाट D 3/15
५	द्रुपद	विश्वनाथ मदिर के समीप, CK 35/21
६	गगा	ललितघाट K 1/68
७	साम्ब	सूरजकुण्ड D 51/90
८	यम	सकठाघाट K 7/164
९	मयूख	मगलागौरी मन्दिर के एक स्तम्भ मे के० २४/३४
१०	अरूण	त्रिलोचन मन्दिर ए० २/८०
११	खखोल	कामेश्वर मन्दिर के समीप, पीछे की ओर ए० २/६के०
१२	केशव	आदिकेशव मन्दिर ए० ३७/१५१
१३	सुमन्त्व	हनुमान फाटक ए० ३१/६१
१४	उत्तरार्क	बकरिआ कुण्ड

❀❀❀

अध्याय – सात

सौर व्रत, उत्सव एवं त्यौहार

अध्याय–सात

प्रमुख सौर ब्रत, उत्सव, त्यौहार एवं मेला

भारतीय धर्मशास्त्रो मे आचार को धर्म के आधार रूप मे वर्णित किया गया है।[1] आचार से मनुष्य सुखगामी होता है, लक्ष्मी का भोग करता है, लम्बी आयु प्राप्त करता है तथा आचार से ही दुर्लक्षण दूर होते है।[2] सूर्य देवता की प्रियता, आयु, लक्ष्मी, कीर्ति प्राप्त करने के लिए धर्म वेत्ताओ ने सूर्य भक्त के लिए कुछ आचारो का पालन करने का निर्देश दि-या है।[3] यथा मनुष्य को अक्रोधी, सत्यवादी, अहिसक, अनिन्दक, अकुटिल और निरा लस्य होना चाहिए, तिनके नही तोडना चाहिए, नाखून नही बढाना चाहिए।[4] ब्राह्म बेला मे उठकर धर्म के निमित्त चिन्ता करनी चाहिए। आचमन करके पूर्व और पश्चिम सन्ध्याओ का वदन करे। जल मे प्रतिबिम्बित, दोपहर मे और ग्रहण बेला मे सूर्य को न देखे। मलमूत्र वाले स्थान मे शयन न करे। सडे–गले अन्न को न खाये, सन्यासी का आदर करे। जूठे मुॅह न पढे न पढाये।[5] सूर्य, अग्नि, पवन, चन्द्रमा, जल, गाय, ब्राह्म-ण और नक्षत्रो की ओर मुॅह करके रास्ते मे मूत्र न करे।

---

1 मनुस्मृति ११०८–११०

2 आचारद्वर्धतेह्यचारो हत्य लक्षणम्।

आचारत्सुखभागी स्यादाचारच्छियमश्रुते।।

सांबपुराण ४४ २–३, तथा देखिये मनुस्मृति ४ १४५–१४६,१५६

3 साम्बपुराण, अध्याय ४४

4 महाभारत, शान्तिपर्व, १६२–१३

"लोष्ट–मर्दी तृणच्छेदी नखखादी तु यो नर" ये अल्पायु होते हैं।

5 साम्ब पुराण ४४ ६–८

ब्राह्मण, क्षत्रिय, नागो[1] का अपमान न करे। गुरू के साथ छल, असत्य, के साथ समझौता, गुरू की निन्दा से बचना चाहिए। गाय, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वृद्ध, भार से थकी गर्भिणी और क्षीणकाय व्यक्तियो के लिए रास्ता दे देना चाहिए। अष्टमी, चतुर्दशी, पूर्णिमा, अमावस्या इन तिथियो मे ब्रह्मचारी हो जाना चाहिए। सन्यासियो को भिक्षा देना तथा अतिथि सत्कार करना चाहिए। पतितो के वृत्तान्त, दर्शन और ससर्ग को छोड दे। गाय, ब्राह्मण और स्त्रियो से वीरता न दिखाये।[2] सनातन ऐश्वर्य एव ब्रह्मलोक को प्राप्त करने के इच्छुक को सूर्य के लिए छत्र और उपानह[3] देना चाहिए। इस प्रकार से सूर्य भक्त के आचरण सम्बन्धी निर्देशो की एक लम्बी श्रृखला साम्बपुराण मे मिलती है, उसी श्रृखला मे प्रमुख आचार के रूप मे सूर्य ब्रतो[4] के पालन की आज्ञा दी गयी है। मत्स्यपुराण के अनुसार सूर्य व्रत शिव द्वारा कहे गये ६० कानूनो मे से एक है। पुराणो का अध्ययन स्पष्ट कर देता है कि सूर्य पूजा का प्रख्यात पक्ष व्रतो और तीर्थो के रूप मे वर्णित किया गया है।

सौर ब्रतोत्सवो का विवरण मुख्य रूप से मत्स्य, पद्म साम्ब, भविष्योत्तर, विष्णुधर्मोत्तर, नारद, भविष्य स्कन्द, गरूड आदि पुराणो[5] कृत्यकल्पतरू (व्रतकाण्ड) चतुर्वर्ग चिन्तामणि

---

1 नाग का सूर्य से निकटतम सम्बन्ध था। देखिये–महाभारत शान्तिपर्व ३५८–३६३, ओल्घन, सी०एफ०, दी सन ऐण्ड दी सरपेन्ट।

2 साम्ब पुराण ४४ ६–८

3 महाभारत १३–८५ एव पुराणो मे आये जमदग्नि–रेणुका आख्यान मे सूर्योपासक के लिए छत्र उपानह दान का औचित्य देखा जा सकता है। श्रीवास्तव, वी०सी०, सन वर्शिप इन एन्शियन्ट इडिया, पृ० १६७ साम्बपुराण ४४ ६–१४

4 साम्बपुराण ४६ ६–१४

5. मत्स्य पुराण ७४–८०;पद्मपुराण, ५.२१ २१५–३२१, साम्बपुराण अ ३८, ४६,६१,६२,६८; भविष्योत्तर पुराण, ३८–५३, नारदपुराण १ ११६ १–७२, भविष्यपुराण १ ३६–४६,१०५ १–१६,२१५ २४–२६,६८ ८–१४, विष्णुधमोत्तर पुराण ३ १६६ १७१ १८२, गरूड पुराण, १ १३० ७ ८ ६।

(ब्रतखण्ड), वर्ष क्रिया कौमुदी, व्रतरत्नाकर, तिथितत्व, निर्णयामृत, कृत्यरत्नाकर, अहल्याकामधेनु, अपरार्क, दानसागर, धर्मसिन्धु, काल निर्णय, समय मयूख, पुरूषार्थ चिन्तामणि, निर्णय सिन्धु आदि निबन्ध ग्रन्थो तथा साहित्यिक ग्रन्थो[1] मे हुआ हे।

पी०वी० काणे ने 'धर्मशास्त्र के इतिहास' मे सस्कृत की वर्णमाला के अनुसार व्यवस्थित सौर सम्प्रदायो के व्रतोत्सवो की एक लम्बी सूची[2] प्रस्तुत की है जिसमे व्रतो का काल, अधिष्ठाता देवता का नाम, तथा श्रौत ग्रन्थो के नाम दिये गये है। सौर व्रतोत्सवो का अलग से कही भी विस्तृत अध्ययन नही किया गया। सौर व्रतोत्सव के अध्ययन के लिए काणे महोदय की सूची को ही आधार बनाया गया है। उसमे वर्णित सौर व्रतोत्सवो के अतिरिक्त यत्र–तत्र पुराणो, निबन्ध ग्रन्थो मे उल्लिखित अन्य व्रतोत्सवो को भी सम्मिलित किया गया है। काणे की व्रत सूची मे निम्नलिखित सौर व्रतोत्सवो का उल्लेख है।

---

1 कृत्य कल्पतरू, ब्रतकाण्ड, पृ० ६८–२२५, हेमाद्रि, चतुर्वर्गचिन्तामणि, व्रतखण्ड–१, पृ० ५७७–८१०, वर्ष क्रिया कौमुदी, पृ० ३५–३८ व्रतरत्नाकर पृ० २२०–२२५, तिथित्व ३४–४०, निर्णयामृत पृ० ५२ कृत्यरत्नाकर पृ० १२१–१२३, ४०३,४०५,४६४,४६५, अहल्या कामधेनु, पृ० २५१ अपरार्क पृ० १८६–१६२ समय मयूख, पृ० ४२–४३, पुरूषार्थ चिन्तामणि पृ० १००–१०५, निर्णय सिन्धु, पृ० १३४

2 काणे, पी०वी०, धर्मशास्त्र का इतिहास, भाग–४ अध्याय–१–२५, पृ० ६७–२

(ब्रतखण्ड), वर्ष क्रिया कौमुदी, व्रतरत्नाकर, तिथितत्व, निर्णयामृत, कृत्यरत्नाकर, अहल्याकामधेनु, अपरार्क, दानसागर, धर्मसिन्धु, काल निर्णय, समय मयूख, पुरूषार्थ चिन्तामणि, निर्णय सिन्धु आदि निबन्ध ग्रन्थो तथा साहित्यिक ग्रन्थो[1] मे हुआ हे।

पी०वी० काणे ने 'धर्मशास्त्र के इतिहास' मे सस्कृत की वर्णमाला के अनुसार व्यवस्थित सौर सम्प्रदायो के व्रतोत्सवो की एक लम्बी सूची[2] प्रस्तुत की है जिसमे व्रतो का काल, अधिष्ठाता देवता का नाम, तथा श्रौत ग्रन्थो के नाम दिये गये है। सौर व्रतोत्सवो का अलग से कही भी विस्तृत अध्ययन नही किया गया। सोर व्रतोत्सव के अध्ययन के लिए काणे महोदय की सूची को ही आधार बनाया गया है। उसमे वर्णित सौर व्रतोत्सवो के अतिरिक्त यत्र–तत्र पुराणो, निबन्ध ग्रन्थो मे उल्लिखित अन्य व्रतोत्सवो को भी सम्मिलित किया गया है। काणे की व्रत सूची मे निम्नलिखित सौर व्रतोत्सवो का उल्लेख है।

---

1 कृत्य कल्पतरू, ब्रतकाण्ड, पृ० ६८–२२५, हेमाद्रि, चतुर्वर्गचिन्तामणि, व्रतखण्ड–१, पृ० ५७७–८१०, वर्ष क्रिया कौमुदी, पृ० ३५–३८ व्रतरत्नाकर पृ० २२०–२२५, तिथित्व ३४–४०, निर्णयामृत पृ० ५२ कृत्यरत्नाकर पृ० १२१–१२३, ४०३,४०५,४६४,४६५, अहल्या कामधेनु, पृ० २५१ अपरार्क पृ० १८६–१६२ समय मयूख, पृ० ४२–४३, पुरूषार्थ चिन्तामणि पृ० १००–१०५, निर्णय सिन्धु, पृ० १३४

2 काणे, पी०वी०, धर्मशास्त्र का इतिहास, भाग–४ अध्याय–१–२५, पृ० ६७–२

काणे की व्रत सूची के आधार पर सौर व्रतोत्सव सूची

स०	व्रत का नाम	व्रत काल	श्रौत ग्रन्थ
१	अचला सप्तमी	माघ शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्योत्तर पुराण, व्रतार्क, व्रतराज, निर्णयामृत।
२	आदारिद्‌य षष्ठी	षष्ठी	चतुर्वर्गचिन्तामणि, स्कन्दपुराण
३	अनन्त फल सप्तमी	भाद्र शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्ग चिन्तामणि, भविष्यपुराण कृत्यकल्पतरू।
४	अनोदना सप्तमी	चैत्र शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्गचिन्तामाणि, भविष्य पुराण कृत्यकल्पतरू कृत्यरत्नाकर।
५	अपराजिता सप्तमी	भाद्रशुक्ल सप्तमी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्यपुराण,पुरूषार्थ चिन्तामणि
६	अपाप सक्रान्ति व्रत	सक्रान्ति दिन	चतुर्वर्गचिन्तामणि
७	अम्बुवावी	जब आषाढ मे आर्दा नक्षत्र के प्रथम चरण मे होता है।	कृत्यकल्पतरू, राजमार्तण्ड, कृत्यतत्व, चतुर्वर्गचिन्तामणि
८	अयन व्रत	उत्तरायण तथा दक्षिणायन	कालनिर्णय कारिका, कृत्यरत्नाकर, चतुर्वर्गचिन्तामणि कालखण्ड, समय मयूख, समय प्रकाश
९	अर्कव्रत	षष्ठी एव सप्तमी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि
१०.	अर्क सप्तमी	सप्तमी	चतुर्वर्गचिन्तामणि, पद्‌मपुराण
११	अर्क सम्पुट सप्तमी	फाल्गुन शुक्ल सप्तमी	भविष्य पुराण
१२	अव्यड्‌ग सप्तमी	श्रावण शुक्ल सप्तमी	भविष्य पुराण

काणे की व्रत सूची के आधार पर सौर व्रतोत्सव सूची

स०	व्रत का नाम	व्रत काल	श्रौत ग्रन्थ
१	अचला सप्तमी	माघ शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्योत्तर पुराण, व्रतार्क, व्रतराज, निर्णयामृत।
२	आदारिद्‌य षष्ठी	षष्ठी	चतुर्वर्गचिन्तामणि, स्कन्दपुराण
३	अनन्त फल सप्तमी	भाद्र शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्ग चिन्तामणि, भविष्यपुराण कृत्यकल्पतरू।
४	अनोदना सप्तमी	चैत्र शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्गचिन्तामाणि, भविष्य पुराण कृत्यकल्पतरू कृत्यरत्नाकर।
५	अपराजिता सप्तमी	भाद्रशुक्ल सप्तमी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्यपुराण,पुरूषार्थ चिन्तामणि
६	अपाप सक्रान्ति व्रत	सक्रान्ति दिन	चतुर्वर्गचिन्तामणि
७	अम्बुवावी	जब आषाढ मे आर्दा नक्षत्र के प्रथम चरण मे होता है।	कृत्यकल्पतरू, राजमार्तण्ड, कृत्यतत्व, चतुर्वर्गचिन्तामणि
८	अयन व्रत	उत्तरायण तथा दक्षिणायन	कालनिर्णय कारिका, कृत्यरत्नाकर, चतुर्वर्गचिन्तामणि कालखण्ड, समय मयूख, समय प्रकाश
९	अर्कव्रत	षष्ठी एव सप्तमी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि
१०.	अर्क सप्तमी	सप्तमी	चतुर्वर्गचिन्तामणि, पद्मपुराण
११	अर्क सम्पुट सप्तमी	फाल्गुन शुक्ल सप्तमी	भविष्य पुराण
१२	अव्यङ्ग सप्तमी	श्रावण शुक्ल सप्तमी	भविष्य पुराण

१३ अशोक सक्रान्ति	अयन या विष्णु सक्रान्ति पर जब व्यतीपात हो।	व्रतार्क
१४ अहिर्बुध्नस्नान	पूर्वाभाद्र पदा नक्षत्र	चतुर्वर्गचिन्तामाणि, विष्णुधर्मोत्तर पुराण
१५ आज्ञा सक्रान्ति	सक्रान्तिदिन	चतुर्वर्ग चिन्तामाणि
१६ आदित्यवार	रविवार	चतुर्वर्गचिन्तामाणि, कृत्यकल्पतरू
१७ आदित्यमण्डल विधि	हस्त नक्षत्र मे रविवार	व्रतार्क
१८ आदित्यवार व्रत	आदित्यदिन	कृत्यकल्पतरू
१६ आदित्यवार व्रतानि	आदित्य दिन	कृत्यकल्पतरू
२० आदित्य व्रत	अश्विनमास के रविवार	चतुर्वर्गचिन्तामणि
२१ आदित्यायन	रविवार एव हस्त नक्षत्र के साथ सप्तमी, या रविवार के साथ सप्तमी को सक्रान्ति हो।	मत्स्यपुराण, कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्योत्तर पुराण, कृत्यरत्नाकर, पद्मपुराण
२२ आदित्य शान्ति व्रत	हस्त नक्षत्र के साथ रविवार	चतुर्वर्ग चिन्तामाणि
२३ आदित्य हृदयविधि	सक्रान्ति के साथ रविवार	चतुर्वर्गचिन्तामणि, कृत्यकल्पतरू
२४ अर्काष्टमी	रविवार, शुक्ल अष्टमी	चतुर्वर्गचिन्तामणि
२५ आदित्याभिमुखविधि	कालोल्लेख नही है	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि कृत्यरत्नाकर
२६ आयु सक्रान्तिव्रत	सक्रान्ति दिन	चतुर्वर्गचिन्तामाणि, व्रतार्क
२७ आरोग्य प्रतिपदा	वर्षान्त मे प्रथम तिथि को प्रारम्भ	चतुर्वर्गचिन्तामणि, व्रतार्क, व्रतरत्नाकर

२८ आरोग्य सप्तमी	माघ शुक्ल सप्तमी	वराहपुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि तिथितत्व
२६ आशादित्य व्रत	अश्विन मे किसी रविवार	चतुवर्गचिन्तामणि
३० उभयसप्तमी	माघ शुक्ल सप्तमी	कृत्यकल्पतरू, तुवर्गचिन्तामणि, भविष्योत्तर पुराण।
३१ कपिलाषष्ठी	भाद्रपदमास कृष्णपक्ष (अमान्तगणना) या आश्विन कृष्ण (पूर्णिमान्त गणना) षष्ठी, मगल से युक्त व्यतीपात योग, रोहिणी नक्षत्र के साथ	चतुर्वर्गचिन्तामणि, निर्णय सिन्धु, पुरूषार्थ चिन्तामणि, व्रतराज
३२ कमल सप्तमी	चैत्र शुक्ल सप्तमी	मत्स्यपुराण, कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्योत्तर पुराण, कृत्यरत्नाकर, पद्मपुराण
३३ कल्याण सप्तमी	रविवार, शुक्ल सप्तमी	मत्स्यपुराण, भविष्योत्तरपुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि, कृत्यकल्पतरू
३४ कामद विधि	मार्गशीर्ष, शुक्ल षष्ठी	कृत्यकल्पतरू
३५ कामदासप्तमी	फाल्गुन शुक्ल सप्तमी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि भविष्यपुराण
३६ कामव्रत	कार्तिकमास मे प्रारम्भ	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि
३७ कीर्ति सक्रान्ति व्रत	सक्रान्ति दिन	चतुर्वर्गचिन्तामणि, स्कन्दपुराण
३८ कृष्ण षष्ठी	मार्गशीर्ष, कृष्ण षष्ठी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि कृत्य रत्नाकर

२८ आरोग्य सप्तमी	माघ शुक्ल सप्तमी	वराहपुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि तिथितत्व
२६ आशादित्य व्रत	अश्विन मे किसी रविवार	चतुवर्गचिन्तामणि
३० उभयसप्तमी	माघ शुक्ल सप्तमी	कृत्यकल्पतरू, तुवर्गचिन्तामणि, भविष्योत्तर पुराण।
३१ कपिलाषष्ठी	भाद्रपदमास कृष्णपक्ष (अमान्तगणना) या आश्विन कृष्ण (पूर्णिमान्त गणना) षष्ठी, मगल से युक्त व्यतीपात योग, रोहिणी नक्षत्र के साथ	चतुर्वर्गचिन्तामणि, निर्णय सिन्धु, पुरूषार्थ चिन्तामणि, व्रतराज
३२ कमल सप्तमी	चैत्र शुक्ल सप्तमी	मत्स्यपुराण, कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्योत्तर पुराण, कृत्यरत्नाकर, पद्मपुराण
३३ कल्याण सप्तमी	रविवार, शुक्ल सप्तमी	मत्स्यपुराण, भविष्योत्तरपुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि, कृत्यकल्पतरू
३४ कामद विधि	मार्गशीर्ष, शुक्ल षष्ठी	कृत्यकल्पतरू
३५ कामदासप्तमी	फाल्गुन शुक्ल सप्तमी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि भविष्यपुराण
३६ कामव्रत	कार्तिकमास मे प्रारम्भ	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि
३७ कीर्ति सक्रान्ति व्रत	सक्रान्ति दिन	चतुर्वर्गचिन्तामणि, स्कन्दपुराण
३८ कृष्ण षष्ठी	मार्गशीर्ष, कृष्ण षष्ठी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि

३६ गायत्री व्रत	शुक्ल चतुर्दशी	चतुर्वर्गचिन्तामणि
४० गोमयादि सप्तमी	चेत्रशुक्ल सप्तमी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि भविष्य पुराण
४१ चन्द्र व्रत	अमावस्या	चतुर्वर्गचिन्तामणि, विष्णुधर्मोत्तर पुराण
४२ चम्पा षष्ठी	वैधृतियोग, मगलवार विशाखा नक्षत्र से युक्त भाद्र शुक्ल षष्ठी	चतुर्वर्गचिन्तामणि, निर्णयसिन्धु स्मृति कौस्तुभ, व्रतराज
४३ चित्रभानुपदद्वय व्रत	उत्तरायण से आरम्भ	भविष्य पुराण, कृत्यकल्पतरू
४४ चित्रभानुव्रत	शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्गचिन्तामणि
४५ जयदा सप्तमी	रविवार को पडने वाली शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्गचिन्तामणि
४६ जयन्त विधि	उत्तरायण रविवार	चतुर्वर्गचिन्तामणि, कृत्यकल्पतरू
४७ जयन्तीव्रत	माघ शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्ग चिन्तामणि, कृत्यरत्नाकर
४८ जयन्ती सप्तमी	जयन्ती व्रत ही है	
४६ जया सप्तमी	१ जब शुक्ल सप्तमी को नक्षत्रो (रोहिणी, आश्लेख, मघा एव हस्त) के साथ कोई ग्रहण हो।	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि
	२ रविवार के साथ शुक्ल	वर्ष क्रिया कौमुदी
५० तपश्चरण व्रत	मार्गशीर्ष मास कृष्ण पक्ष सप्तमी	चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्योत्तरपुराण
५१ तारक द्वादशी	मार्गशीर्ष, द्वादशी शुक्ल पक्ष	चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्योत्तर पुराण

३६ गायत्री व्रत	शुक्ल चतुर्दशी	चतुर्वर्गचिन्तामणि
४० गोमयादि सप्तमी	चेत्रशुक्ल सप्तमी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि भविष्य पुराण
४१ चन्द्र व्रत	अमावस्या	चतुर्वर्गचिन्तामणि, विष्णुधर्मोत्तर पुराण
४२ चम्पा षष्ठी	वैधृतियोग, मगलवार विशाखा नक्षत्र से युक्त भाद्र शुक्ल षष्ठी	चतुर्वर्गचिन्तामणि, निर्णयसिन्धु स्मृति कौस्तुभ, व्रतराज
४३ चित्रभानुपदद्वय व्रत	उत्तरायण से आरम्भ	भविष्य पुराण, कृत्यकल्पतरू
४४ चित्रभानुव्रत	शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्गचिन्तामणि
४५ जयदा सप्तमी	रविवार को पडने वाली शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्गचिन्तामणि
४६ जयन्त विधि	उत्तरायण रविवार	चतुर्वर्गचिन्तामणि, कृत्यकल्पतरू
४७ जयन्तीव्रत	माघ शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्ग चिन्तामणि, कृत्यरत्नाकर
४८ जयन्ती सप्तमी	जयन्ती व्रत ही है	
४६ जया सप्तमी	१ जब शुक्ल सप्तमी को नक्षत्रो (रोहिणी, आश्लेख, मघा एव हस्त) के साथ कोई ग्रहण हो। २ रविवार के साथ शुक्ल	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि वर्ष क्रिया कौमुदी
५० तपश्चरण व्रत	मार्गशीर्ष मास कृष्ण पक्ष सप्तमी	चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्योत्तरपुराण
५१ तारक द्वादशी	मार्गशीर्ष, द्वादशी शुक्ल पक्ष	चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्योत्तर पुराण

५२ तुरग सप्तमी	चैत्र शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्गचिन्तामणि, विष्णुधर्मोत्तर पुराण
५३ तेजस्सक्रान्ति व्रत	सक्रान्ति दिन	चतुर्वर्गचिन्तामणि
५४ ताम्बूल सक्रान्ति	सक्रान्ति दिन	चतुर्वर्गचिन्तामणि, व्रतार्क
५५ त्रयोदश पदार्थ वर्जन सप्तमी	किसी भी मास के शुक्ल पक्ष, पुरूषवाची नक्षत्र के साथ, सप्तमी को रविवार के दिन उत्तरायण के अन्त मे,	चतुर्वर्गचिन्तामणि भविष्योत्तर पुराण
५६ विगति सप्तमी	फाल्गुन शुक्ल सप्तमी से प्रारम्भ	भविष्यपुराण, कृत्यकल्पतरू चतुवर्ग चिन्तामणि, कृत्यरत्नाकार
५७ वितय प्रदान सप्तमी	हस्त नक्षत्र के योग मे माघ शुक्ल सप्तमी पर	कृत्यरत्नाकर, क्तयकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि
५८ बिपुर सूदर व्रत	उत्तर नक्षत्र के साथ रविवार	चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्योत्तर पुराण
५६ द्वादशादित्य व्रत	रविवार वाली शुक्ल दशमी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि भविष्य पुराण
६० दीपदान व्रत	प्रत्येक पुप्यकाल सक्रान्ति ग्रहणादि अवसरो पर दानसागर	आग्निपुराण, भविष्योत्तर पुराण, चतुर्वर्गचिनतामणि, कृत्यरत्नाकर,
६१ दुर्गन्ध–दुर्भाग्य नाशन त्रयोदशी	ज्येष्ठ शुक्ल त्रयादशी पर	चतुर्वर्गचिन्ताणि
६२ देवी व्रत	प्रकीर्णक व्रत	चतुर्वर्गचिन्तामणि

६३	द्वादशादित्य व्रत	चैत्र शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्गचिन्तामणि, अहल्या कामधेनु विष्णुधर्मोत्तर पुराण
६४	द्वादशाह सप्तमी	माघ शुक्ल सप्तमी से	चतुर्वर्गचिन्तामणि
६५	धन सक्रान्ति व्रत	सक्रान्ति के दिन से	चतुर्वर्गचिन्तामणि, स्कन्दपुराण
६६	धान्य सक्रान्ति व्रत	अयन या विपुव दिन से प्रारभ	चतुर्वर्गचिन्तामणि, स्कन्दपुराण
६७	धान्य सप्तमी	शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्गचिनतामणि, भविष्य पुराण
६८	धाम व्रत	फाल्गुन की पूर्णिमा	मत्स्यपुराण, चतुर्वर्ग चिन्तामणि कृत्यकल्पतरू
६९	धार्माश्रराव्रत	यह धाम व्रत ही है।	
७०	नन्दादिव्रत विधि	माघ शुक्ल षष्ठी का रविवार	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि
७१	नन्दादिव्रत विधि	रविवार	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि
७२	नन्दा सप्तमी	मार्गशीर्ष शुक्ल सप्तमी भविष्यपुराण	चतुर्वर्ग चिन्तामणि, कृत्यकल्पतरू
७३	नाम सप्तमी	चैत्र शुक्ल सप्तमी कृत्यरत्नाकर, भविष्यपुराण	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि
७४	निक्षुभार्क चतुष्ट्य व्रत	कृष्ण चतुर्दशी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि
७५	निक्षुभार्क सप्तमी	षष्ठी या सप्तमी या सक्रान्ति या रविवार को प्रारम्भ	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि अहल्याकामधेनु, भविष्यपुराण,
७६	निम्ब सप्तमी	वैशाख शुक्ल सप्तमी	निर्णयामृत, कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्ग०

७७ नीराजन विधि	कार्तिक कृष्ण १२ से प्रारम्भ	चतुर्ववचिन्तामणि, विष्णु धर्मोत्तर पुराण,कृत्यरत्नाकर, स्मृति कोस्तुभ, राजनीति प्रकाश
७८ पद्मक योग	जब रविवार सप्तमी से युक्त षष्ठी को हो	पुरूषार्थ चिन्तामणि, व्रतराज, चतुर्वर्ग चिन्तामणि, कालविवेक, पद्मपुराण, विष्णु पुराण
७६ पुत्रद विधि	रोहिणी या हस्त मे पडने वाला रविवार	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि
८० पुत्र सप्तमी	माघ, शुक्ल एव कृष्ण सप्तमी	आदित्यपुराण, व्रतराज कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि
८१ पुत्रीय सप्तमी	मार्गशीष शुक्ल सप्तमी	विष्णु धर्मोत्तर पुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि
८२ पुरश्चरण सप्तमी	माघ शुक्ल सप्तमी रविवार हो तथा सूर्य मकर राशि मे हो	स्कन्दपुराण, स्मृति कौस्तुभ, चतुर्वर्ग–चिन्तामणि
८३ पापनाशिनी सप्तमी	शुक्लसप्तमी हस्त रक्षत्र	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्य पुराण
८४ पुष्य व्रत	शुक्ल पक्ष, सूर्य की उत्तरायण गति हो	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि
८५ फलव्रता	अषाढ से प्रारम्भ	मत्स्य पुराण, कृत्यकल्पतरू, पद्मपुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि
८६ फलषष्ठी व्रत	मार्गशीर्ष मास, षष्ठी	चतुर्वर्ग चिन्तामणि, भविष्योत्तर पुराण

८७ फल सक्रान्ति व्रत	सक्रान्ति दिन	स्कन्द पुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि
८८ फल सप्तमी	१ भाद्रपद शुक्ल	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि
	सप्तमी	भविष्य पुराण
	२ मार्गशीर्ष शुक्ल	मत्स्यपुराण, कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्ग
	सप्तमी	चिन्तामणि, पद्म पुराण
८९ वस्तु त्रिरात्र व्रत	चैत्र मे तीन दिन	चतुर्वर्ग चिन्तामणि, भविष्योत्तर पुराण
९० भद्र विधि	भाद्र शुक्ल षष्ठी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि
	रविवार के दिन	भविष्य पुराण, कृत्यरत्नाकर
९१ भद्रा सप्तमी	शुक्ल सप्तमी, हस्त	भविष्य पुराण, पुरूषार्थ चिन्तामणि,
	नक्षत्र	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि।
९२ भनुव्रत	सप्तमी	मत्स्यपुराण, पद्मपुराण,
९३ भानु सप्तमी	सप्तमी जब रविवार	कृत्यकल्पतरू गदाधर पद्धति
	को पडे	
९४ भास्कर प्रिया सप्तमी	शुक्ल सप्तमी पद जब	भविष्यपुराण, कालविवेक, तिथितत्व,
	सूर्य एक राशि से दूसरी	वर्षक्रिया कौमुदी, ब्रह्मपुराण
	पर जाता है।	
९५ भास्कर व्रत	कृष्ण पक्ष षष्ठी	भविष्य पुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि
९६ भूमिव्रत	शुक्ल, चौदश	कालोत्तरपुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि
९७ भोग सक्रान्ति व्रत	सक्रान्ति दिन	स्कन्दपुराण, चतुर्वर्ग चिन्तामणि
९९ मदार सप्ती	माघ शुक्ल सप्तमी	पद्मपुराण, कृत्यकल्पतरू,
		~~मत्स्यपुराण, पुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि~~
१०० मदार षष्ठी	माघ शुक्ल सप्तमी	भविष्योत्तरपुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि

१०१ मारिच सप्तमी	चैत्र शुक्ल सप्तमी	भविष्योत्तर पुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि
१०२ महाफल व्रत	पहली या पन्द्रहवी तिथि को	भविष्य पुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि
१०३ महाजय सप्तमी	शुक्ल सप्तमी पर सूर्य किसी राशि मे प्रवेश होता है।	चतुर्वर्गचिन्तामणि, तिथितत्व ब्रह्म–पुराण
१०४ महाश्वेताप्रियविधि	सूर्यग्रहण के अवसर	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि
१०५ महासप्तमी	माघ शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्यपुराण
१०६ माघ सप्तमी	माघ शुक्ल सप्तमी	कृत्यरत्नाकर, वर्षक्रिया कौमुदी, राजमार्तण्ड
१०७ मार्तण्ड सप्तमी	पौष शुक्ल सप्तमी	भविष्यपुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि कृत्यकल्पतरू
१०८ मास व्रत	मार्गशीर्ष मास से प्रारम्भ	देवीपुराण, कृत्यरत्नाकर, चतुर्वर्ग चिन्तामणि
१०९ मुक्तिद्वार सप्तमी	जब सप्तमी का हस्त या पुण्य नक्षत्र हो	चतुर्वर्गचिन्तामणि
११० त्रिसप्तमी	मार्गशीर्ष शुक्ल सप्तमी	कृत्यरत्नाकर, कृत्यकल्पतरू, पुरूषार्थ चिन्तामणि, वर्षक्रिया कौमुदी
१११ यज्ञसप्तमी	शुक्ल सप्तमी पर जब ग्रहण हो या सक्रान्ति हो	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि भविष्य पुराण
११२ रक्त सप्तमी	मार्ग मार्ष कृष्ण सप्तमी	विष्णुधर्मोत्तर पुराण

११३ रथ सप्तमी	माघ शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्योत्तर पुराण कालनिर्णय, लिङ्पुराण
११४ रविव्रत	माघ मस	चतुर्वर्गचिन्तामणि, वर्षक्रिया कौमुदी
११५ रविषष्ठि	षष्ठी	कालनिर्णय, लिङ् पुराण
११६ राज्ञी स्नापन	चैत्रशुक्ल अष्टमी	कृत्यरत्नाकर, ब्रह्मपुराण, नीलमत पुराण
११७ राज्यव्रत	ज्येष्ठ शुक्ल तृतीया	चतुर्वर्गचिन्तामणि, विष्णुधर्मोत्तर पुराण
११८ रोगहविधि	पूर्वा फाल्गुनी नक्षत्र के साथ रविवार	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि भविष्योत्तर पुराण, कृत्यरत्नाकर
११९ लवण सक्रान्ति व्रत	सक्रान्ति दिन	चतुर्वर्गचिन्तामणि, स्कन्दपुराण
१२० वरूण व्रत	भाद्रपद के प्रारभ से	कृत्यकलपतरू, चतुर्वर्ग चिन्तामणि, पद्म पुराण, विष्णु धर्मोत्तर पुराण
१२१ वाराटिका सप्तमी	किसी सप्तमी तिथि पर	कृत्यकल्पतरू, भविष्यपुराण, चतुर्वर्ग–चिन्तामणि
१२२ विजय विधि	प्रजापत्य नक्षत्र से युक्त शुक्ल सप्तमी रविवार को	कृत्यकल्पतरू
१२३ विजय सप्तमी	१ रविवार से युक्त सप्तमी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्ग चिन्ताणि, भविष्योत्तर पुराण
	२ माघ शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्गचिन्तामणि
१२४.विजयाङ्ग सप्तमी	माघ शुक्ल सप्तमी	चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्यपुराण
१२५ विधान द्वादश सप्तमी	माघ शुक्ल सप्तमी से प्रारम्भ	आदित्यपुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि

१२६ विधान सप्तमी	माघ शुक्ल सप्तमी से प्रारम्भ	काल विवेक, वर्षक्रिया कौमुदी तिथितत्व, कृत्यतत्व
१२७ विशोक षष्ठी	माघ शुक्ल षष्ठी	भविष्योत्तर पुराण, कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि
१२८ विशोक सक्रान्ति	जब अयन दिन या दिन के साथ व्यतीपात योग हो	स्कन्दपुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि
१२६ विशोक सप्तमी	सूची मे कालोल्लेख नही है।	चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्यपुराण, मत्स्यपुराण, पद्म पुराण
१३० विष्णु त्रिमुर्ति व्रत	ज्येष्ठ शुक्ल तृतीया	विष्णुधर्मोत्तर पुराण
१३१ व्योम व्रम	कालोल्लेख नही है।	चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्यपुराण
१३२ व्योम षष्ठी	कोलोल्लेख नही है।	भविष्यपुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि
१३३ शकरार्कव्रत	रविवार को पडने वाली अष्टमी	श्रोत उल्लेख नही है।
१३४ शर्करा सप्तमी	चैत्र शुक्ल सप्तमी	मत्स्यपुराण, पद्मपुराण, कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्ताणि भविष्योत्तरपुराण, कृत्यरत्नाकर
१३५ शाक सप्तमी	कार्तिक शुक्ल सप्तमी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि, कृत्यरत्नाकर, भविष्य पुराण
१३६ शुभ सप्तमी	आश्विनी शुक्ल सप्तमी	मत्स्यपुराण, कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्ग चिन्तामणि, पद्मपुराण
१३७ षष्ठी व्रत	षष्ठी या सप्तमी को	चतुर्वर्गचिन्तामणि, ब्रह्मपुराण

व्रत	समय	स्रोत
१३८ सप्तमी स्नापन्	नष्ट सन्तान वाली नारी के उत्पन्न हुये शिशु के सातवे मास या शुक्ल सप्तमी पर	मत्स्यपुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि
१३६ सप्तसप्तमी कल्प	शुक्ल पक्ष मे किसी रविवार को जब सूर्य उत्तरायण प्रारभ करे पुरूषवाची नक्षत्र हो	कृत्यकल्पतरू, भविष्यपुराण चतुर्वर्ग–चिन्तामणि
१४० सभोग व्रत	दो प्रथम एव दो पचमी तिथियो पर	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि भविष्य पुराण
१४१ सर्वाप्ति सप्तमी	माघ कृष्ण सप्तमी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्य पुराण
१४२ सर्पष सप्तमी	सप्तमी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्य पुराण
१४३ सुजन्मावाप्ति व्रत	जब सूर्य मेष राशि मे प्रवेश करता है	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्य पुराण
१४४ सित सप्तमी	मार्गशीर्ष शुक्ल सप्तमी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि, विष्णुधर्मोत्तर पुराण
१४५ सिद्धार्थकादि सप्तमी	माघ या मार्गशीर्ष शुक्ल सप्तमी	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्य पुराण
१४६ सूर्यरथ महात्म्य	माघ, रविवार को पडने वाली षष्ठी या सप्तमी को	भविष्य पुराण

१४७ सूर्य नक्त व्रत	रविवार	मत्स्यपुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि
१४८ सूर्यपूजा प्रशंसा	सप्तमी	विष्णु धर्मोत्तर, भविष्यपुराण
१४६ सूर्य व्रत	१ षष्ठी, सप्तमी	कृत्यकल्पतरू
	२ माघ मास	मत्सुपुराण, पद्मपुराण, कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि
	३ रविवार	विष्णुधर्मोत्तर पुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि
	४ चैत्र शुक्ल षष्ठी सप्तमी	विष्णु धर्मोत्तर पुराण
	५ मार्गशीर्ष मास	सौर धर्म, चतुर्वर्गचिन्तामणि
	६ पौष पर्यन्त	कृत्यरत्नाकर, भविष्यपुराण
१५० सूर्य षष्ठी	भाद्र शुक्ल षष्ठी	चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्थ पुराण, निर्णय सिन्धु
१५१ सूर्याष्टमी	रविवार, शुक्ल अष्टमी	चतुर्वर्गचिन्तामणि
१५२ सौभाग्य सक्रान्ति	व्यतीपात वाले अयन या विषुव दिन या सक्रान्ति	चतुर्वर्गचिन्तामणि, स्कन्दपुराण
१५३ सौम्य विधि	रविवार को रोहिणी नक्षत्र हो	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि

१५४ सौरात्रिविक्रमव्रत	कार्तिक से प्रारम्भ नक्षत्र हो	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि, भविष्य पुराण
१५५ सौर नक्षत्र व्रत	हस्तनक्षत्र के साथ रविवार	चतुर्वर्गचिन्तामणि, नृसिह पुराण
१५६ सौर व्रत	सप्तमी	मत्स्यपुराण कृत्यरत्नाकर पद्मपुराण, चतुर्वर्गचिन्तामणि
१५७ स्त्री पुत्रकामावाप्ति	कार्तिक मास मे किया जाने वाला मास व्रत	भविष्यपुराण,कृत्यरत्नाकर, चतुर्वर्ग–चिन्तामणि
१५८ हृदय विधि	मार्गशीर्ष मास से प्रारभ	कृत्यकल्पतरू, चतुर्वर्गचिन्तामणि

उक्त सूची मे वर्णित व्रतोत्सवो के अतिरिक्त कुछ ऐसे भी सौर व्रतोत्सव हे, जिनका वर्णन सूची मे नही किया गया है– यथा नयनप्रद सप्तमी, सूर्य सक्रान्ति, त्रिसप्तमी, नराव्रत, पुरश्चरण व्रत, सूर्यग्रहण, मकर सक्रान्ति, रथयात्रा, ध्वजारोहण आदि।

प्रमुख सौर व्रत ये है– कल्याण सप्तमी, विशोक सप्तमी, शर्करासप्तमी, कमल सप्तमी, मन्दार सप्तमी, शुभ सप्तमी और सूर्य सक्रान्ति[1]।

कल्याण सप्तमी व्रत, विजय सप्तमी व्रत के नाम से भी जानी जाती है। यह व्रत शुक्लपक्ष के सातवे दिन रविवार को पडता है। इस व्रत मे व्रत रहने वाले को सर्वप्रथम गाय के दूध से स्नान करना चाहिए। इस व्रत मे फूल, चन्दन, श्वेतवस्त्र, सुगन्धित धूप, भक्ष्य, कच्ची चीनी, नमक और फलो आदि से सूर्योपासना की जाती है। कमल की आठ पखुडियो पर सूर्य देव के आठ चित्र खीचे जाते है। इन आठ चित्रो वाले सूर्य देवो की उनके आठ नामो (तपन, मार्तण्ड, दिवाकर, विधातृ, वरूण, भास्कर, विक्रान्त और रवि) वाले मन्त्रोचारण से पूजा की जानी चाहिए। मत्र इस प्रकार है–

तपन्य नम मार्ताण्डय नम

भास्करय नम विक्रान्तन्य नम

विधात्या नम वरूणाय नम

विक्रान्त नम रविये नम

इन आठ चित्रो वाले सूर्य से पूर्वी, दक्षिण पूर्वी, दक्षिणी, दक्षिण–पश्चिमी, पश्चिमी, उत्तर पश्चिमी, उत्तरी और उत्तरपूर्वी दिशाओ का उद्गम हुआ। आरभ, मध्य तथा अन्त मे सूर्य परमात्मा[2] के रूप मे उपासित थे। यह व्रत ब्राह्मणो के दान के साथ समाप्त होता था। इस व्रत का फल रोग से स्वतन्त्रता, सभी पापो से मुक्ति और समृद्धि तथा दीर्घायु की प्राप्ति था।[3]

माघ माह मे शुक्ल पक्ष के छठे औ सातवे दिन विशोक सप्तमी व्रत[4] पडता हे। छठे दिन व्रत रहने वाले को तिल से स्नान करना चाहिए ओर उपवास तथा ब्रह्मचर्य रहना

---

1 श्रीवास्तव, वी०सी०, पुराणिक रिकार्डस एण्ड सनवर्शिप, पुराणम् १९६१ पृ० २४१

2. मत्स्यपुराण, ७४.१५

3. वही० ७४.१६

4 मत्स्यपुराण, ७५, महाभारत ३–३ ६४

चाहिए। प्रात उठने के पश्चात् स्नान सातवे दिन उसे मौन रहना चाहिए। बिना नमक और तेल के भोजन करना चाहिए, कमल तथा वस्त्र आदि को भिक्षा मे देना चाहिए। इससे व्रत रहने वाला[1] दस पद्म की अवधि तक सभी प्रकार के कष्टो और रोगो से मुक्त हो जाता है। जो व्यक्ति इस व्रत को बिना किसी चाह के रहता है उसका ब्रह्म[2] के साथ एकीकरण हो जाता है। इस व्रत मे की जाने वाली प्रार्थना से सूर्य के प्रति[3] उसके शाश्वत विश्वास की झलक मिलती है।

मार्गशीर्ष माह मे शुक्ल पक्ष के सातवे दिन फलसप्तमी व्रत[4] सम्पन्न किया जाता है। इस व्रत मे सुनहली सूर्य प्रतिमा, सुनहले कमल और सूर्य के विभिन्न नामो यथा–भानु, अर्क, रवि, ब्रह्म सूर्य, शक्कर, हरि शिव, विभावसु, त्वस्ता, वरूण, से उपासना की जाती है। इस व्रत का अनुसरण करने वाला व्यक्ति रोगो से मुक्ति और समृद्धि प्राप्त कर लेता है तथा अन्त मे सूर्य लोक की प्राप्ति हो जाती है। इस व्रत मे सूर्य देव का समीकरण ब्रह्म, इन्द्र, विष्णु, शिव और वरूण से किया गया है। इससे सूर्य देव की सर्वोच्चता सिद्ध होती है।

वैशाष माह मे शुक्ल पक्ष के सातवे दिन शर्करा सप्तमी व्रत[5] सम्पन्न होता हे। इस व्रत मे सूर्य के सम्मान मे वेदी पर एक कमल बनाया जाता है और सवितृ का पवित्र मन्त्रोच्चारण किया जाता है तथा सुगन्धित पदार्थ अर्पित किये जाते थे। यह व्रत पुत्र, पौत्र तथा मुक्ति प्राप्त हेतु रहा जाता है।

---

1 मत्स्यपुराण, ७५, महाभारत ७५ ४ ११

2 वही० ७५ १२

3 वही० ७५ ४

4 मत्स्यपुराण अध्याय ७६

5 वही० ७७

माघ माह के सातवे दिन मदार सप्तमी व्रत[1] रहा जाता है। इस व्रत मे सुनहली सूर्य प्रतिमा की उपासना, कमल के आठ पखुडियो पर अकित सूर्य के आठ नामो–भास्कर (पूर्व के देव), सूर्य (दक्षिण–पूर्व के देव), अर्क (दक्षिण के देव), अर्यमा (दक्षिण–पश्चिम के देव), पूषन (पश्चिम के देव) और आनन्द (उत्तर पूर्व के देव) से की जाती है। इस व्रत की प्रमुख विशेषता मदार के फूलो से सूर्योपासना है। यह व्रत सभी पापो से मुक्ति हेतु रहा जाता है।

शुभ सप्तमीव्रत[2] मे सोन के बैल और सोने की गाय की पूजा पुष्प सुगन्धित पदार्थ और अर्यमा प्रियतम् मत्र से की जाती है।

सूर्य सक्रान्ति व्रत[3] सम्पात के दिन (२१ मार्च तथा २३ सितम्बर का दिन) रहा जाता है। इस व्रत मे जल का अर्ध्य, चन्दन और पुष्प अर्पण का विधान है। जो व्यक्ति यह व्रत रहता है वह इन्द्रलोक मे देवताओ द्वारा सम्मानित किया जाता है।

इन व्रतो के अतिरिक्त रविवार को बारह पखुडियो वाले कमल पर लाल चन्दन[4] से सूर्य का अकन कर उपासना का विधान है। व्रती पूरब मे नमस्कार करने के पश्चात् सूर्य की स्थापना करता हे। दिवाकर को दक्षिण पूर्व, विवस्वान को दक्षिण, भग को दक्षिण–पश्चिम, वरूण को पश्चिम, महेन्द्र को उत्तर पश्चिम, आदित्य को उत्तर और रानितृ को उत्तर पूर्व वाले कमल दल पर रवि और कमल के मध्य कोष मे भास्कर को अकित किया जाता है। यहॉ वह सृष्टि की आत्मा, ऋग, साम और यजुस वेदो के आधार रूप मे वर्णित हैं। जो व्यक्ति इस कर्मकाण्ड को सम्पादित करता है वह सभी पापो से मुक्त हो

---

1 वही० ३६

2 मत्स्यपुराण, अध्याय ८०

3. वही० ६८

4 वही० ६७५–६

जाता है। उसे सूर्य लोक की प्राप्ति होती है। विष्णु पुराण[1] मे सूर्योपासना को प्रत्येक गृहस्वामी का कर्त्तव्य बताया गया है। सूर्योपासना मे आचमन, अर्ध्य और उनके विभिन्न नामो–विवस्वत, सवितृ ओर विष्णु आदि से मन्त्रोच्चारण किया जाता है। सूर्यव्रत शिव[2] द्वारा वर्णित साठ व्रतो से एक है।

इन सभी सौर व्रतो मे कई सर्वनिष्ठ विशेषताएँ हैं जैसे–सूर्य देव के प्रतीक रूप मे सुनहले कमल का प्रयोग, लाल पुष्पो से उपासना, सूर्य के विभिन्न नामो वाला मन्त्रोच्चारण और व्रत रहना आदि।

बिहार का छठ ब्रत–

छठ व्रत वर्ष में दो बार पडता है। दोनो अवसरो पर चार दिनो तक चलता हैं। प्रथम दिन बरौन या स्नान–खान–दिन, दूसरा दिन लोहर, तीसरा दिन उपवास ओर चोथा दिन जनभाषा मे पारन कहा जाता है।

कार्तिक और चैत्र माह की अर्द्ध शुक्लपक्ष का चौथा दिन छठव्रत का बरोन दिन हे। इस दिन पर्वेत (छठ व्रत रहने वाला) साय तक उपवास रह कर ओर पवित्र नदी या तालाब मे नहाकर अपने शरीर को स्वच्छ करता है। वे अपने मुख को धोने ओर डुबकी लगाने के लिए आम या अमरूद की छडी लेकर, साय करीब तीन–चार बजे नदी या तालाब को जाते हैं। स्नान करने जाते समय वे छठ गीत गाते है। स्नान करके वह सूर्य देव को जल देता और प्रणाम करता है। स्नान के सभी धार्मिक कृत्य सम्पन्न हो जाने पर पर्वेता भोजन पकाने हेतु कुछ जल ले आता है। भोजन, पीतल या कासे या मिट्टी के वर्तनो मे पकाया जाता है। भोजन मे भुजिया चावल, चने की दाल और आलू या लोकी की सब्जी बनाते है। वे, सब्जी मे केवल हल्दी डालते है। दाल, शुद्ध घी मे पकाया जाता है। जब भोजन पक जाता है तो पर्वेता उनको पीतल या कासे या पत्ते की प्लेट मे बॉट देते हैं। पर्वेता, रात मे जमीन या कम्बल या चटाई पर सोते है।

---

1 विष्णु पुराण ३२३६४०

2 मत्स्यपुराण सी॰आई॰, ६३

कार्तिक और चैत्र माह की अर्द्ध शुक्लपक्ष की पॉचवी तिथि को छठ व्रत का लोहर दिन पडता है। इस दिन पर्वैता साय तक पूर्ण उपवास रहता है। लोहर के दिन बनने वाले प्रसाद मे खीर और रोटी प्रमुख है। खीर, दूध, चीनी और सूखे फल के टुकडो मे पकायी जाती है। रोटी, गेहूँ के आटे से बनती है। प्रसाद को मिट्टी के नये चूल्हे पर पकाया जाता है। पकाने के लिए आम, अमरूद, जामुन की लकडी और चेप (ईख) ईंधन के रूप मे प्रयुक्त होता है। जब प्रसाद पक जाता है तो पर्वैता परिवार के सभी लोग लोहर के प्रसाद को ग्रहण करने के लिए गाय की गोबर से अच्छी तरह साफ स्थान पर बेठते हैं। प्रसाद ग्रहण करने से पूर्व पर्वैता कुछ प्रसाद को निकाल देते हैं जिसे अग्रासन कहा जाता है। अग्रासन पुत्रो या बछियो को दे दिया जाता है। गॉवो मे ऐसे लोगो की जिनके यहॉ छठ व्रत नही मनाया जाता है, लोहर दिन के प्रसाद को पाने के लिए आमन्त्रित किया जाता है ऐसा विश्वास है कि अधिक से अधिक लोगो मे प्रसाद बॉटने से सूर्य देव एव छठ माता प्रसन्न होकर पर्वैत की इच्छा की पूर्ति करते हैं।

चैत्र और कार्तिक माह की अर्द्धशुक्ल पक्ष का छठॉ दिन छठव्रत का उपवास दिन होता है। यह दिन छठ व्रत का सर्वाधिक शुभ दिन माना जाता है। इस दिन पर्वैता सारे दिन और रात पूर्ण उपवास रखता है। इस दिन छिपते सूर्य को अर्ध्य दिया जाता है। प्रसाद एक नये कलरूप मे रखा जाता है। अर्ध्य नदी या तालाब के किनारे दिया जाता है। अर्ध्य ब्राह्मण की सहायता से सम्पन्न होता है। अर्ध्य गाय के दूध या नदी/तालाब के जल से दिया जाता है। ब्राह्मण, दूध या जल से युक्त लोटा लेता हे और भक्तो के समक्ष जल मे प्रवेश करता है। पुरोहित सरकृत श्लोक का उच्चारण करता हे और कलसूप पर दूध या पानी उडेलता है। पर्वैता सूर्य देव को प्रणाम करने के लिए नतमस्तक होता है। वे अपने मन मे सूर्य देव और छठी माता का स्मरण करते हैं ओर अर्ध्य स्वीकार करने की विनती करते हैं। अर्ध्य देने मे पर्वैत बारह बार घूमते है। प्रत्येक बार जब वे सूर्य देव के सामने होते हैं तो वे अपना सिर झुकाते हैं और ब्राह्मण कलसूप पर दूध या पानी डालता है। पुरूष और पर्वैत के घूमने मे भिन्नता है। पुरूष पर्वैता दाये से बाये और स्त्री पर्वैता

बाये से दाये घूमते हैं। इस परम्परा मे यह विश्वास है कि स्त्री, दाम्पत्य जीवन का बाया अग और पुरूष दाया अग है। जब अर्ध्य सम्पन्न हो जाता है तो पर्वेता सूर्यदेव को दीप दिखाता है। कलसूप को दौरा मे रखकर और कलसूप पर दीप रख कर छठगीत गाते हुए पर्वेता अपेन घर को लौट जाते हैं।

सातवॉ दिन छठ व्रत का पारन दिन होता है। सूर्योदय से पूर्व पर्वैता ओर उसके परिवार के लोग घाट पर जाते हैं। घाट पहुचकर पर्वैत मिट्‌टी का दीप जलाते है। पर्वेता और अन्य स्त्रियॉ छठ गीत गाती हैं। छठ गीत के माध्यम से वे सूर्य देव और छठ माता से अपनी विभिन्न इच्छाओ की पूर्ति की पुनरावृत्ति करते है। यह कर्मकाण्ड घाट जागना के रूप मे जाना जाता है। पर्वैता, नदी या तालाब मे डुबकी लगाते है। जब उनका धार्मिक स्नान पूरा हो जाता हे तो पूरब की ओर अपना हाथ जोडते हैं, अपनी आखे बन्द रखते है और अपना सिर झुकाते है। वे ध्यान से सूर्य देव की प्रार्थना करते है और उनसे अध–र्य स्वीकार करने, प्रकट होने तथा अपनी कामना पूर्ति हेतु प्रार्थना करते है। सूर्य के उगते ही अर्ध्य सम्पन्न होता है। जब सुबह का अर्ध्य पूरा हो जाता है तो हवन करके छठ व्रत की समाप्ति हो जाती है। पर्वैता का विश्वास है कि अग्नि और वायु देव, सूर्य देव ओर छठी माता से उनका सदेश कहेगे। हवन, छठव्रत की समाप्ति को इगित करता है।

वामनपुराण मे महोदय[1] मे मनाये जाने वाले सूर्योत्सव का उल्लेख है। साम्बपुराण से सौर त्यौहारो के अवसर पर रथयात्रा[2] के आयोजन की जानकारी प्राप्त होती हे। इसमे सम्वत्सरिपूजा[3] का भी उल्लेख है जिसमे वर्ष मे एक बार बडे पैमाने पर रथयात्रा का अयोजन किया जाता था। भविष्यपुराण मे[4] सूर्योपासना से सम्बन्धित त्यौहारो मे रथयात्रा

---

1 अग्रवाल, वी०एस०, दी वामन पुराण ए स्टडी, इन्ट्रोडक्सन पृ० १२

2 साम्बपुराण अध्याय ४२

3 वही० अध्याय ३४

4 भविष्य पुराण, अध्याय ५०,५२,५३,५५,५६,५७,५८

का उल्लेख है इसमे सूर्य प्रतिमा को रथ और माला तथा कुमकुम आदि से पूर्णत अलंकृत घोडो[1] पर रख दिया जाता था। रथ भी स्वय मे पूर्णत सुसज्जित होता था। राज्ञी और निक्षुभा नामक दो पत्नियॉ[2] क्रमश सूर्य के दाये और बाये रख दी जाती थी। सूर्य देवता स्वर्णनिर्मित छत्र और दण्ड से युक्त ओर पूर्णत सुसज्जित होते थे। मुख्य देवता[3] के पीछे एक गरूड का चित्र दिखाई देता था। देव प्रतिमा को ३१६ ब्राह्मण भक्त[4] रथ पर रखते थे। मुख्य रथ के साथ[5] अनुचरो और अन्य सौर देवताओ के रथो का जुलूस साज–सज्जा और वाद्ययत्रो की ध्वनि[6] के साथ शहर के मुख्य मार्ग से गुजरता था। रथ केवल व्रती ब्राह्मणो, क्षत्रियो और वैश्यो द्वारा खीचा जाता था। शूद्र, शराबी तथा अन्य देवताओ के भक्त[7] इसे नही खीचते थे। इस त्यौहार मे सूर्य देव के सम्मान मे[8] लोग व्रत रहते, दान और उपहार देते थे।

असम का <u>बिहू त्यौहार</u> सूर्य की गति से[9] सम्बन्धित है। यह प्रादेशिक त्यौहार सपूर्ण असम मे मनाया जाता है। बिहू शब्द 'विशुवत' शब्द से सम्बन्धित हे जो गोवमयवम् नामक वैदिक यज्ञ से सम्बन्धित है। असम मे आज तीन बिहू त्यौहार–भाग, माघ ओर काति,

---

1 वही० अध्याय ५५, श्लोक ६२–६३

2 वही० श्लोक ७६

3 वही० अध्याय ५५, श्लोक ७६

4 वही० श्लोक ७५

5 वही० अध्याय ५६

6 वही० अध्याय ५५ श्लोक ४४–४७

7 वही० अध्याय ५५ श्लोक ८४–८६

8 वही० अध्याय ५० श्लोक २०–२१

9 शर्मा, दशरथ, <u>रिलीजियस फेयर एण्ड फेस्टिवल्स आफ असम</u>, जर्नल आफ असम रिसर्च सोसाइटी, जिल्द XVII 1968 (कामरूप अनुसधान समिति)

का उल्लेख हैं इसमे सूर्य प्रतिमा को रथ और माला तथा कुमकुम आदि से पूर्णत अलंकृत घोडो[1] पर रख दिया जाता था। रथ भी स्वय मे पूर्णत सुसज्जित होता था। राज्ञी और निक्षुभा नामक दो पत्नियॉ[2] क्रमश सूर्य के दाये और बाये रख दी जाती थी। सूर्य देवता स्वर्णनिर्मित छत्र और दण्ड से युक्त ओर पूर्णत सुसज्जित होते थे। मुख्य देवता[3] के पीछे एक गरूड का चित्र दिखाई देता था। देव प्रतिमा को ३१६ ब्राह्मण भक्त[4] रथ पर रखते थे। मुख्य रथ के साथ[5] अनुचरो और अन्य रौर देवताओ के रथो का जुलूस साज–सज्जा और वाद्ययत्रो की ध्वनि[6] के साथ शहर के मुख्य मार्ग से गुजरता था। रथ केवल व्रती ब्राह्मणो, क्षत्रियो और वैश्यो द्वारा खीचा जाता था। शूद्र, शराबी तथा अन्य देवताओ के भक्त[7] इसे नही खीचते थे। इस त्यौहार मे सूर्य देव के सम्मान मे[8] लोग व्रत रहते, दान और उपहार देते थे।

असम का <u>बिहू त्यौहार</u> सूर्य की गति से[9] सम्बन्धित है। यह प्रादेशिक त्योहार सपूर्ण असम मे मनाया जाता है। बिहू शब्द 'विशुवत' शब्द से सम्बन्धित हे जो गोवमयवम् नामक वैदिक यज्ञ से सम्बन्धित है। असम मे आज तीन बिहू त्यौहार–भाग, माघ और काति,

---

1 वही० अध्याय ५५, श्लोक ६२–६३

2 वही० श्लोक ७६

3 वही० अध्याय ५५, श्लोक ७६

4 वही० श्लोक ७५

5 वही० अध्याय ५६

6 वही० अध्याय ५५ श्लोक ४४–४७

7 वही० अध्याय ५५ श्लोक ८४–८६

8 वही० अध्याय ५० श्लोक २०–२१

9 शर्मा, दशरथ, <u>रिलीजियस फेयर एण्ड फेस्टिवल्स आफ असम</u>, जर्नल आफ असम रिसर्च सोसाइटी, जिल्द XVII 1968 (कामरूप अनुसधान समिति)

मनाया जाता है। इन तीनो मे भाग बिहू को रगलि, माघ बिहू को भोगलि और काति बिहू को कगलि बिहू कहा जाता है। स्पष्ट है कि असम मे तीनो सक्रान्ति पर तीन बिहू मनाये जाते है। महविष्णुव सक्रान्ति पर रगलि बिहू, जलविष्णुव सक्रान्ति पर कगलि बिहू ओर उत्तरायण सक्रान्ति पर भोगलि बिहू मनाया जाता है। ये सूर्योपासना और आदित्योपासना से सम्बन्धित हैं।

षष्ठी उपासना का बारह रूप[1] आदित्योपासना का महत्वपूर्ण और लोकप्रिय अग हे। आदित्य और षष्ठी उपसना मे कुछ सम्बन्ध दिखायी देता है। षष्ठी उपासना का एक रूप वर्ष के प्रत्येक महीने मे पडता है।

१	वैषाख	दुल्ह षष्ठी
२	ज्येष्ठ	अरण्य जगल षष्ठी
३	असाढ	कोद षष्ठी
४	श्रावन	लोटन षष्ठी
५	भाद्र	मन्थन षष्ठी
६	अश्विन	दुर्ग षष्ठी
७	कार्तिक	गोट षष्ठी
८	अग्राहन्या	मूल षष्ठी
६	पौष	पतै षष्ठी
१०	माघ	सितल षष्ठी
११	फाल्गुन	अशोक षष्ठी
१२	चैत्र	निल षष्ठी

1 श्रीवास्तव, एम०सी०पी०, मदर गाडेज इन इडियन आर्ट आर्कियोलाजी एण्ड लिटरेचर पृ० १७१–१७५ आगम कला, देहली

मनाया जाता है। इन तीनो मे भाग बिहू को रगलि, माघ बिहू को भोगलि और काति बिहू को कगलि बिहू कहा जाता है। स्पष्ट है कि असम मे तीनो सक्रान्ति पर तीन बिहू गनाये जाते है। महविष्णुव सक्रान्ति पर रगलि बिहू, जलविष्णुव सक्रान्ति पर कगलि बिहू ओर उत्तरायण सक्रान्ति पर भोगलि बिहू मनाया जाता है। ये सूर्योपासना और आदित्योपासना से सम्बन्धित हैं।

षष्ठी उपासना का बारह रूप[1] आदित्योपासना का महत्वपूर्ण और लोकप्रिय अग है। आदित्य और षष्ठी उपसना मे कुछ सम्बन्ध दिखायी देता है। षष्ठी उपासना का एक रूप वर्ष के प्रत्येक महीने मे पडता है।

१	वैषाख	दुल्ह षष्ठी
२	ज्येष्ठ	अरण्य जगल षष्ठी
३	असाढ	कोद षष्ठी
४	श्रावन	लोटन षष्ठी
५	भाद्र	मन्थन षष्ठी
६	अश्विन	दुर्ग षष्ठी
७	कार्तिक	गोट षष्ठी
८	अग्राहन्या	मूल षष्ठी
६	पौष	पतै षष्ठी
१०	माघ	सितल षष्ठी
११	फाल्गुन	अशोक षष्ठी
१२	चैत्र	निल षष्ठी

---

1 श्रीवास्तव, एम०सी०पी०, मदर गाडेज इन इडियन आर्ट आर्कियोलाजी एण्ड लिटरेचर पृ० १७१–१७५ आगम कला, देहली

यह षष्ठी पूजा बिहार और पूर्वी उ०प्र० मे बडे उत्साह से मनाया जाता है।

अग्राहासन माह, मे बगाल के हिन्दू इतु पूजा या मित्र पूजा[1] करते है। इसमे मित्र की पूजा की जाती है। यह बहुत लोकप्रिय है।

काशी का लोलार्क छठ मेला–

काशी मे दक्षिण दिशा मे असिसगम के समीप लोलार्क विद्यमान है।[2] इस स्थान की विशिष्ट महिमा है। काशी खण्ड के अनुसार अगहन मास के किसी रविवार को सप्तमी या षष्ठी के दिन लोलार्क की वार्षिकी यात्रा द्वारा मनुष्य सब पापो से छूट जाता है। सूर्य ग्रहण के समय यहॉ स्नान दानादि का दशगुना फल होता हे तो माघ मास की शुक्ला सप्तमी के दिन गगा और असि के सगम पर स्थित लोलार्क कुण्ड मे स्नान करके मनुष्य अपने सप्त जन्म मे सचित पापो से मुक्त हो जाता हे।[3] प्रत्येक रविवार को यहॉ दर्शन करने का भी विशेष माहात्म्य है।[4]

लोलार्क कुण्ड की सर्वाधिक प्रसिद्धि भाद्र शुक्लपक्ष मे लोलार्क छठ के आयोजन से सम्बन्धित है। इस अवसर पर सुदूर प्रदेशो एव नेपाल, भूटान, श्रीलका से श्रद्धालु आकर यहॉ स्नान पूजन करते हैं।[5] मान्यतानुसार यहॉ दर्शन करने से नि सन्तानो को पुत्र रत्न की होती है। पहले यहॉ गौनहारियो के दल के दल कजली गाते हुये इकट्ठे होते थे।[6]

---

1 चट्टोपाध्याय, के०, 'स्टडीज इन दी इण्डो रिलीजन एण्ड लिटरेचर पृ० १८५

2 काशीखण्ड, ४६ ६६

3 काशीखण्ड, ४६ ५० ५४,५३

4 काशीखण्ड, ४६ ५६,५७

5 शिवानन्द सरस्वती, काशी मुक्ति निर्णय और काशी का इतिहास, वाराणसी, १९६८, पृ० ६४

6 मोतीचन्द्र, काशी का इतिहास, वाराणसी, १९८५

वर्तमान मे लोलार्क छठ के दिन लगभग एक लाख यात्री २ बजे रात्रि से ही स्नान एव दर्शन करते है। परम्परानुसार जो जैसा वस्त्र पहने हो उसी मे स्नान करें[1]। इस अवसर पर विशेष रूप से स्त्रियॉ ही यहॉ स्नान करके सूर्य को अर्ध्य देती है जिसमे जल, लालफूल लाल चदन एव किसी फल का उपयोग किया जाता है। परन्तु अज्ञानतावश स्त्रियॉ कुण्ड मे ही गीले कपडे छोड देती है। यही नही हाथ की चूडियॉ तोड कर उतार देती है और माथे के सिदूर को रगडकर पोछ देती है। यह वस्तुत सुहागन स्त्रियो के लिए शास्त्र विरूद्ध है। उनकी इस अज्ञानता से कुण्ड का जल ही दूषित नही होता अपितु आस–पास का स्थान भी टूटी चूडियो, गीले कपडो से बेहद गदा हो जाता हे। इससे स्थानीय लोगो को काफी कष्ट उठाना पडता है। कुण्ड मे डाले गये फल एव वस्त्रो का अधिकार मल्लाहो को प्राप्त है। वे ही इस आयोजन के पश्चात् इस कुण्ड की सफाई भी करते है।

देव (औरंगाबाद, बिहार) का छठ मेला–

धार्मिक दृष्टि मे किसी धाम और तीर्थ स्थल पर दर्शको का एकत्रित होना ही मेला कहा जाता है। हिन्दू परम्परा के अनुसार जो स्थल पावन नदी के तट पर स्थित है या किसी प्राचीन मन्दिर वाले समुद्र के किनारे स्थित है अथवा जहॉ प्राचीन तालाब ओर मन्दिर हैं, वे तीर्थ के रूप मे जाने जाते है। प्रत्येक तीर्थ का एक मुख्य देवता होता है। जिनके नाम पर उस विशेष धाम या तीर्थ का नामकरण कर दिया जाता है जबकि वहॉ हिन्दू धर्म से सम्बन्धित अन्य देवता भी देखे जा सकते है। धाम की यात्रा करना न केवल सासारिक कामनाओ की पूर्ति के लिए बल्कि मृत्यु के पश्चात् के जीवन मे मोक्ष और स्वर्ग प्राप्त करने के लिए भी हितकर माना जाता है। कुछ विशेष अवसरो पर किसी विशेष धाम पर दर्शको का एकत्रित होना ही मेला कहा जाता है।

---

1 शिवानन्द सरस्वती, काशी मुक्ति निर्णय और काशी का इतिहास, वाराणसी १६६८, पृ० ६४

देव नामक स्थल पर सूर्यदेव का एक प्राचीन मन्दिर और तालाब है और यह देव–सूर्य धाम या देव सूर्य तीर्थ के रूप मे जाना जाता है। यह मध्य भारत के प्राचीन स्थलो मे से एक है जो सूर्य तीर्थ यात्रा केन्द्र के रूप मे प्रसिद्ध है। यद्यपि कुछ अवसरो जैसे प्रत्येक रविवार, चैतसक्रान्ति, मकर सक्रान्ति, बसत पचमी के दिन ओर सूर्यग्रहण के अवसर पर छोटे स्थानीय स्तर के मेले आयोजित किये जाते है लेकिन दो बडे (चैत–कार्तिक) छठ व्रतो के अवसर पर लाखो आगन्तुक न केवल बिहार के विभिन्न भागो से बल्कि उनमे से अधिकाश लोग उ०प्र० के पूर्वी भागो, म०प्र० और पश्चिमी बगाल से आते हैं। बिहार और उ०प्र० से सम्बन्धित भक्तो की परम्परा के अनुसार राजा अैल के समय से ही उनके पारिवारिक सदस्य देव का दर्शन करते रहे है लेकिन पश्चिमी बगाल ओर म०प्र० से आने वाले भक्त कहते हैं कि उनके पूर्वज प्राचीन गया, पटना ओर आरा जिलो के निवासी थे। यद्यपि वे उन राज्यो मे दो या अधिक पीढियो से बसे है लेकिन देव की तीर्थ यात्रा और छठ व्रत का सम्पादन करते हैं।

चैत और कीर्तिक छठ व्रत के अवसर पर देव का छठ मेला पडता है। यह मेला छह दिनो तक चलता है। यह मेला छठ व्रत के दो दिन पूर्व और दो दिन पश्चात् से ही प्रारभ हो जाता है। आगन्तुक अपने विभिन्न उद्देश्यो से मेला प्रारम्भ होने के एक सप्ताह पूर्व देव नामक स्थान पर आने लगते हैं। वे सामान्यत सरकारी कर्मचारी और दुकानदार है। पर्वैत और उनके पारिवारिक सदस्य सामान्यत छठ व्रत के दूसरे दिन अर्थात् लोहर दिन पर अधिकाश सख्या मे भक्त जन देव नामक स्थान पर पहुॅचते हे। वे अपने घरो मे बरौन से सम्बन्धित कर्मकाण्ड सम्पादित करते है। स्थानीय पर्वेत भी सध्-याकालीन अर्ध्य देने के ठीक पहले देव नामक स्थल पर आते है। वे अपने घरो मे बरोन और लोहर दिन का धार्मिक कृत्य सम्पादित करते है लेकिन देव के सूर्यकुण्ड मे अर्ध्य देते है। छठ व्रत के तीसरे दिन अर्थात उपवारा दिन के अवसर पर दर्शको की अपार भीड होती है। इस प्रकार यही छठ मेला है जिसके लिए देव सूर्य धाम राष्ट्रीय स्तर पर जाना जाता है। यह वही स्थल हे जहॉ भारत का महानतम छठ मेला लगता हे।

परम्पराओ से, राजा अैल के समय से देव नामक स्थल पर छठ मेला की घटना का प्रमाण प्राप्त होता हे। स्थानीय शासित हिन्दू राजा भेरवेन्द्र के पूर्वज भी देव के छठ मेला के सम्बन्ध मे सकारात्मक भूमिका निभाई। भैरवेन्द्र के पश्चात् देव–राज भी छठ मेला और उसके दर्शको को प्रोत्साहन प्रदान किये। परमपराएँ बताती है कि देवराज ओर रानियॉ देव के विभिन्न वस्तियो, जहॉ दर्शक शरण लेते थे, का निरीक्षण किया करते थे। उन लोगो ने दर्शको को अधिकतम सुविधा प्रदान करने के लिए अपना पूरा प्रयास किया। वे देव के छठ मेला के अवसर पर विभिन्न दुकानदारो को प्रोत्साहित भी करते थे। टकरि (गया जिला) के राजा, रामगढ और जगदीशपुर (भोजपुरा जिला) के राजा भी छठ मेला के अवसर पर देव का दर्शन किया करते थे। देव का राजा उनके सम्मान मे रात्रि ड्रामा ओर नाटको का आयोजन किया करता था। अभिनेता और अभिनेत्रियॉ उन राजाओ द्वारा दिये गये अच्छी नगद धन राशि द्वारा प्रोत्साहित किये जाते थे। दुकानदारो को देव के राजा को कर के रूप मे कुछ भी नही देना होता था। लेकिन आजकल जिला प्रशासन दोनो अवसरो (चैत्र–कार्तिक) पर देव के छठ मेला की निलामी करता हे।

❀❀❀

अध्याय – आठ

सारांश

अध्याय–आठ

सारांश

प्राकृतिक तत्वो मे सूर्य मनुष्य के लिए सर्वाधिक महत्वपूर्ण थे। इसी कारण केवल भारत ही नही वरन विश्व की अन्य सभी प्राचीन सम्यताओ (मिस्र, यूनान, मेसोपोटामिया) मे भी सूर्योपासना के प्रमाण प्राचीन काल से ही मिलते है। सूर्य, रात–दिन के निर्माता, प्रकाश, गर्मी जीवन दाता तथा खाद्यपदार्थो के उत्पादक के रूप मे हर युग मे उपासित रहे है। प्रागैतिहासिक चित्रो और अभिरेखन मे चिपटी वृत्ताकार तश्तरी, विन्दु, तारे और स्वस्तिक आदि सौर प्रतीको के चित्रण प्राप्त हुए है। आद्यैतिहासिक काल के प्राप्त विभिन्न वर्तनो, मुहरो, ताबीजो, मनको पर सूर्य का चित्रण है। इस युग मे सूर्य पूजा का भौगोलिक विस्तार समस्त उत्तरी भारत मे जान पडता है। दक्षिण भारत मे भी प्रमाण मिले हैं। वैदिक साहित्य मे सूर्योपासना एव सूर्य के अनेक स्वरूपो का सन्दर्भ प्राप्त होता है। <u>महाभारत</u> मे वर्णित मुख्य सम्प्रदाय मे सौर सम्प्रदाय की गणना हुई है। <u>रामायण</u> का आदित्य ह्रदय स्तुति सिद्ध करता है कि सौर सम्प्रदाय प्रमुख सम्प्रदायो मे से एक था महाकाव्यो मे स्थान–स्थान पर मानव रूप मे सूर्य का उल्लेख है लेकिन महाकाव्यो मे ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी तक सूर्य की मूर्ति पूजा का प्रमाण नही मिलता है। पुराणो मे भी सूर्य के नामो एव स्वरूपो की चर्चा है। सौर सम्प्रदाय का अस्तित्व प्रारम्भिक बौद्ध साहित्य, जैन साहित्य, पाणिनि तथा पतजलि के उल्लेखो से भी होता है। मौर्य और शुग काल के अवशेषो और अवन्ति से प्राप्त अवशेषो मे सूर्य का मानव रूप मे चित्रण है। मग पुजारियो के प्रभाव से कुषाण–गुप्तकाल मे मूर्तिपूजा का प्रारम्भ हुआ। परिणामस्वरूप सूर्य मूर्तियॉ निर्मित होने लगी। सूर्य की घरेलू पूजा का स्थान विशाल मन्दिरो में सार्वजनिक पूजा ने ले लिया। गुप्तयुग मे मागीपन्थ का भारतीय सौर पूजा पद्धति मे पाचन हुआ। साथ ही इस युग मे मूर्तिपूजा का प्रारम्भिक विकास हुआ जिसका कि पूर्ण प्रादुर्भाव प्रारम्भिक मध्ययुग मे हुआ।

सूर्यपूजा मे फूल, मालाओ, धूप, दीपो का प्रयोग होने लगा, सूर्यमूर्तिया बगाल, उडीसा, बिहार, उत्तर प्रदेश तथा भारत से मिली है। इस प्रकार सौर सम्प्रदाय पूर्वमध्ययुग मे उत्तर भारत के प्रमुख धार्मिक सम्प्रदायो मे से एक था।

भारतीय कला मे सूर्य को प्रतीक और मानव दोनो ही रूपो मे निरूपित किया गया है। आद्यैतिहासिक सभ्यताओ के ठीकरो पर स्वास्तिक, चक्र, किरण युक्त मण्डल और मयूर आदि सूर्य प्रतीको का अकन मिलता है। चक्र, पद्म और रश्मि मण्डल जैसे प्रतीको का अकन आहत मुद्राओ (लगभग छठी शती ई० पू०) पर देखा जा सकता है। सूर्यपूजन की विशेष लोकप्रियता के कारण उत्तर भारत के विभिन्न क्षेत्रो मे सूर्य के कई मन्दिर भी बने जिनमे कालप्रिय, मुल्तान, देव, (औरगाबाद बिहार), लोलार्क (वाराणसी उ०प्र०)कश्मीर, मोढेरा तथा कोणार्क के सूर्य मन्दिर प्रमुख है। सूर्य से सम्बन्धित मिथको का उल्लेख पुराणो मे मिलता है। लगभग सभी पुराणो मे सज्ञा–सूर्य की पौराणिक कथा वर्णित है। पौराणिक काल मे सूर्य को विशेष रूप से कोढ को समाप्त करने वाले देवता के रूप मे वर्णित किया गया है। भविष्य पुराण मे उल्लेख मिलता है कि मयूर ने कोढ से मुक्ति के लिए 'सूर्यशतक' की रचना की थी। साम्ब पुराण की रचना का कारण साम्ब का कुष्ठ रोग ग्रस्त हो जाना कहा जा सकता है। कोढ के चिकित्सक का सूर्य का रूप ब्राह्मण ग्रन्थो मे विकसित हुआ। मगो और भोजको के पौरोहित्य के न्याय सगत ठहराने के लिए साम्ब के कोढ और सूर्योपासना द्वारा उसके उपचार जैसे मिथको को उद्घृत किया गया है। मकर सक्रान्ति का उल्लेख अनेक ग्रन्थो मे मिलता है। जब सूर्य धनुराशि को छोडकर मकर राशि मे प्रवेश करता है तो मकर सक्रान्ति होती है। प्रत्येक सक्रान्ति पवित्र दिन के रूप मे मानी जाती है। ग्रहण के सम्बन्ध मे विशाल साहित्य का निर्माण हुआ है। साम्बपुराण मे सूर्य ग्रहण का वैज्ञानिक विश्लेषण मिलता है।

दूसरी–पहली शती ई० पूर्व से सूर्य की मानव मूर्तियो के उदाहरण मिलने लगते है। ऐसे उदाहरणो मे बोधगया, भाजा, लाला भगत और खण्डगिरि (अनन्तगुम्फा) आदि के

उदाहरण उल्लेखनीय हैं। कालान्तर मे कुषाणकाल मे सूर्य पूजा ओर प्रतिमा पर विदेशी प्रभाव (उपानह, चोलक, अव्यग के रूप मे) भी दिखाई देता है। प्रारभिक उदाहरणो मे सूर्य को एक चक्र और चार अश्वो वाले रथ पर ऊषा, प्रत्यूषा के साथ दिखाया गया हे। सूर्य प्रतिमा निर्माण के शास्त्रीय सदर्भ वृहतसहिता, विष्णुधर्मोत्तर पुराण, विश्वकर्गाशिल्प, अपराजितपृच्छा तथा रूपमण्डन आदि शिल्पशास्त्रो मे प्राप्त होते है। विष्णुर्धोत्तर पुराण के विस्तृत उल्लेख मे कवचधारी सूर्य को चतुर्भुज और उदीच्य वेशधारी बताया गया है। ज्ञातव्य है कि अन्य सभी ग्रन्थो मे सूर्य को द्विभुज बताया गया है, इसी कारण मूर्तियो मे सर्वत्र सूर्य द्विभुज हैं। केवल काशी के १८वी शती ई० की मूर्तियो मे सूर्य चतुर्भुज दिखाये गये हैं। सप्ताश्व रथ पर अरूण सारथि और पार्श्वो मे दण्डी–पिगल और ऊषा–प्रत्यूषा से वेष्टित सूर्य के दोनो करो मे सनाल पद्म दिखाने का विधान मिलता है।

नवग्रहो के पूजन की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। नवग्रह मूर्तियो का निरूपण विष्णुधर्मोत्तर पुराण, मत्स्य पुराण, अग्निपुराण, रूपमण्डन, अपराजित पृच्छा, शिल्परत्न और अशुमदभेदागम मे प्राप्त होता है। आचारदिनकर, निर्वाणकलिका, प्रतिष्ठासार सग्रह जैसे जैन ग्रन्थो मे नवग्रहो मे प्रतिमालक्षण वर्णित हें जो पूरी तरह ब्राह्मण परम्परा से प्रभावित हैं।

रेवन्त सूर्य के पुत्र रूप मे मान्य हैं जो सज्ञा नामक सूर्य की पत्नी से उत्पन्न हुए थे। रेवन्त की प्रतिमाएँ बगाल, बिहार, उत्तर–प्रदेश, राजस्थान से प्राप्त हुई। विष्णुधर्मोत्तर पुराण मे मात्र यह उल्लेख प्राप्त होता है कि रेवन्त को सूर्य की भॉति चित्रित करना चाहिए। मार्कण्डेयपुराण मे रेवन्त को खड्गी, धन्वी, तनुत्रधृक, अश्वारूढ तथा वाण–तूणीर समन्वित इत्यादि विशेषणो से अभिहित किया गया है।

सभवत द्वादशादित्य परम्परा का उद्भव वैदिक काल मे हुआ जो महाकाव्यो, स्मृतियो, पुराणो और निवन्धो के काल मे भी विद्यमान था। यह आज भी कुछ रूपो मे

विद्यमान है। कला मे इसकी अभिव्यक्ति गुप्तकाल रो लेकर प्राचीन काल की रामाप्ति तथा और भी बाद तक जारी रही। वाराणसी मे यह परम्परा कापी सुदृढ थी। कृत्यकल्पतरू मे केवल एक आदित्यपीठ लोलार्क का उल्लेख है, परन्तु काशीखण्ड मे चौदह आदित्यपीठो का विस्तृत वर्णन है, जिनके अलग–अलग माहात्म्य है।

सौर धर्म मे व्रतोत्सवो का महत्व इस दृष्टि से अधिक है कि सौर धर्म आज मृतप्राय सा है। सूर्य मूर्तियो, मन्दिरो का निर्माण नही के बराबर हो रहा है। व्रतोत्सव ही सोर धर्म का ऐसा पक्ष है जिसके माध्यम से सौर धर्म आज जिन्दा है। पहली बार मत्स्यपुराण के कुछ बाद के अध्यायो मे सौर व्रतो का वर्णन किया गया है। इस कोटि के अध्याय ७४–८० है। इन अध्यायो मे कल्याण सप्तमी विशोक सप्तमी, शर्करा सप्तमी, कमल सप्तमी, मदार सप्तमी, शुभ सप्तमी, सूर्य सक्रान्ति आदि व्रतो का वर्णन है। इसके उपरान्त पद्म, स्कन्द, ब्रह्म, भविष्य, वराह आदि पुराणो साम्ब, विष्णुधर्मोत्तर, कालिका आदि उपपुराणो मे सेकडो सौर व्रतो का उल्लेख आया है। जिनसे उद्धरण लेकर चतुर्वर्गचिन्तामणि, कृत्यकल्पतरू, वर्षक्रिया कौमुदी, कृत्यरत्नाकर, धर्मसिन्धु, निर्णयसिन्धु, व्रतराज, व्रतार्क तिथितत्व, समयमयूख, निर्णयामृत, अपरार्क, पुरूषार्थचिन्तामणि आदि मे सौरव्रतो का वर्णन किया गया है। उपलब्ध सौर व्रतो की सख्या लगभग २०० है। सौर व्रतोत्सवो के अध्ययन मे काणे की व्रत सूची को आधार बनाया गया है। साथ ही देव (औरगाबाद, बिहार) और लोलार्क (वाराणसी उ०प्र०) के छठ व्रतो पर विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है।

❀❀❀

विद्यमान है। कला मे इसकी अभिव्यक्ति गुप्तकाल रो लेकर प्राचीन काल की रामाप्ति तथा और भी बाद तक जारी रही। वाराणसी मे यह परम्परा काफी सुदृढ थी। कृत्यकल्पतरू मे केवल एक आदित्यपीठ लोलार्क का उल्लेख है, परन्तु काशीखण्ड मे चौदह आदित्यपीठो का विस्तृत वर्णन है, जिनके अलग–अलग माहात्म्य है।

सौर धर्म मे व्रतोत्सवो का महत्व इस दृष्टि से अधिक है कि सौर धर्म आज मृतप्राय सा है। सूर्य मूर्तियो, मन्दिरो का निर्णाण नही के बराबर हो रहा है। व्रतोत्सव ही सोर धर्म का ऐसा पक्ष है जिसके माध्यम से सौर धर्म आज जिन्दा है। पहली बार मत्स्यपुराण के कुछ बाद के अध्यायो मे सौर व्रतो का वर्णन किया गया है। इस कोटि के अध्याय ७४–८० है। इन अध्यायो मे कल्याण सप्तमी विशोक सप्तमी, शर्करा सप्तमी कमल सप्तमी, मदार सप्तमी, शुभ सप्तमी, सूर्य सक्रान्ति आदि व्रतो का वर्णन है। इसके उपरान्त पद्म, स्कन्द, ब्रह्म, भविष्य, वराह आदि पुराणो साम्ब, विष्णुधर्मोत्तर, कालिका आदि उपपुराणो मे सेकडो सौर व्रतो का उल्लेख आया है। जिनसे उद्धरण लेकर चतुर्वर्गचिन्तामणि, कृत्यकल्पतरू, वर्षक्रिया कौमुदी, कृत्यरत्नाकर, धर्मसिन्धु, निर्णयसिन्धु, व्रतराज, व्रतार्क तिथितत्व, समयमयूख, निर्णयामृत, अपरार्क, पुरूषार्थचिन्तामणि आदि मे सौरव्रतो का वर्णन किया गया है। उपलब्ध सौर व्रतो की सख्या लगभग २०० है। सौर व्रतोत्सवो के अध्ययन मे काणे की व्रत सूची को आधार बनाया गया है। साथ ही देव (औरगाबाद, बिहार) और लोलार्क (ताराणसी उ०प्र०) के छठ व्रतो पर विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है।

❀❀❀

सहायक ग्रन्थ सूची

(मूलसाधन–१)

संहितायें, ब्राह्मण, आरण्यक तथा उपनिषद

अथर्ववेद– १ पूज्यपाद सातवलेकर, स्वाध्याय मडल, पारडी, सूरत, १९५७ ई०।

२ शकर पाडुरग पडित, गवर्नमेन्ट सेन्ट्रल बुक डिपो, १८९८ ई०।

३ डा० डब्ल्यू० डी० हिवटने, हरवर्ड यूनिवर्सिटी, १९०५ ई०।

ऋग्वेद– १ सायण के भाष्य सहित–मैक्समूलर, लन्दन, आक्सफोर्ड, १८९२ ई०।

२ ऋग्वेद सहिता, पूज्यपाद सातक्लेकर, स्वाध्याय मडल, पारडी सूरत, १९५७ ई०

३ माधव के भाप्य सहित (ऋग्र्थदीपिका) सम्पा० लक्ष्मण स्वरूप, (चार भागो मे) मोतीलाल बनारसीदास, १९३९,१९४६,१९४३,१९५५

शुक्ल यजुर्वेद– (अनु०) राल्फ टी० एच० ग्रिफिथ, १९५७ ई०।

ऐतरेय ब्राह्मण– (सम्पा०) के०ए० अगशे, पूना, १८९६ ई०

तैत्तरीय ब्राह्मण– (सम्पा०) एच०एन० आप्टे, ए०एस०एस०, न० ३७ पूना, १८९८ ई०

(अनु०) ए०बी०कीथ, एच० ओ० एस०, कैम्ब्रिज, वाल्यू १८

पचविश ब्राह्मण– (सम्पा०) ए० वेदान्तवगिस, कलकत्ता, १८६९–७४ ई०

शतपथ ब्राह्मण– १ सायण भाष्य सहित, भाग १ से ५ , वेकटे ग्रेस सस्करण, एस०बी०ई०, वाल्यूम १–५, आक्सफोर्ड, १८८५–१८९४ ई०।

२ (अनु०) गगा प्रसाद उपाध्याय, देलही, १९६७

सांखायन ब्राह्मण–

ऐतरेय आरण्यक– १ आनन्दाश्रम सस्कृत सीरीज पूना, न० ३७, १८९८ ई०

(अनु०) ए०बी० कीथ, आक्सफोर्ड, १६०६ ई०।

काठक सहिता– (राम्पा०) वान स्क्रोडर, लिपजिग, १६००–१६११ ई०।

तैत्तरीय सहिता– (सम्पा०) ए० वेवर, बर्लिन, १८७१–७२ ई०।

(अनु०) ए०वी० कीथ, एच० ओ० एस०, वाल्यू० XVIII एण्ड XIX केम्ब्रिज, मास, १६१४ ई०।

मैत्रायणी सहिता– (सम्पा०) वान स्क्रोडर, लिपजिग, १८८१–८६ ई०।

वाजसनेयी सहिता–(सम्पा०) ए०वेवर, लन्दन, १८५२ ई०।

(प्रका०) वी०एस० सतक्लेकर, सूरत।

ऐतरेय उपनिषद– (अनु० हिन्दी) शकर भाष्य सहित, गीता प्रेस गोरखपुर, १६६१ ई०।

कठोपनिषद्– शकरभाप्य सहित, गीताप्रेस गोरखपुर, १६६२ ई०।

कौशीतक उपनिषद डॉ० राधाकृष्णन्, म्योर हेड लाइब्रेरी, रस्किन हाउस, लन्दन, १६५३ ई०।

छान्दोग्य उपनिषद (सम्पा०) ए०एस०एस०पूना, १६३४ ई०। शकर के भाष्य सहित अनुवाद, गीताप्रेस, गोरखपुर, १६६२ ई०।

बृहदारण्यक उपनिषद (सम्पा०) आर० रौर, १८५६ ई०। (सम्पा०) ए०एस०एस० पूना, १६३४ ई०।

मैत्रेयी उपनिषद– (सम्पा०) एण्ड (अनु०) ई० बी० कोवेल, १८७० ई०।

सूत्र–ग्रन्थ

निरूक्त (यास्क)– (अनु०) लक्ष्मण स्वरूप, १६६२ ई०।

आपस्तम्ब गृहयसूत्र डा० एम० विटरनित्स, वेन्था, १८८७ ई०।

आश्क्लायन गृहयसूत्र त्रिवेन्द्रम सस्कृत सीरीज चोखम्भा, न० ६३,१६३२ ई०।

(सम्पा०) ए०जी० स्टेन्जलर, लिपजिग, १८६४ ई०।

कौषीक गृह्यसूत्र (सम्पा०) एम० ब्लूमफिल्ड, ग्रुन्डरिस सीरीज II १८८६ ई०।

खादिर गृह्यसूत्र (सम्पा०) ए० महादेव शास्त्री एण्ड एल० श्रीनिवासाचर्य, मैसूर, १९१३ ई०।

गोभिल गृह्यसूत्र– (अनु०) एच० ओल्डेनवर्ग, एस०बी० ई०, वाल्यू० XXX ,भाग II)

पारस्कर गृह्यसूत्र–(सम्पा०) गोपाल शास्त्री ने, बनारस १९२६ ई०।

मानव गृह्यसूत्र– (सम्पा०) रामकृष्ण हर्षजी शास्त्री, जी ओ एस०, बडोदा, १९२६ ई०

सांखायन गृह्यसूत्र (अनु०) ओल्डेनवर्ग, एस०बी०ई०, वाल्यू० XXIX एण्ड XXX,आक्सफोर्ड, १८८६ एण्ड १८९२ ई०।

हिरण्यकेशिन गृह्यसूत्र(अनु०) एस० ओल्डेनवर्ग, एस०बी०ई०, वाल्यू XXX, भाग II)

(सम्पा०) जे० क्रित्से, वियना, १८८९ ई०।

गौतम धर्मसूत्र– मस्करी भाष्य सहित

व्युहलर, एस०बी०, ई० जिल्द II द्वितीय सस्करण आक्सफोर्ड, १८९७ ई०।

बौधायन धर्मसूत्र– काशी सस्कृत सिरीज चौखम्भा, १९३४ ई०।

व्युहलर, एस०बी०ई० जिल्द, १४, आक्सफोर्ड, १८९७–१८८२ ई०।

वशिष्ठ धर्मसूत्र– (सम्पा०) ए०ए० फुहरर, बाम्बे, १९१६ ई०।

(अनु०) जी० व्युहलर, एस०बी०ई०, IV,XIV, आक्सफोर्ड, १८७९–८२ ई०।

विष्णु धर्मसूत्र– कलकत्ता।

आपस्तम्व श्रौतसूत्र– (सम्पा०) गर्वे, कलकत्ता, १८८२–१९०२ ई०।

काठक श्रौतसूत्र–

वौधायन श्रौतसूत्र– (सम्पा०) डब्ल्यू० कलन्द,कलकत्ता, १९०४–२३ ई०।

<u>वैखानस श्रौतसूत्र</u>–

<u>साखायन श्रौतसूत्र</u>– (सम्पा०) वरदत्तसूत आनर्तिय एण्ड गोविन्द के भाष्य सहित, द्वारा ए० हिलब्रैन्डिट, कलकत्ता, १८८६–८६ ई०।

<u>स्मृति–ग्रन्थ</u>

<u>मनुस्मृति</u>– मेधातिथि के भाष्य सहित (सम्पा०) गगानाथ झा एशियाटिक सोसाइटी, बगाल, कलकत्ता, १६३४ ई०।

(सम्पा०) वी०एन० मण्डलिक, बाम्बे, १८८६ ई०।

(अनु०) जी० व्युहलर, एस० बी० ई०, XXV आक्सफोर्ड, १८८६ ई०।

<u>याज्ञवल्क्य स्मृति</u>– वीरमित्रोदय और मिताक्षरा भाष्य सहित, चौखम्भा सस्कृत सीरीज, वाराणसी, वाराणसी, १६३० ई०।

(अनु०) जे० आर० घरपुरे, बाम्बे, १६३६ ई०।

<u>महाकाव्य</u>

<u>रामायण</u>– १ बाल्मीकि–टी०आर० व्यासाचार्य, निर्णयसागर प्रेस बम्बई, १६०५, १६११ ई०।

२ (अनु०) ग्रन्थ सहित गीता प्रेस गोरखपुर तृतीय सस्करण १६६८ ई०।

३ पडित पुस्तकालय, काशी

४ बाल्मीकि, (अग्रेजी अनु०) राल्फ टी० एच० ग्रिफिथ, बनारस, १८६५ ई०।

५ (अग्रेजी अनु०) एच०पी० शास्त्री, लन्दन (दो जिल्द)

<u>महाभारत</u>– टी०आर० व्यासाचार्य, निर्णय सागर, प्रेस, बम्बई, १६०६,१६०७,१६०६, १६११ ई०।

नीलकण्ठ के भाष्य सहित (सम्पा०) आर० किजवाडेकर, पूना, १९२९–३३ ई०।

(अनु०) ग्रन्थ सहित, गीता प्रेस गोरखपुर (तृतीय सस्करण) १९६२ ई०

(अनु०) एम० एन० दत्त, कलकत्ता, १८९५–१९०५ ई०।

पुराण

अग्नि पुराण– आनन्दाश्रम सस्करण सीरीज, पूना १९०० ई०।

(अनु०) मन्मथनाथ दत्त, कलकत्ता, १९०१ ई०।

(सम्पा०) आर० मित्रा, बी० आई०, कलकत्ता, १८७३–१८–७९ ई०।

(सम्पा०) ए०एस०एस० पूना, १९०० ई०।

कालिका पुराण– बगबसि सस्करण

कूर्म पुराण– रामनगर, वाराणसी १९७२ ई०।

विवोलिथिका इण्डिका, (कलकत्ता) १८९० ई०।

(सम्पा०) एन० मुखोपाध्याय, बी०आई० कलकत्ता, १८९० ई०।

(सम्पा०) एन्शियन्ट इण्डियन ट्रेडिसन एण्ड मिथोलाजी सीरीज, वाराणसी, १९८३ ई०।

गरूड पुराण– (प्रका०) वेकटेश्वर प्रेस, बाम्बे, १९०६ ई०।

(अनु०) एम०एन० दत्त, कलकत्ता, १९०८ ई०।

(स०) रामशकर भट्टाचार्य, वाराणसी, १९६४ ई०।

देवी भागवत पुराण– (सम्पा०) मेजर बी०डी० बसु, (अग्रेजी अनु०) स्वामी विजयानन्द, अलिस हरि प्रसन्ना चटर्जी, पाणिनि आफिस इलाहाबाद।

नारद पुराण– वेकटेश्वर प्रेस, बाम्बे, शक् १८४५।

पदम पुराण– आनन्दाश्रम प्रेस पूना, १८९५ ई०।–

वी०एन० माण्डलिक, ए०एस०एस० चार भाग, १८९३–९४ ई०

ब्रह्मपुराण– आनन्दाश्रम प्रेस पूना, १८६५ ई०।

स० जगदीश शास्त्री, मोतीलाल बनारसी दास, १६७३ ई०।

ब्रह्माण्ड पुराण– वेकटेश्वर प्रेस सस्करण, बाम्बे, १६१३ ई०।

भविष्य पुराण– वेकटेश्वर प्रेस बम्बई, १६१० ई०।

खेमराज श्रीकृष्णदास, बाम्बे, १६५६ ई०।

भविष्योत्तर पुराण–

भागवत पुराण– वी०एल० पनसिकर, बाम्बे, १६१३ ई०।

(अनु०) एम०एन० दत्त, कलकत्ता १८६५ ई०।

पडित पुस्तकालय, काशी (हिन्दी अनुवाद सहित)

गीता प्रेस, गोरखपुर सस्करण,

मत्स्यपुराण– (अनु०) राम प्रसाद त्रिपाठी (हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग एस० २००३)

आनन्दाश्रम सस्कृत सीरीज, पूना, १६०७ मनसुख मोर सस्करण, कलकत्ता

(सम्पा०) मेजर बी०डी० बसु, पाणिनी आफिस, इलाहाबाद, लक्ष्मीवेकटेश्वर सस्करण, बाम्बे।

बगबसि सस्करण।

मार्कण्डेय पुराण– (सम्पा०) श्री वेकटेश्वर प्रेस सस्करण, बम्बई, १६१० ई०।

(सम्पा०) के०एम० बनर्जी, बी० आई०, कलकत्ता, १८६२ ई०।

(अनु०) एफ०ई० पार्जिटर, बी० आई०, कलकत्ता, १६०४ ई०।

वराह पुराण– (सम्पा०) पी०एच० शास्त्री, बी०आई० कलकत्ता, १८६३ ई०।

विब्लयोथिका प्रेस, बम्बई १८८६ गीता प्रेस, गोरखपुर १६७६ ई०

<u>वामन पुराण</u>— वेन्केटेश्वर प्रेस सस्करण, बम्बई

(अनु०) गीता प्रेस गोरखपुर, १६६७ ई०।

<u>वायु पुराण</u>— एन्शियन्ट इण्डियन ट्रेडिसन एण्ड मिथोलाजी, भाग ३८ खण्ड ॥ वाराणसी, १६८८ ई०।

(अनु० हिन्दी) राम प्रसाद त्रिपाठी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, एस० २००७

वेकटेश्वर प्रेस, मुम्बई

(सम्पा०) आर० मित्र, २ खण्ड, बी०आई०, कलकत्ता, १८८०—८८ ई०

ए०एस०एस०पूना, १६०५ ई०।

<u>विष्णु पुराण</u>— (प्रकाशन) वेकटेश्वर प्रेस, बाम्बे, १८८६ ई०।

गीताप्रेस गोरखपुर, १६६६ ई०।

(अनु०) एच०एच० विल्सन, कलकत्ता, १६६१ ई०।

<u>विष्णु धर्मोत्तर पुराण</u> वेकटेश्वर प्रेस बम्बई, १६१२ ई०।

नग पब्लिसर्स, (सम्पा०) प्रियबालाशाह, अहमदाबाद, १६६० ई०।

<u>साम्बपुराण</u>— (प्रका०) वेकटेश्वर प्रेस, बम्बई, १८६६ ई०।

(अनु० हिन्दी) वी०सी० श्रीवास्तव, इलाहाबाद, १६७५ ई०।

<u>स्कन्द पुराण</u>— नग पब्लिसर्स, देलही, १६८६ ई०।

वेकटेश्वर प्रेस, बाम्बे, १६१० ई०।

नवलकिशोर प्रकाशन (हिन्दी अनु० सहित), लखनऊ काशीखण्ड, खण्ड—। सम्पूर्णानन्द सस्कृत यूनीवर्सिटी, वाराणसी, १६६१

<u>सौरपुराण</u>— (सम्पा०) और (प्रका०), वी०जी० आप्टे, ए०एस०एस० पूना (द्वितीय सस्करण) १६२४ ई०।

शिव पुराण— वेकटेश्वर प्रेस, बम्बई।

(अनु०) चार भागो मे, मोती लाल बनारसीदास, १९७० ई०।

हरिवश पुराण— (सस्क०) आर० किजवाडेकर, पूना, १९३६ ई०।

(अनु०) गीता प्रेस गोरखपुर, १९६७ ई०।

लखनऊ सस्करण

वेकटेश्वर प्रेस मुम्बई, १८४७ ई०।

बौद्ध साहित्य

मिलिन्द पहूनो— (अनु०) टी०डब्ल्यू रिजडेविड्स एल०वी०ई० आक्सफोर्ड १८९०–९४ ई०।

प्राविधिक ग्रन्थ

अपरार्क— याज्ञवल्क्य स्मृति पर भाष्य, आनन्दाश्रम सस्कृत सीरीज, पूना, १९०३–०४ ई०।

पतजलि— महाभाष्य,

(सम्पा०) एफ० कीलहर्न, उवाल्यू, बाम्बे, १८९२–१९०९ ई०।

पाणिनी— अष्टाध्यायी

(सस्क०) निर्णय सागर प्रेस, बाम्बे, १९५५ ई०।

(सम्पा०) एस०सी०वसु, देलही, १९६२ ई०।

भट्टभुवनदेव— अपराजितपृच्छा

मेरूतुग— प्रबन्धचिन्तामणि, मुनि, जिन विजय,

(अग्रेजी अनु०) सी०एच०टानी, (हिन्दी अनु०) हजारी प्रसाद द्विवेदी, १९३३ ई०।

शिव पुराण— वेकटेश्वर प्रेस, बम्बई।

(अनु०) चार भागो मे, मोती लाल बनारसीदास, १९७० ई०।

हरिवश पुराण— (सस्क०) आर० किजवाडेकर, पूना, १९३६ ई०।

(अनु०) गीता प्रेस गोरखपुर, १९६७ ई०।

लखनऊ सस्करण

वेकटेश्वर प्रेस मुम्बई, १८४७ ई०।

बौद्ध साहित्य

मिलिन्द पहूनो— (अनु०) टी०डब्ल्यू रिजडेविड्स एल०वी०ई० आक्सफोर्ड १८९०—९४ ई०।

प्राविधिक ग्रन्थ

अपरार्क— याज्ञवल्क्य स्मृति पर भाष्य, आनन्दाश्रम सस्कृत सीरीज, पूना, १९०३—०४ ई०।

पतजलि— महाभाष्य,

(सम्पा०) एफ० कीलहर्न, उवाल्यू, बाम्बे, १८९२—१९०९ ई०।

पाणिनी— अष्टाध्यायी

(सस्क०) निर्णय सागर प्रेस, बाम्बे, १९५५ ई०।

(सम्पा०) एस०सी०वसु, देलही, १९६२ ई०।

भट्टभुवनदेव— अपराजितपृच्छा

मेरुतुग— प्रबन्धचिन्तामणि, मुनि, जिन विजय,

(अग्रेजी अनु०) सी०एच०टानी, (हिन्दी अनु०) हजारी प्रसाद द्विवेदी, १९३३ ई०।

यास्क— निरूक्त

(सम्पा०) दुर्गाचार्य के भाष्य सहित, (प्रका०) वी०के० रजवाडे, पूना, १६२१–२६ ई०।

राजतरगिणी— कल्हण

(सम्पा०) दुर्गा प्रसाद, बाम्बे, १८६२ ई०।

(अनु०) आर०एस० पण्डित, इलाहाबाद, १६३५ ई०।

वराहमिहिर— बृहत्सहिता

(सम्पा०) एच० कर्न, बी० आई०, कलकत्ता, १८६५ ई०।

(अग्रेजी अनु०) एच० कर्न, जे० आर० ए० एस०, १८७०–७५ ई०।

विशाखदत्त— मुद्राराक्षस

ललित साहित्य

कुमार सभव— कालिदास

१ आर०टी०एच० ग्रिफिथ (द्वितीय सस्करण) लन्दन, १८७६ ई०।

२ निर्णय सागर प्रेस, बम्बई, १६२७ ई०।

सूर्य सतक— मयूर

(प्रका०–अनु०) आर०एन० त्रिपाठी, चौखम्भा विद्याभवन, बनारस, १६६४ ई०।

शिल्प शास्त्र

रूपमण्डन

शिल्प रत्न

अन्य ग्रन्थ

आचारदिनकर–

काल निर्णय– बगाल एशियाटिक सोसायटी, कलकत्ता।

कृत्यकल्पतरू– व्रतकाण्ड लक्ष्मीधर, (सम्पा०) के०पी० अयकर, बडौदा ओरियन्टल इन्स्टीच्यूट, १९५३ ई०।

दानकाण्ड १९४१ ई०।

कालविवेक– बिबोलिथिका इण्डिका, १९०५ ई०।

चतुर्वर्गचिन्तामणि– हेमाद्रि, व्रतखण्ड, वोल्यू० १ तथा २ (सम्पा०) बिबोलिथिका इण्डिका, योगेश्वर भट्टाचार्य, कलकत्ता, १८७९ ई०।

दानखण्ड–(सम्पा०) (प्रकाश०) प० भारत चन्द्र शिरोमणि, (प्रकाश०) एशियाटिक सोसाइटी आफ बगाल, १८७३ ई०।

धर्मसिन्धु– श्री काशीनाथ उपाध्याय, चौखम्भा विश्व भारती, वाराणसी।

निर्णय सिन्धु– कमलाकर भट्ट, बाम्बे, निर्णय सागर प्रेस, १९४९ ई०।

निर्वाण कलिका–

न्याय प्रदीप– केशव मिश्र कृत, सुरेन्द लाल गोस्वामी सस्करण, बनारस, १९०१ ई०।

पुरूषार्थ चिन्तामणि– विष्णु भट्ट, चौखम्भा विश्वभारती प्रकाशन, वाराणसी।

प्रतिषठा सार सग्रह–

भगवान् सूर्य– गीता प्रेस, गोरखपुर

वर्षाक्रिया कौमुदी– गोविन्दानन्द विरचित, चौखम्भा विश्वभारती प्रकाशन, वाराणसी।

व्रतकमलाकार– कमलाकर भट्ट, मुद्रित नही है।

व्रतराज– श्री विश्वनाथ शर्मा, श्री वेकटेश्वर प्रेस, बम्बई, १८७५ ई०।

व्रतोद्यापन कौमुदी—चौखम्भा विश्व भारती प्रकाशन, वाराणसी।

व्रतकोश— जगन्नाथ शास्त्री, चौखम्भा ओरियन्टलिया, वाराणसी, दिल्ली।

समय मयूख— नीलकठ, चौखम्भा विश्व भारती, वाराणसी।

स्मृति कौस्तुभ— अनन्तदेव, निर्णय सागर प्रेस, बाम्बे १९०६ ई०।

विदेशी विवरण

इलियट तथा डाउसन— इट्स ओन हिस्टोरियन्स, इलाहाबाद, १९६४ ई०।

(अनु०) हिस्ट्री आफ इण्डिया एज टोल्ड वाय इट्स ओन हिस्टोरियन्स, ८ भाग, लन्दन, १८६६—७७।

बील, एस०— (अनु०) सि०यु० कि०, बुद्धिस्ट रिकार्ड्स आव दी वेस्टर्न वर्ल्ड, २ भाग, लन्दन, १९०६ ई०।

दी लाइफ आफ ह्वेनसाग द्वारा एस० ह्वी—ली।

वार्टस टी०— युवानच्वाग (ह्वेनसाग की भारत यात्रा पर)

(सम्पा०) टी० डब्ल्यू रिजडेविड्स तथा डब्ल्यू बुशेल, २ भाग, लन्दन १९०४—१९०५ ई०।

❀❀❀

पुरातात्विक साक्ष्य

(मूलसाधन–२)

अभिलेख

१ एपिग्रेफिया इण्डिका (जिल्द १ से नवीनतम), डिपार्टमेन्ट आफ आर्केलाजी, न्यू देलही (ओटकमण्ड)

२ कार्पस इन्सक्रिप्शनम् इण्डिकेरम्,वोल्यू–३ (गुप्त शासको के लेख) सम्पा० जे० एफ० फ्लीट, लन्दन, १८८८ ई०।

३ हिस्टारिकल इन्सक्रिप्शन्स आफ गुजरात, (सम्पा०) जी०–वी० आचार्य, २ वाल्यू० बाम्बे, १९३३–३५ ई०।

४ खोह कापर प्लेट इन्सक्रिप्सन आफ महाराज सर्वनाथ

५ इन्सक्रिप्सन्स आफ बगाल, वाल्यू० III राजशाही, १९२९

(सम्पा०) मजुमदार, एन०जी०।

६ कार्पस इन्सिक्रिप्सन्स इण्डिकारम, वाल्यू० ।४ ओटकमण्ड, १९५५

(सम्पा०) मिराशी, वी०वी०।

७ सेलेक्ट इन्सक्रिप्सन्स बियरिंग आन इण्डियन हिस्ट्री एण्ड सिविलाइजेसन, वाल्यू०१, यूनिवर्सिटी आफ कलकत्ता, १९४२ ई०। (सम्पा०) सरकार, डी०सी०।

८ मन्दसोर ताम्रपत्र।

९ सोनपत्र–ताम्रपत्र।

सिक्कें

एलन,जे०

कैटलाग आफ इण्डियन क्वाइन्स इन दी ब्रिटिश म्यूजियम, क्वाइन्स आफ एन्शियन्ट इण्डिया, लन्दन, १९३६ ई०।

कनिघम ए०

क्वाइन्स आफ एन्शियन्ट इण्डिया, वाराणसी, १६६२ ई०।

गार्डनर,पी०

ब्रिटिश म्यूजियम कैटलाग आफ क्वाइन्स आफ दी ग्रीक एण्ड सीथिक किग्स आफ इण्डिया,

साकलिया एच०डी,

थ्री न्यू स्पेसीमेन्स आफ रेयर वेराइटी ऑफ एरण–उज्जैन क्वाइन्स

स्मिथ, वी०ए०

कैटलाग आफ क्वाइन्स इन दी इण्डियन म्यूयिम, वाल्यू–I

प्रतिमाये–स्मारक

दी कैटलाग ऑफ दी ब्राह्मनिकल इमेजेज इन मथुरा आर्ट, लखनऊ, १६५१ ई०, वी०एस० अग्रवाल।

ए शार्ट गाइड बुक टू दी आर्केलाजिकल सेक्शन आफ दी प्राविन्शियल म्यूजियम, लखनऊ, इलाहाबाद, १६४० ई०, वी०एस० अग्रवाल।

एन्शियन्ट मोनुमेन्टस् आफ कश्मीर, लन्दन, १६३३ ई०। कक, आर०सी०।

मथुरा म्यूजियम कैटलाग, (वोगेल, जे० पीएच०)

ल स्कल्पचर डे मथुरा, पेरिस, १६३० ई० (वोगेल, जे० पी एच०)

आर्केलाजिकल सर्वे रिपोर्टस

आर्केलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया एन्युअल रिपोर्ट, देलही।

इण्डियन आर्केलाजी, ए रिवीव

मेमवार आफ आर्केलाजिकल सर्वे आफ इण्डिया

प्रोग्रेस रिपोर्ट, आर्केलाजिकल

आर्केलाजी आफ गुजरात, बाम्बे, १६४८ ई० (साकलिया, एच०डी०)

इनसाइक्लोपीडिया

फर्म, वी०–

एन इन साइक्लोपीडिया आफ रिलीजन, न्यूयार्क, १६४५ ई०।

हेस्टिंग्स, जे०–

इन साइक्लोपीडिया आफ रिलीजन एण्ड इथिक्स, वाल्यू० I-XIII, न्यूयार्क, १६०८ ई०।

लेख

अग्रवाल, वी०एस०–

'दी गुप्त आर्ट', जे०यू०पी०एच०एस०, XVIII, 1945 ई०।

चौधरी, एन०–

मैन इन इण्डिया, वाल्यू० XXI, 1941 ई०।

दासगुप्त, पी०सी०–

'टेराकोटा फ्राम चन्द्रकेतुगढ,–ललित कला न० ६, अक्टूबर १६५१ ई०।

बनर्जी, जे० एन०

'सूर्य इन ब्राह्मनिकल आर्ट' आई०ए०, ५४, १६२५ ई०।

बाजपेयी के०डी०

'समन्यू मथुरा फाइन्डस' जे०यू०पी०एच०एस० १६४८ ई०।

भरूचा शिलू

'दी सन–टेम्पिल एट मोढेरा', मार्ग, वाल्यू० V न० १

मित्र, के०

'स्वस्तिक' ए० आई० ओ०सी० VI

मिराशी, वी०वी०

थ्री मोस्ट फेमस टेम्पिल्स आफ दी सन–पुराण वाल्यू० VIII, 1966 ई०।

राय, एस०एन०

'अर्ली पौराणिक एकाउन्ट आफ सन एण्ड सोलर कल्ट' ए०यू० एस०, १९६३ ई०।

वसु,एन०एन०

'आर्कलाजिकल सर्वे आफ मयूरभज', वाल्यू० I मयूरभज स्टेट, १९११ ई०।

सूर,ए०के०

प्री–आर्यन् एलीमेन्ट्स इन इण्डियन कल्चर' कलकत्ता, रिवीव, दिसम्बर, १९३२ ई०।

श्रीवास्तव, वी० सी०

१ पौराणिक रिकार्डस आन दी सन वर्शिप' पुराण, वाल्यू IX वाराणसी।

२ 'दी सन–कल्ट एज रिवील्ड वाय दी गुप्त एण्ड पोस्ट–गुप्त इन्सक्रिप्सन्स', भारतीय विद्याभवन, बाम्बे, वाल्यू XXVII न० १–४

३ 'दी रिलीजियस स्टडी आफ ए सिम्बल आन एन अवन्ति काइन्स', बी० एच०यू० १९६८ ई०।

४ 'एन्टीक्यूटी आफ मगस इन एन्शियन्ट इण्डिया' प्रोसीडिग्स आफ इण्डियन हिस्ट्री कागेस, भागलपुर, १९६८ ई०

५ 'मगस–दी ईरानी प्रिस्ट इन एन्शियन्ट इण्डिया' कलकत्ता

६ 'सम एस्पेक्ट आफ सनवर्शिप इन दी गुप्त ऐज' इलाहाबाद, १९७० ई०।

❀❀❀

आधुनिक ग्रन्थ

अग्रवाल, वी०एस०

१ भारतीय कला वाल्यू० I वाराणसी, १६६६ ई०

२ गुप्त आर्ट, लखनऊ, १६४७ ई०।

३ वामन पुराण–ए स्टडी, वाराणसी, १६६४ ई०।

अल्तेकर, ए०एस०

राष्ट्रकूट्स एण्ड देयर टाइम्स, पूना, १६३४ ई०।

अवस्थी, आर०ए०

खजुराहो की देव प्रतिमाएँ, आगरा, १६६७ ई०।

अवस्थी, ए०बी०एल

स्टडीज इन स्कन्द पुराण, भाग II कैलाश प्रकाशन, लखनऊ, १६७८ ई०।

अल्चिन, एफ०आर०

पिकलिहल एक्सक्वेशन्स

ओझा, जी० एस०

हिस्ट्री आफ राजपूताना, १६२७ ई०।

जोधपुर राज्य का इतिहास, १६३८ ई०।

ओल्घम, सी०एफ०

दी सन एण्ड दी सरपेन्ट

ओल्डेनबर्ग,एच०

डाय रिलीजन डेस वेद, बर्लिन, १८६४ ई०।

उपाध्याय, बी०

सोशिओ–रिलीजियस कन्डीशन आफ नार्थ इण्डिया (७००–१२०० ई०) बनारस, १६६४ ई०।

एलचिन, वी० तथा आर०

दी वर्थ आफ इण्डियन सिविलाइजेशन, पेगुइन बुक्स, १९६८ ई०।

करवेलकर

अथर्ववेद एण्ड आयुर्वेद

कृषणदेव

टेम्पिल्स ऑफ नार्थ इण्डिया, दिल्ली, १९६६ ई०।

काणे, पी०वी०

हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र, पूना, वाल्यू० [illegible], १९३०-५३ ई०।

उत्तररामचरित

कजेन्स, एच०

एन्शियन्ट टेम्पिल्स आफ ऐहोल,

सोमनाथ

करमरकर, ए०पी०

दी रिलीजन्स आफ इण्डिया, लन्दन, १९५० ई०।

कीथ, ए०बी०

दी रिलीजन एण्ड फिलोसफी आफ दी वेद एण्ड उपनिषदस, २ वाल्यू०, १९२५ ई०।

कुमण्ट, फैक

दी मिस्टरीज आफ मिथ्र, न्यूयार्क, १९५६ ई०।

कुमारस्वामी, ए०के०

हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेसिएन आर्ट, न्यूयार्क १९६५ ई०।

फोरडेज इन उडीसा

क्रुक, डॉ० डब्ल्यू

रिलीजन एण्ड फाकलोर आफ नार्दन इण्डिया,लन्दन १९२६ ई०।

क्रेमिश स्टेला दी हिन्दू टेम्पिल, २ वाल्यू० कलकत्ता, १९४६ ई०।

खरे, अवध बिहारी

वाराणसी के उत्तरमध्यकालीन देवालय स्थापत्य,का०हि०वि०वि०, १९८८ ई०।

गिरि, कमल

काशी मे द्वादशादित्य

गिरि, कमल एव तिवारी, मारूतिनन्दन

सिम्बालिक रिप्रजेन्टेशन्स ऑफ सन इन वाराणसी

गुप्त, जे०; प्रागैतिहासिक भारतीय चित्रकला, दिल्ली, 1967 ई०।

गुप्ता,पी०एल०

काइन्स, देलही, १९६९ ई०।

गुप्ते, आर०एस०

दी आर्ट एण्ड आर्किटेक्चर आफ ऐहोल, बाम्बे, १९६७ ई०।

गोन्डा, जे०

एसपेक्ट्स आफ अर्ली विष्णुज्म, १९५४ ई०

घाटे, वी०एस०

लेक्चर्स आन ऋग्वेद, पूना १९५९ ई०।

गारडन, डी० एच०

दी प्री–हिस्टोरिक बैकग्राउण्ड आफ दी इण्डियनक कल्चर बाम्बे १९५८ ई०।

चक्रवर्ती,सी०

दी तन्त्राज स्टडीज आन देयर रिलीजन एण्ड लिटरेचर, कलकत्ता, १९६३ ई०।

चट्टोपाध्याय, के०सी०

स्टडीज इन दी इण्डो इरानियन रिलीजन एण्ड लिटरेचर, भाग–I भारती विद्या प्रकाशन, प्रथम सस्करण, १६७६ ई०।

चन्द्र, मोती

काशी का इतिहास, वाराणसी १६८५ ई०।

चन्द्र प्रमोद

स्टोन स्कल्पचर्स इन दी इलाहाबाद म्यूजियम,

जग, राबर्ट

ब्राइटर दैन ए थाउजेन्ड सन्स

जयराजभाय, आर०ए०

फारेन इन्फ्लुएन्स इन एन्शियन्ट इण्डिया, बम्बई १६६२ ई०।

जरस्ट्रोव, एम०

रिलीजन आफ बेबीलोनिया एण्ड असीरिया

जिम्मर, एच०

दी आर्ट आफ इण्डियन एशिया, न्यूयार्क १६५५ ई०।

बर्जेस, जे० एव कजेन्स, एच०

दी आर्किटेक्चुरल ऐन्टिक्विटीज आफ नार्दन गुजरात, लन्दन, १६०३ ई०।

थामस, ई० बी०

इण्डियन स्वस्तिक एण्ड इट्स वेस्टर्न काउण्टर पार्ट

दत्त ए० एन०

ए फ्यू प्री–हिस्टोरिक रिलीफ एण्ड दी राक पेटिंग्स आफ दी सिगापुर, रामगढ़ स्टेट, इण्डिया।

दास, ए०सी०

ऋग्वैदिक इण्डिया, वाल्यू० । कलकत्ता, १६२१ ई०।

दिवाकर, आर०आर०

बिहार थ्रू दी एजेज, ओरियन्ट लागमनस, कलकत्ता १६५६ ई०

देव, के०

एन्शियन्ट इण्डिया

नारायण, जगदीश

काशी रहस्यम्, वाराणसी, १६८४ ई०।

पायर्स, एडवर्ड ए०

दी मौखरीज

पाण्डेय, चन्द्रदेव

साम्ब पुराण का सास्कृतिक अध्ययन, इलाहाबाद, १६८६ ई०।

पाण्डेय, राजबली

हिन्दू सस्कार, वाराणसी १६४६ ई०।

पाण्डेय, एल०पी०

सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इण्डिया, दिल्ली, १६७१ ई०।

पिगट, एस०

क्रोनोलाजी आफ प्री–हिस्टोरिक नार्दन इण्डिया, लन्दन १६६१ ई०।

पुरी, बी० एन०

इण्डिया इन दी टाइम आफ पतन्जलि, बाम्बे, १६५७ ई०।

पुसाल्कर, ए०डी०

दी ग्लोरिज दैट वाज दी गुर्जर देश

दी डिवानिटीज इन दी इण्डस वैली

प्रकाश, विद्या

खजुराहो, बाम्बे, १६६७ ई०

प्रेच, जे०सी०

आर्ट आफ दी पाल इम्पायर आफ बगाल, आक्सफोर्ड, १६२८ ई०

प्रसाद, दुर्गा

क्लासीफिकेशन एण्ड सिगनीफिकेन्स आफ दी सिम्बल्स आन दी सिल्वर पचमार्कड काइन्स आफ एन्शियन्ट इण्डिया जेएएस बी १६३४ ई०)

फर्गुसन, जे०

हिस्ट्री आफ इण्डियन एण्ड ईस्र्टन आर्किटेक्चर, देलही, १६६७ ई०।

जैन आर्किटेक्चर

फर्नेल, एल०आर०

ग्रीस एण्ड बेबीलोन १६११ ई०।

फाउचर, ग्म० अलफ्रेड

बिग्निग्स आफ बुद्धिस्ट आर्ट

बनर्जी, जे० एन०

डिवलपमेन्ट आफ हिन्दू आइकनोग्राफी, कलकत्ता, १६५६ ई०।

बनर्जी, आर०डी०

दी टेम्पिल आफ शिव एट भूमरा (MASI, २५), ईस्टर्न स्कूल आफ मिडिवल स्कल्पचर

बर्गेस, जे०

रिपोर्ट आन एन्टीक्यूटीज आफ काठियावाड एण्ड सौराष्ट्र, लन्दन, १८७६ ई०।

आर्किटेक्चरल एन्टीक्यूटीज आफ वेस्टर्न इण्डिया।

वर्डवुड, जी०

ओल्ड रिकार्डस आफ इण्डियन आफिस

बरूआ, बी० एम०

ए हिस्ट्री आफ प्री–बुद्धिस्टिक इण्डियन फिलोसफी, कलकत्ता, १९२१ ई०।

बर्थ, ए०

दी रिलीजन्स आफ इण्डिया लन्दन, १८८२ ई०।

बाशम, ए०एल०

दी वान्डर दैट वाज इण्डिया, लन्दन, १९५६ ई०।

ब्राउन, पी०

इण्डियन आर्किटेक्चर, बाम्बे, १९६५ ई०।

बील, सैमुअल

बुद्धिस्ट रिकार्डस आफ दी वेस्टर्न वर्ड, २ भाग लन्दन १९०६ ई०।

ब्रूमफील्ड, एम०

दी अथर्ववेद, स्ट्रस्बर्ग, १८९९ ई०।

बैरगैगन,एबेल

वैदिक रिलीजन एकार्डिंग टू हिम्स आफ ऋग्वेद

ब्रेस्टेड, जे० एस०

डिवलपमेन्ट आफ रिलीजन एण्ड थाट इन एन्शियन्ट इजिप्ट, न्यूयार्क १९५९ ई०।

बर्गेस, जे०

रिपोर्ट आन एन्टीक्यूटीज आफ काठियावाड एण्ड सौराष्ट्र, लन्दन, १८७६ ई०।

आर्किटेक्चरल एन्टीक्यूटीज आफ वेस्टर्न इण्डिया।

वर्डवुड, जी०

ओल्ड रिकार्डस आफ इण्डियन आफिस

बरूआ, बी० एम०

ए हिस्ट्री आफ प्री–बुद्धिस्टिक इण्डियन फिलोसफी, कलकत्ता, १९२१ ई०।

बर्थ, ए०

दी रिलीजन्स आफ इण्डिया लन्दन, १८८२ ई०।

बाशम, ए०एल०

दी वान्डर दैट वाज इण्डिया, लन्दन, १९५६ ई०।

ब्राउन, पी०

इण्डियन आर्किटेक्चर, बाम्बे, १९६५ ई०।

बील, सैमुअल

बुद्धिस्ट रिकार्डस आफ दी वेस्टर्न वर्ड, २ भाग लन्दन १९०६ ई०।

बूमफील्ड, एम०

दी अथर्ववेद, स्ट्रस्बर्ग १८९९ ई०।

बैरगैगन,एबेल

वैदिक रिलीजन एकार्डिंग टू हिम्स आफ ऋग्वेद

ब्रेस्टेड, जे० एस०

डिवलपमेन्ट आफ रिलीजन एण्ड थाट इन एन्शियन्ट इजिप्ट, न्यूयार्क १९५९ ई०।

भट्टसलि, एन०के०

आइकनोग्राफी आफ बुद्धिस्ट एण्ड ब्राह्मनिकल स्कल्पचर्स इन दी दक्क म्युजियम,

भण्डारकर, डी० आर०

फारेन एलीमेन्टस इन इण्डियन पापुलेशन,

भण्डारकर, आर०जी०

वैष्णाविज्म, शैविज्म एण्ड अदर माइनर सेक्ट्स, वाराणसी, १९६५ ई०

मजुमदार, ए०के०

चालुक्याज आफ गुजरात, बाम्बे, १९५६

मजुमदार, आर०सी०

हिन्दू कालोनीज इन दी फार ईस्ट, कलकत्ता १९६३ ई०।

दी एज आफ इमपीरियल यूनिटी, बाम्बे १९५१ ई०।

दी एज आफ इम्पीरियल कन्नौज, बाम्बे, १९५५ ई०।

हिस्ट्री आफ बेगाल, वाल्यू० १ दक्क, १९४३ ई०।

मार्जिनर, जे०

दी गाड्स आफ प्री-हिस्टोरिक मैन, लन्दन १९५६ ई०।

मार्शल,सर जान

मोहनजोदडो एण्ड दी इण्डस सिविलाइजेसन, लन्दन १९३१ ई०।

मित्र, आर०एल०

एन्टीक्वीटीज आफ उडीसा, २ वाल्यू०, कलकत्ता, १८७५-८० ई०।

मिराशी, वी०वी०

आइडेन्टीफिकेशन आफ कालप्रिय, स्टडीज इन इण्डोलाजी, २ वाल्यू० देहली, १९७५ ई०।

मुकर्जी, आर० के०

अशोक, लन्दन, १६२८ ई०।

मेहता, आर०डी०

अर्ली इण्डियन रिलीजियस थाट, लन्दन, १६५६ ई०।

मैकडोनल, ए०ए०

वैदिक माइथालाजी, वाराणसी, १६६३ ई०।

मैकडोलन, ए०ए०

वैदिक इण्डेक्स आफ नेम्स एण्ड स्बजेक्सटस, वाराणसी, १६५८ ई०।

एण्ड कीथ, ए०बी०

मैकनिकोल, एन०

इण्डियन थीज्म, लन्दन, १६१५ ई०।

मैके, ई० जे० एच०

दी इण्डस सिविलाइजेशन, लन्दन १६३५ ई०।

मैकेन्जी, डाॅ० ए०

क्रीट एण्ड प्री–हेलेनिक यूरोप

मैन इन इण्डिया

रायचौधरी, एच० सी०

पोलिटिकल हिस्ट्री आफ एन्शियन्ट इण्डिया, कलकत्ता, १६५० ई०।

स्टडीज इन इण्डियन एन्टीक्यूटीज, कलकत्ता, १६३२ ई०।

मैटेरिअलस फार दी स्टडी आफ दी अर्ली हिस्ट्री आफ दी वैष्णव सेक्ट्स कलकत्ता, १६२० ई०।

रे, एस०सी०

डायनेस्टिक हिस्ट्री आफ नार्दन इण्डिया, २ वाल्यू०, कलकत्ता, १६३१, १६३६ ई०।

रे, एस०सी०

अर्ली हिस्ट्री एण्ड कल्चर आफ कश्मीर, कलकत्ता, १६५७ ई०।

राय, एस०एन०

पौराणिक धर्म एव समाज, इलाहाबाद, १६६८ ई०।

राव, गोपीनाथ टी०

एलीमेन्ट्स आफ हिन्दू आइकनोग्राफी (वाल्यू I एण्ड I)

रोनाल्ड, बी०

दी आर्ट एण्ड आर्किटेक्चर आफ इण्डिया, लन्दन, १६५३ ई०।

लाल, कनवर

मिराकल आफ कोणार्क, देलही, १६६७ ई०।

वर्मा, परिपूर्णानन्द

प्रतीकशास्त्र

वाट्स एम०एस०

एक्सक्वेसनस् एट हड़प्पा

विन्टरनित्स,एम०

ए हिस्ट्री आफ इण्डियन लिटरेचर, (अनु०)

श्रीमति एस० केतकर, वाल्यू० I,II, 1927, 1933 ई०।

विल्सन, एच० एच०

रिलीजियस सेक्टस आफ दी हिन्दूज, कलकत्ता, १६५८ ई०।

ह्वीलर, आई० ई० एम०

हड़प्पा

शर्मा, दशरथ

रिलीजिअस फेयर एण्ड फेस्टिवल्स आफ असम, जर्नल आफ असम रिसर्च सोसायटी, वाल्यू० XVIII, 1968, कामरूप अनुसधान समिति।

अर्ली चौहान डायनेस्टीज, देहली, १९५९ ई०।

राजस्थान थ्रू दी एजेज, वाल्यू० I वीकानेर, १९६६ ई०।

शर्मा, बी० एन०

रेवन्त इन लिटरेचर एण्ड आर्ट, अक १३, भाग–२

शर्मा, सविता

अर्ली इण्डियन सिम्बल्स न्युमिस्मेटिक इवीडेन्स, देहली, १९९० ई०।

शर्मा, ए० लाल

व्रतोत्सव चन्द्रिका, बनारस, १९८० ई०।

शास्त्री, अजय मित्र

इण्डिया एज सीन इन दी बृहत्सहिता आफ वराहमिहिर, वाराणसी, १९६६ ई०।

शास्त्री, एच० के०

साउथ इण्डियन इमजेज आफ गाड्स एण्ड गाडेज, मद्रास, १९१६ ई०।

शिवराममूर्ति, सी०

इण्डियन स्कल्पचर, न्यू देलही, १९६१ ई०।

शुक्ल, डॉ० विमलचन्द्र

भारतीय कला के विविध आयाम, इलाहाबाद, १९९७ ई०।

शेन्डे, एन०जे०

दी रिलीजन एण्ड फिलोसफी आफ दी अथर्ववेद, पूना, १९५२ ई०।

सकलानी ने पैनुली, गीता

द्वादशादित्य इन लिटरेचर, रिलीजन एण्ड आर्ट, का०हि०वि०वि०, १९९१ ई०।

सखाऊ

अलबरूनी, ज इण्डिया

सरस्वती, एस०के०

अर्ली स्कल्पचर आफ बगाल, सम्बोधि, १९६२ ई०।

ए सर्वे आफ इण्डियन स्कल्पचर, कलकत्ता, १९५७ ई०।

दी स्ट्रगल फार इम्पायर

सरस्वती, शिवानन्द

काशी मुक्ति निर्णय और काशी का इतिहास, वाराणसी, १९९८ ई०।

सहाय, भगवन्त

आइकनोग्राफी आफ माइनर हिन्दू एण्ड बुद्धिस्ट डीटीज, दिल्ली, १९७५ ई०।

स्टर्लिंग, ए०

एन एकाउण्ट स्टेटीस्टीकल एण्ड हिस्टोरिकल आफ उडीसा प्रापर

स्वामी सकरानन्द

दी ऋग्वैदिक कल्चर आफ दी प्री हिस्टोरिक इण्डस

साहनी, दयाराम

गाइड टू दी बुद्धिस्ट रूइन्स एट सारनाथ

सिह, विन्धेश्वरी प्रसाद

भारतीय कला को बिहार की देन, पटना, १९५८ ई०।

सिन्हा, बी०सी०

हिन्दुइज्म एण्ड सिम्बलवर्शिप

स्मिथ, वी०ए०

हिस्ट्री आफ फाइन आर्ट इन इण्डिया एण्ड सिलोन, १६३०, II सस्करण, आक्सफोर्ड

सुकुल, प० कुबेरनाथ

वाराणसी वैभव, पटना।

हजरा, आर०सी०

स्टडीज इन दी उपपुराणस्, वाल्यू० I कलकत्ता १६५८ ई०।

स्टडीज इन दी पुराणिक रिकार्डस आन हिन्दू राइट्स एण्ड कस्टम्स, दक्क, १६४० ई०।

हरवने, वी०एस०

मार्तण्ड दी क्रानिग फेस एन्शियेन्ट कश्मीर आर्किटेक्चर, कश्मीर

हापकिन्स, ई० डब्ल्यू

दी रिलीजन्स आफ इण्डिया, बोस्टन, १८६५ ई०।

ग्रेट एपिक्स आफ इण्डिया, कलकत्ता, १६६६ ई०।

हावेल, ई० बी०

दी आइडिएलस आफ इण्डियन आर्ट

हीरा लाल

त्रिमूर्तिज इन बुन्देलखण्ड

हैवेल, ई० बी०

ए हैण्ड बुक आफ इण्डियन आर्ट

हटर, डब्ल्यू डब्ल्यू

ए हिस्ट्री आफ उडीसा, वाल्यू । कलकत्ता, १६५६ ई० ।

त्रिपाठी, जी०सी०

ऋग्वैदिक देवताओ का उद्भव एव विकास,

त्रिपाठी, माया प्रसाद

डिवलपमेन्ट आफ जियोगरफिक नालेज इन एन्शियन्ट इण्डिया

तिवारी, मारूतिनन्दन और गिरि, कमल

मध्यकालीन भारतीय प्रतिमालक्षण, वाराणसी १६६७ ई० ।

श्रीवास्तव, ए०एल०

भारतीय कला प्रतीक, इलाहाबाद, १६८६ ई० ।

श्रीवास्तव, बृज भूषण

प्राचीन भारतीय प्रतिमा विज्ञान एव मूर्तिकला, इलाहाबाद, १६६८ ई० ।

श्रीवास्तव, एम०सी०पी०

मदर गाडेज इन इण्डियन आर्ट, आर्केलाजी एण्ड लिटरेचर, देलही

श्रीवास्तव वी०सी०

(अनु०) साम्बपुराण इलाबाद, १६७५ ई० ।

सनवर्शिप इन एन्शियन्ट इण्डिया, इलाहाबाद, १६७२ ई० ।

जर्नलस्

इण्डियन हिस्टोरिकल क्वार्टली

जर्नल आफ दी अमेरिकन ओरियन्टल सोसायटी

जर्नल आफ बिहार रिसर्च सोसायटी पटना

जर्नल आफ यू०पी० हिस्टारिकल सोसायटी

जर्नल आफ दी ओरियन्टल इन्स्टीच्यूट, बडोदा

जर्नल आफ यूनाइटेड प्राविन्सेज हिस्टोरिकल सोसायटी

जर्नलस आफ इण्डियन सोसायटी, लेटर्स, कलकत्ता।

जर्नल आफ न्यूमिस्मेटिक सोसायटी आफ इण्डिया

जर्नल आफ दी इण्डियन सोसायटी आफ ओरियन्टल आर्ट, कलकत्ता

जर्नल आफ रायल एशियाटिक सोसायटी आफ ग्रेट ब्रिटेन

जर्नल आफ रायल एशियाटिक सोसायटी आफ ग्रेट ब्रिटेन एण्ड आयरलैण्ड

जर्नल आफ डिपार्टमेन्ट आफ लेटर्स, यूनीवर्सिटी आफ कलकत्ता,

जर्नल आफ एन्शियन्ट इण्डियन हिस्ट्री

नेशनल ज्योग्राफिकल जर्नल आफ इण्डिया, ४१(१), १९९५ ई०।

प्रोसिडिंग्स आफ एसियाटिक सोसायटी आफ बगाल

प्रोसिडिंग्स आफ इण्डियन हिस्ट्री काग्रेस

न्यू इण्डियन एन्टीक्यूरी

ललित कला,

म्यूजियम

इण्डियन म्यूजियम, कलकत्ता।

मथुरा म्यूजियम, मथुरा।

पजाब म्यूजियम, पजाब।

❀❀❀